अमूर्तवादी चित्रकार सुरेश शर्मा

एक विवेचनात्मक अध्ययन

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

की

पीएच. डी. (चित्रकला) की उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

कला संकाय

शोध–निर्देशक

डॉ. अरविन्द मैन्दोला

व्याख्याता – चित्रकला

राजकीय महाविद्यालय, बून्दी (राज.)

शोधार्थी

अचल अरविन्द

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

2014

(Certificate to be given by the Supervisor)

CERTIFICATE

It is certified that the

1. Thesis entitled **"अमूर्तवादी चित्रकार सुरेश शर्मा–एक विवेचनात्मक अध्ययन"**
   submited by **Achal Arvind** is an original piece of research work carried out by the candidate under my supervision.
2. Literacy presentation is satisfactory and the thesis is in a form suitable for publication.
3. Work evinces the capacity of the candidate for critical examination and independent judgement.

Date : **Signature of Supervisor**

Place :

Dr. Arvind Maindola
Lecturer - Drawing & Painting
Govt. College, Bundi (Raj.)

समर्पण

यह शोध प्रबन्ध मैं अपने

परम् श्रद्धेय सद्गुरूदेव

श्री रामलाल जी सियाग

के चरणों में सादर समर्पित करता हूँ

जिनकी प्रेरणा और आशीर्वाद

मेरे जीवन का महान

सम्बल बना।

अचल अरविन्द

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय–वस्तु	पृष्ठ संख्या
♦	**प्राक्कथन**	i - ix
♦	**विषय प्रवेश**	1 – 14
	भारतीय चित्रपरम्परा के विकास क्रम में राजस्थान में अमूर्तवाद का विवरण	
♦	**प्रथम अध्याय**	15 – 42
	भारतीय आधुनिक कला एवं राजस्थान	
(1)	राजस्थान की समसामयिक कला–धारा में अमूर्तवाद	
	संदर्भ	
♦	**द्वितीय अध्याय**	43 – 79
	चित्रकार सुरेश शर्मा का व्यक्तित्व एवं कृतित्व	
(1)	जीवन परिचय	
(2)	शिक्षा	
(3)	चित्रण कार्य	
(4)	उपलब्धियाँ	
	संदर्भ	
♦	**तृतीय अध्याय**	80 – 109
	विविध क्षेत्रों में सृजनात्मक भूमिका	
(1)	शिक्षक एवं आचार्य के रूप में भूमिका	
(2)	कला के क्षेत्र में दृष्टि	

क्र.सं.	विषय-वस्तु	पृष्ठ संख्या
(3)	साहित्य सृजन	
(4)	आधुनिक चित्रकला के प्रति दृष्टिकोण	
	संदर्भ	
♦	**चतुर्थ अध्याय**	**110 - 135**
	चित्रों का तकनीकी विवेचन	
(1)	विषयात्मक	
(2)	सृजनात्मक	
(3)	तकनीकी-रेखा, रंग, आकार एवं कला के नवीन आयाम	
(4)	कला शैलीगत मौलिकता	
	संदर्भ	
♦	**पंचम अध्याय**	**136 - 150**
	सुरेश शर्मा की कला का समीक्षात्मक अध्ययन एवं विश्लेषण	
	संदर्भ	
♦	**उपसंहार**	**151 - 160**
	भारतीय कला के क्षेत्र में योगदान	
♦	**चित्र सूची**	**161 - 162**
♦	**सन्दर्भ ग्रन्थ**	**163 - 174**

प्राक्कथन

आकाश की मनोहारी चित्रपटी में पल–पल परिवर्तित होती आकृतियाँ प्रकृति के विस्तार एवं इसकी इन्द्रधनुषी सुषमा चारों ओर एक उन्मुक्ता बोध के साथ विचरण करते जीव–जन्तुओं ने अवश्य ही कभी आदिमानव का मन मोहा होगा और किन्हीं विमुग्ध क्षणों में भित्तियों पर उसकी अँगुलियों ने कुछ आकृतियाँ बनाई होंगी। अतीत के कुहासे में कोई ऐसी ही कहानी छिपी है, जहाँ से कला चेतना की पहली किरण विकसित होती है। मानव द्वारा निर्मित कला इसी चेतना की अगली कड़ी है जो परिवेश की अनुकृति के आदि आग्रहों एवं इसकी आरम्भिक चेष्टाओं को सुस्पष्ट करते हैं।

कला के विकास की कहानी अनुकृति की विथियों से सर्जना के उदात्त शिखरों को स्पर्श करने की कथा है, जिस दिन किसी रूपसी के सौन्दर्य बोध में पक्षियों की मुक्त उड़ान की कल्पना ने पिघलकर आकार एवं गढ़न लिया होगा तथा किसी परी के मोहक आकृति–आकार बंध उभरे होंगे, उसी दिन अनुकृतियों की सीमाओं को अवक्रमित करते हुए एक नये आलोक के साथ सर्जना राजद्वार स्थापित हुआ होगा। कला जीवन की अनुकृति मात्र ही नहीं, मौलिक सर्जना सृष्टि है। मनुष्य की पूरी चेतन प्रक्रिया और सौन्दर्य बोध की क्षमता उसके मस्तिष्क के सृजनात्मक गुण ओर आकार बोध पर निर्भर करती है, जो मनुष्य में अर्न्तजात है। अपने आप में अनुभूत दुनिया, तेजमंद प्रकाशों, विविध रंगों आदि का जमघट है। कला सृष्टि का बोधगम्य संसार मानव मस्तिष्क की सृजन प्रक्रिया से ही बनता है। आकारों के भीतर निरुपित करने की मानव मस्तिष्क की क्षमता से ही वस्तुओं के एक–दूसरे से पृथक अस्तित्व

का बोध होता है, क्योंकि हम किसी वस्तु की पहचान, रेखा, तल, घनत्व आदि के विनोद से बनते हैं जो विनोद स्वयं प्रकाश, रंग आदि की स्थितियों से प्रभावित होते हैं। फिर इन अनुभूत गुणों के आधार पर हम उन्हें विभिन्न अर्थ प्रदान करते हैं। इस तरह प्रकृति के विभिन्न आकार–निराकार ओर अर्थ के संयोग से अपने इर्द–गिर्द वस्तुओं और व्यक्तियों का संसार निर्मित करते है परन्तु समय निरन्तर परिवर्तनशील है उसी तरह विकास सोपानवत है, कला के मापदण्ड बड़ी तेजी से बदलते जा रहे हैं 21वीं सदी में समकालीन कला अनेक नये रूपों में विकसित होती रही है और कला का यह प्रयास नूतन युग का सूचक है।

इस कालजयी कला ने समय की बालूका राशि पर जो पद चिन्ह अंकित किये हैं। वह इसका ऐतिहासिक सन्दर्भ है। यह अत्यन्त प्रसन्नता की बात है कि इतिहास के वातायन से झाँकते हुए राजस्थान की आधुनिक कला के मूल स्तम्भों में से एक प्रमुख स्तम्भ कलाविद् श्री सुरेश शर्मा समकालीन कलाकारों में अपना सर्वोपरि स्थान रखते हैं।

कला को जीवन तथा जीवन को कला का पर्याय मानने वाले श्री सुरेश शर्मा एक प्रतिभा सम्पन्न कला मनीषी है। जिन्होंने न सिर्फ पूर्ण समर्पित क्षणों में निराकार सृष्टि की कला–कृतियों की सर्जना की है, बल्कि एक गंधवह की भाँति सुरभि का मुक्त दान भी दिया है। श्री शर्मा जी की कला साधना की श्रेष्ठता न सिर्फ कालजयी कृतियों के निर्माण में है, बल्कि उनके रचनाधर्मी व्यक्तित्व की पहचान तो उन अनगिनत कला साधकों, सर्जकों और कृतिकारों के गढ़ने में हैं। समकालीन भारतीय चित्रकला में राजस्थान के चित्रकारों में कल्पनाशील और अन्वेषणात्मक–प्रवृत्ति के चित्रकार सुरेश शर्मा एक ऐसा नाम है जिन्होंने अपनी खोजपूर्ण दृष्टि से कला के क्षैत्र में अमूर्त चित्रण की देश और काल के परिप्रेक्ष्य में असाधारण अभिव्यक्ति की

है। कला जगत में अपने सृजन द्वारा शीर्ष स्थान बनाने के लिए शर्मा एक दीर्घ कला यात्रा से गुजरे। शर्मा ने परिवर्तन में बाधक प्रचलित प्रवृत्तियों को चुनौती देकर कला सृजन का विरल मार्ग अपनाया।

शर्मा अनुभव सिद्ध परिपक्व स्तर के एक ख्याति प्राप्त शिक्षक, मार्गदर्शक और मजे हुए कलाकार है। श्री सुरेश शर्मा का शैशवकाल उस दौर से गुजरा जब भारतीय कला और विशेषतः राजस्थान की कला संक्रमण काल से गुजर रही थी। चित्र रचना का ताना–बाना नैसर्गिक वातावरण और सांस्कृतिक धरोहर का उनके अवचेतन मन पर गहरा असर था। शर्मा के कलागुरुओं की दिनचर्या, सृजन करने की प्रक्रिया, कला शिक्षण तथा चिन्तन ने अनेक व्यक्तित्व तथा सृजन की स्वतंत्र चेतना के विकास में महत्त्वपूर्ण प्रेरक बीज बोए। शर्मा का संघर्ष प्रचलित शैलियों, अभिप्रायों तकनीकों के बीच अन्वेषणात्मक और प्रयोगवादी अभिव्यक्ति स्थापित करने के लिए था। छठे दशक तक कलाकार सुरेश शर्मा विभिन्न प्रचलित शैलियों, तकनीकों, सिद्धान्तों और मुहावरों से भली–भाँति अवगत हो चुके थे किन्तु उनके जिज्ञासु और खोजी गैर परम्परावादी स्वभाव ने उन्हें यहीं तक सीमित नहीं रखा। कला का अर्थ सृजन द्वारा स्वतंत्र भावों, संवेगों और विषयों को प्रकट करना तथा उनके अर्न्तनिर्हित गुम्फित सत्य और सत्ता को सरल और स्वच्छंद रूप से कलाकार की निजी अभिव्यक्ति से मुखर करना था। सातवें दशक से प्रारम्भ राजस्थान का आधुनिक कला आन्दोलन अपने उभयभावी स्वरूप में था। केवल कला के विद्रोही तेवर कई धाराओं में प्रकट हुए और सौंदर्य के नए विकल्पों का प्रादुर्भाव हुआ। शर्मा ने प्रचलित मृतप्रायः पारम्परिक और तथाकथित आधुनिक कला के नाम पर किये जा रहे प्रयोगों की जगह सुस्पष्ट दिशा वैयक्तिक और विशुद्ध कलावादी दर्शन को महत्त्व दिया। शर्मा ने अपने कला सृजन द्वारा भारतीय परिदृश्य में राजस्थान की कला का महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया।

राजस्थानी कला परम्परा और भारतीय आधुनिकता के आधार है वहीं उसमें युद्धेत्तर विश्व कला का पूर्ण प्रभाव है। शर्मा राजस्थान के अन्य अमूर्त चित्रकारों की तुलना में पूर्णतया आकृति निरपेक्ष कलाकार है आपकी कला में सभी तत्व विद्यमान है जो परिस्थियाँ, प्रगतिमयी, विचारधारा, वैश्विक परिवेश और अवांगार्द स्वरूप को प्रकट करते हैं। शर्मा की कला अर्थ की खोज है तथा बौद्धिक उत्तेजना पैदा करते हैं और धीरे–धीरे दर्शकों को ध्यानस्थ मुद्रा में तल्लीन करते हैं आपके चित्रों को तंत्रवाद से भी प्रभावित कहा गया है क्योंकि वे सौन्दर्य के मनोवैज्ञानिक पक्ष को अर्थ देते हैं। शर्मा की शैली मे विदेशी प्रभाव के रूप में मुलायम और कठोर किनार की विशेषताएँ हैं किन्तु सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इन सभी में तकनीकी दृष्टि से शुद्धता है तथा अमूर्त कलारूपों का सार्थक संयोजन है, शैली की वैयक्तिक और रंग लालित्य उनके चित्रों की विशेषता है। श्री सुरेश शर्मा का अधिकांश से ज्यादा कलाकर्म अनाकृति मूलक है। वे वस्तुनिरेपक्ष कला के प्रयोगवादी कलाकार है, उनके चित्रों में रंग ही माध्यम, विषयवस्तु और नायक है। अर्थात सार रूप में सुरेश शर्मा अन्वेषण, परीक्षण और स्वच्छंद अभिव्यक्ति के सर्जक है।

कलाविद् श्री सुरेश शर्मा के विपुल कलाकर्म पर दृष्टिपात करने पर मेरा मानस उनके कृतित्व पर शोध कार्य करने को प्रेरित हुआ तथा मैं श्री शर्मा से दूरभाष पर बात करके उनसे भेंट करने आपके निजि आवास उदयपुर पहुँचा और मैंने उनके कलाकर्म पर शोध करने की बात कही तो उन्होंने मेरी बात सहज ही स्वीकार की। ऐसे महान चित्रकार की सहजता को देखकर मैं भाव विभोर हो गया। अपने कलाकर्म के व्यस्त पलों में से समय निकालकर उन्होंने जब भी मैंने कोई शोध कार्य हेतु सामग्री चाही तो उन्होंने तुरन्त मुझे उपलब्ध करवाई। शर्मा की कला (राजस्थान) में ही नहीं वरन् सम्पूर्ण भारत में अर्वाचन कला का प्रतिनिधित्व करती है। ऐसे ख्यातिप्राप्त कलाकार के कलाकर्म को अपने शोध प्रबन्ध का विषय चुनना अपने आप में मेरे लिए चुनौती से कम

नहीं था परन्तु मेरे शोध निर्देशक डॉ. अरविन्द मैन्दोला साहब की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही, शोधकार्य की विषयानुक्रमणिका और शोध प्रबन्ध प्रस्तुतिकरण तक बीच–बीच में जो भी अवरोध बाधाएँ आयी उन सबके दौरान उनका वरद् हस्त हमेशा मेरे ऊपर रहा और उनके सहज सरल सहयोगी व्यक्तित्व से कठिन कार्य सरल हो गया। मैंने अपने शोध कार्य का विषय–**"अमूर्तवादी चित्रकार सुरेश शर्मा–एक विवेचनात्मक अध्ययन"** निर्धारित किया और इस कार्य को पाँच अध्यायों में विभक्त किया जो इस प्रकार से है–

सर्वप्रथम मैंने विषय प्रवेश को महत्त्व दिया जिसमें भारतीय चित्र परम्परा के विकास क्रम में राजस्थान में अमूर्तवाद के विवरण की चर्चा की।

प्रथम अध्याय : में भारतीय आधुनिक कला एवं राजस्थान तथा राजस्थान की समसामयिक कला धारा में अमूर्तवाद की चर्चा की।

द्वितीय अध्याय : में चित्रकार सुरेश शर्मा का व्यक्तित्व एवं कृतित्व की व्याख्या की जिसमें आपके जीवन परिचय शिक्षा, चित्रण कार्य व उपलब्धियों को रखा।

तृतीय अध्याय : में शर्मा की विभिन्न क्षैत्रों में सृजनात्मक भूमिका को पल्लवित किया। जिसमें–आपकी शिक्षक एवं आचार्य के रूप में भूमिका, कला के क्षैत्र में दृष्टि, साहित्य सृजन व आधुनिक चित्रकला के प्रति दृष्टिकोण इत्यादि को मुखरित किया।

चतुर्थ अध्याय : में चित्रों का तकनीकी विवेचन लिया जिसके अर्न्तगत–विषयात्मक, सृजनात्मक तकनीकी रेखा, रंग, आकार एवं कला के नवीन आयाम व कला शैलीगत मौलिकता आदि बिन्दुओं को उल्लेखित किया।

पंचम अध्याय : में श्री सुरेश शर्मा की कला का समीक्षात्मक अध्ययन एवं विश्लेषण किया।

तत्पश्चात उपसंहार में शर्मा का भारतीय कला के क्षैत्र में योगदान की पुष्टी की। इसके पश्चात चित्र सूची व सन्दर्भ सूची को रखा।

उपरोक्त सभी साक्ष्यों के आधार पर श्री शर्मा के कलाकर्म का विवेचनात्मक अध्ययन व विशेषताओं को बताने का प्रयास किया है। श्री शर्मा का कृतित्व बहुत ही विपुल है उनके बहुआयामी व्यक्तित्व के समान उनके कृतित्व की समीक्षा भी अत्यन्त प्रभावशाली रही है तथा इस दृष्टि से अवगत करवाना भविष्य के युवा कलाकारों का मार्ग प्रशस्त करना तथा वर्तमान में व्याप्त चित्रण शैलियों की विभिन्नताओं को सशक्त करना मेरा उद्देश्य है।

आभार

कलाविद् श्री सुरेश शर्मा अपनी अवधारणा को पुष्ट करने एवं सृजन में नित नवीनता को स्वीकारते हुए विविध प्रयोगों के पक्षधर रहे हैं। वे एक धारा विशेष में बँधने के विरोधी रहे। उनकी अन्तः दृष्टि अत्यन्त प्रखर है, जिसका बिम्ब उनकी कलाकृतियों पर छाया रहता है। स्वभावतः उनकी कृतियों की रचना सुरूचिपूर्ण एवं सुव्यस्थित है।

कला प्रेमियों और कला जगत को श्री सुरेश शर्मा की कलात्मक उपलब्धियों व अनूठी कला शैली से अवगत कराना मेरे शोध कार्य का मुख्य उद्देश्य है। यह कार्य अब अर्थ पूर्ण हो गया है। अब कला जगत में हो रहे कलाकारों पर शोध में एक कड़ी और जुड़ सकेगी।

परम् आनन्द स्वरूप बह्मा को नमन् करते हुए, श्री गणेश ओर माँ शारदा का चरण वन्दन करते हुए, बहमलीन दादा गुरु बाबा श्री गंगाई नाथ जी योगी व परम् पूज्य सद्गुरुदेव श्री रामलाल जी सियाग के चरणों में मैं श्रद्धा के पुष्प अर्पित करता हूँ। इन अलौकिक शक्तियों के आशीर्वाद के बिना यह शोध प्रबन्ध पूर्ण नहीं हो सकता था।

किसी भी कलाकार पर शोध कार्य करने में विशेष कठिनाई उनके चित्रों और सामग्री की उपलब्धता में होती है, किन्तु श्री शर्मा ने मुझे स्नेह प्रदान करते हुए समय–समय पर अपने चित्रों से अवगत कराया और चित्रों की छायाप्रति की अनुमति देकर मेरे कार्य को सहज व सरलतापूर्ण कर दिया। साथ ही अपने व्यस्तम् जीवन से समय निकालकर मुझे अमूल्य समय दिया।

इस शोध प्रबन्ध को प्रस्तुत करने के अवसर पर सर्वप्रथम मैं अपने शोध निर्देशक डॉ. अरविन्द मैन्दोला साहब का हृदय से अत्यन्त आभारी हूँ, जिनके निश्चल निस्वार्थ, सहयोग व सतत प्रेरणा से यह शोध कार्य पूर्ण हो सका, मैं उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। आपने मुझे विषम परिस्थितियों में धैर्य व साहस प्रदान किया तथा कभी हतोत्साहित नहीं होने दिया। इस शोध प्रबन्ध के प्रस्तुतीकरण में सर्वाधिक श्रेय उनको ही जाता है जिनका मैं हमेशा ऋणी रहूँगा।

मैं उन विद्वान लेखकों व कलाकारों व कला समीक्षकों के प्रति भी कृतज्ञता प्रदर्शित करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ जिनकी पुस्तकों व पत्र–पत्रिकाओं से इस शोध हेतु सहयोग प्राप्त हुआ।

मैं अपने माता–पिता व भ्राता अविनाश व अर्जुन के प्रति भी श्रद्धा व्यक्त करना चाहूँगा जिनके स्नेह व आशीर्वाद से मुझे इस शोध कार्य को करने की प्रेरणा मिली।

मैं अपने गुरुजन श्रीमती वीनू कुमार (मैडम), श्री हरिओम वर्मा, डॉ. सुरेश जोशी, डॉ. शालिनी भारती, डॉ. मनोज वर्मा व विशेष सहयोगी डॉ. सविता शर्मा, डॉ. आशीष श्रृंगी, श्री सतीश शर्मा (ललित कला विभाग राज. महाविद्यालय, कोटा) सभी के प्रति हृदय से आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने इस कार्य हेतु सहयोग प्रदान कर उचित मार्गदर्शन व प्रोत्साहन से मेरे साहस को बढ़ाया।

मेरे शुभचिंतकों में भाई श्री अनूप कुमार अरविन्द भाभी श्रीमती बृजेश नंदिनी तथा मित्रगण मनोज गालव, रुपेश शर्मा, डी.एस. सेन, अंकित बनवाड़िया इत्यादि के प्रति भी कृतज्ञता के भाव प्रेषित करता हूँ जिन्होंने इसके लिए मुझे निरन्तर प्रोत्साहित किया।

मेरे इस शोध प्रबन्ध के टंकण कार्य के लिए 'परम कम्प्यूटर' की शबनम खान का मैं हृदय से आभारी हूँ कि उन्होंने शुद्ध टंकण व साज–सज्जा प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है।

अन्त में, मैं शोध प्रबन्ध की पूर्णता में जिन अज्ञात बन्धुओं ने किसी न किसी दशा में सहयोग प्रदान किया हो उनका आभार प्रकट करता हूँ तथा सभी का आभार प्रकट करते हुए मैं कलाविद् श्री सुरेश शर्मा जी के दीर्घ जीवन की कामना करते हुए बहुमुखी प्रतिभा और व्यक्तित्व को सादर नमन करता हूँ। जिनके चित्रों एवं निराकार रचनाओं के संसर्ग में आकर मैं उनके चित्रकर्म व सृजन के गहन परिवेश में उतरा और उनके शब्दों और रंगों ने मुझे एवं मेरे चित्त को समग्र रूप से रंगा और उनके इस सृजन के विषय में लिखने के लिए मेरा मन व मस्तिष्क पूर्ण रूप से प्रेरित हुआ।

मैं पुनः एक बार सभी को धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ।

साभार

अचल अरविन्द

विषय प्रवेश
भारतीय चित्रपरम्परा के विकासक्रम में राजस्थान में अमूर्तवाद का विवरण

ऐतिहासिक कारणों से राजस्थान में परम्परागत–कला शैलियों का असर इतना प्रच्छन्न था कि पाँचवें दशक के अन्तिम बरसों में जा कर कहीं प्रयोगवाद के नाम पर कला में आधुनिक या नई संवेदनाओं ने जगह बनाई। यह वह वक्त था जब कि भारतीय कला में कई बड़े परिवर्तन घटित हो चुके थे। राजस्थान में कला में नई संवेदना का दाखिला सन् साठ के बाद ही कहना चाहिए। राजस्थान में परम्परा के बहुत गहरे और अक्षुण्ण असर के कारण राज्य में 'नएपन को ग्रहण करने का आवेग या परम्परा को पूरी तरह अस्वीकृत करने का साहस अपेक्षाकृत देर से जागा, तो वह सकारण था और इसमें ज्यादा कुछ आश्चर्यपूर्ण भी नहीं था।[1]

अमूर्त कला, रूपाकृत विषय अभिव्यक्ति से समस्त संसार की पुरातन, मध्यकालीन व आकृतिमूलक कलाओं के विरोधी प्रभावों का एक उत्तेजनापूर्ण रहस्यात्मक एवं पेचीदा मिश्रण है। अमूर्त कला अभिव्यक्ति, व्यक्तिगत पद्धति व विलक्षण स्वरूप से यह प्रदर्शित करती है कि कला को किसी सीमा में नहीं बाँधा जा सकता है। वह तो मानवीय संवेगों की स्वच्छंद परिणति का परिणाम है।

राजस्थान में अमूर्त कला के तत्व खोजें जाए तो राजस्थान के जन परम्परावादी चित्र, राजस्थान की विभिन्न परम्परागत शैलियों व यहाँ की लोक कला में परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप में देखे जा सकते हैं। जैन शैली के चित्रों में रूपगत अमूर्तता को भली–भाँति देखा जा सकता है, जबकि राजस्थान की विभिन्न शैलियों मेवाड़, मारवाड़, हाड़ौती व ढूंढाड़ के रूपगत अमूर्तता के साथ–साथ रंगों व प्रकृति के

सरलीकृत अभिप्रायों में भी अमूर्तता देखी जा सकती है। 1920 से रविन्द्रनाथ टैगोर, गगनेन्द्रनाथ टैगोर, अमृता शेरगिल, यॉमिनी रॉय आदि पुनरुत्थान युग के भारतीय कलाकारों ने नई प्रयोगधर्मिता व अर्न्तराष्ट्रीय कला आन्दोलनों से जोड़ने का प्रयास किया है। भारतीय कला के पुनरुत्थान युग के पश्चात् कुछ ऐसे कलाकार उभर कर आये जिनकी कृतियाँ विशुद्ध रूप से अमूर्त कहीं जा सकती थी। राजस्थान की कला में अमूर्त प्रभावों की शुरुआत कुछ देर से होती है। उस समय तक भारत में अमूर्त कला काफी विकास कर चुकी थी और अमूर्त कला में काम करने वाले कलाकारों ने अपना विशेष स्थान बना लिया था। अर्न्तराष्ट्रीय कला आन्दोलनों का प्रभाव उस समय की कला में स्पष्ट दिखाई देता है। यद्यपि राजस्थान में अमूर्तवाद का प्रार्दुभाव विलम्ब से भले ही हुआ हो परन्तु जिस गति से कलाकारों ने रचनात्मकता व प्रयोगधर्मिता में नए–नए आयाम प्रतिपादित किए एवं राष्ट्रीय स्तर पर राजस्थान की एक पहचान बनाई, उसे इनका महत्त्वपूर्ण एवं प्रशंसनीय योगदान कहा जा सकता है। आज की भारतीय समसामयिक कला में राजस्थान की समसामयिक कला का विशिष्ट स्थान प्राप्त होना यहाँ कलाकारों की सतत् साधना, नवीनता तथा निरपेक्ष अभिव्यक्ति के पक्षधर होने का ही परिणाम है।

अर्न्तराष्ट्रीय अमूर्त कला की भाँति राजस्थान में अमूर्त कला के विभिन्न स्वरूप देखे जा सकते हैं। राजस्थान की प्रारम्भिक अमूर्त कला में कलाकारों ने अर्मूत अभिव्यंजनावादी शैली से प्रभावित होकर नई शुरुआत की थी। जिनके चित्रों में रंगों, स्वरूपों व तूलिकाधातों द्वारा भावों की अभिव्यंजनात्मक प्रस्तुति हुई तथा कथ्य का भी निर्वाह हुआ।[2]

कला के लिए उत्सर्ग, परम्पराओं का निर्वहन, वीरत्व और आदर्श की प्रतिबद्धता राजस्थानी अमूर्त कला का प्रतिपाद्य रहा है। परम्परा और प्रगति की दो धाराओं पर खड़ा राजस्थानी अमूर्त कला निरन्तर निखर रही है। राजस्थान के कलाकार आज अपने सृजन से इस कला के गौरव को बढ़ा रहे हैं।

अमूर्त कला का इतिहास –

कला का स्वरूप हमेशा से ही अमूर्त रहा है, इस संसार में ऐसी बहुत सी विभिन्न कलाएँ हैं जो अमूर्तन है, बल्कि इस संसार को रचने वाला सृष्टा भी अमूर्त है जिसे हम सत्य मानकर पूजा–उपासना करते हैं और इस संसार के कोने–कोने में उस अमूर्त छवि को पूजते हैं। जिसे नैत्रों से नहीं देखा जा सकता, केवल कानों द्वारा सुने जाने, एवं महसूस कर अमूर्त परम तत्व ईश्वर और परम शक्ति के रूप में स्वीकार करते हैं। अमूर्त कला, कला का वह स्वरूप है, जिसमें एक वस्तु या आकार को सरल या अतिरंजित तरीके से विकसित किया जाये। अमूर्त कला वह है जो लोगों को और कला प्रेमियों की एक विस्तृत विविधता व आकर्षित करने वाले प्रमुख तत्त्वों में से एक तत्त्व है साथ ही सार परिदृश्य कला व कल्पना युक्त अमूर्त कला, कला की लोकप्रिय किस्म मानी जाती है।

अमूर्त कला का प्रारम्भ प्रागैतिहासिक काल से ही माना जाता है परन्तु अमूर्त कला के तीन प्रमुख वादों से इसका पुर्नजन्म हुआ है। जिसमें धनवाद, अभिव्यंजनावाद व नवलचीलवाद तथा इन वादों के कई कलाकारों को अमूर्त कला की नींव का श्रेय जाता है। इन कलाकारों में सबसे प्रसिद्ध धनवादी चित्रकार पाब्लो पिकासो एवं जार्ज ब्राक रहे हैं। मोंद्रिया व जैक्सन पोलॉक भी अमूर्त अभिव्यंजनावाद के उत्कृष्ट उदाहरण है।

अमूर्त कला के इतिहास की पृष्ठभूमि के पीछे लगभग 20,000 कलाकार अब तक शामिल रहे हैं। इतिहास से ज्ञात होता है कि तत्कालीन समय में अमूर्त आकार वस्त्र और मिट्टी के बर्तनों की सजावट में इस्तेमाल किया जाता रहा है। 20वीं सदी की इस कला स्वरूप में उपर्युक्त सत्यता का पता चलता है। पहली अमूर्त कला की मूल निराकार आकृति वासिली कान्डिंस्की द्वारा सन् 1910 ई. में विकसित की गई थी, तथा 1912 ई. में कान्डिंस्की ने धनवाद, सुरीलवाद व भविष्यवाद के आकारों व रचना तत्वों को अपनी कृतियों में स्थान देकर पूर्णतया वस्तुनिरपेक्ष कला

का उद्‌भव किया। तथा अमूर्त कला के आत्मिक तत्व के बारे में उन्होंने लिखा है की, कला के दो तत्व हैं– आन्तरिक व बाह्य जो आंतरिक है, वह कलाकार की आत्मिक भावना है और अनिवार्य तत्त्व भी है, क्योंकि आन्तरिक तत्त्वों से कलाकृति का रूप निश्चित किया जाता है। कला विशेषज्ञों के अनुसार पश्चिम कला में अपने शुद्ध रूप को पहचानने योग्य नहीं माना जाता अर्थात कलाकार अपनी कृतियों में प्राकृतिक वस्तुओं को रंगों के माध्यम से दर्शाने की चेष्टा करता है। परन्तु वो उसे प्राकृतिक छटा का शुद्ध रूप प्रदान करने में असफल रहता है। जिसके कारण इसके प्रस्तुतीकरण से वह बचने की कोशिश करता है। इस सन्दर्भ में कान्डिंस्की ने कहा है कि– अमूर्त कला सभी कलाओं में सबसे कठिन है क्योंकि इसमें कलाकार को अपने संवेदनशील विचारों व आत्मिक भावों का शुद्धता के साथ गमन करना होता है।

20वीं सदी के प्रारम्भ में ही यूरोपीय कलाकारों ने पारम्परिक कला के प्रतिनिधित्व नियमों का उल्लंघन कर, कला के विभिन्न नियमों से मुक्त हो गये। उन्होंने वास्तविकता के नियमों का सरलीकरण कर पहचानने योग्य आकारों का सफाया कर दिया। अमूर्त कला में इन कलाकारों ने आत्मिक विचारों की विविधता के साथ वृद्धि की। इस कला में आकारों की बजाए रंग व तर्कशीलता की भावनाओं पर अधिक बल दिया। सामान्य धारणा में भौतिक अस्तित्व का इस प्रकार विलय अमूर्तन कहलाता है इस गलती की पहचान कर लेने पर कलाकार भाववादी अमूर्तन तत्त्वों को उकेरने की कोशिश करता है। मगर वह एक काल्पनिक, रहस्यवादी तरीके से ही ऐसा कर पाता है और अमूर्त तत्त्वों को एक आध्यात्मिक सार तत्वों में तब्दील कर देता है, तथा कल्पना मूलक सौंदर्य की पद्धति ही इस भाववादी तत्वों के ईर्द–गिर्द बुनी गई है।

कला सदैव ही कलाकार के मन चिन्तन की अभिव्यंजना से युक्त रही है मनुष्य के भीतर आदिकाल से ही अमूर्त चिंतन पैदा हुए हैं, परन्तु खड़िया, गेरू या कोयले से गुफा भित्तियों पर अपने भावों को रूपायित करने के लिए रेखाओं के द्वारा

रूपाकार आकृतियाँ बना दी जिससे अमूर्त चिंतन ने मूर्त रूप ले लिया। परन्तु कुछ कलाकारों ने अपने अमूर्त चिंतन को अमूर्त ही रहने दिया। भारतीय चित्र परम्परा के विकास–क्रम में अमूर्त विचारों को या कल्पना लोक के जटिल भावों को चित्रकार ने अपने मन के भीतर संजोये रखा तथा समाज के सम्मुख रखकर इस कला के माध्यम से हमें उस निराकार ईश्वर से जोड़ने का भरसक प्रयास किया। वरन् प्रयास ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण रूप से भारतीय समाज को जहाँ परम्परावादी कला की प्रवृत्ति थी तथा प्रत्येक कला प्रेमी व आमजन भौतिकवादी हू ब हू चित्रों को पसंद करता था और धर्म से जुड़ी चित्रकृतियों को अपने मस्तिष्क पटल पर बिछाए रखते थे। उस समाज को कुछ कलाकारों ने एक ऐसी कला के दर्शन करवाये जिसे देखकर लोग स्तब्ध रह गये और यह कला लोगों को विचित्र और विशिष्ट रूप से आधुनिक लगने लगी। परन्तु वास्तव में यह कला यथार्थवादी व परम्परावादी कलाओं के समान उतनी ही प्राचीन है, जो रूप के तत्वों का अध्ययन करती हैं। अमूर्त कला अपने उद्देश्य की विविधता व विविध मानवीय स्वभाव और मनस्थितियों की प्रतिष्ठा में आज भी अमूर्त चिंतन की उपयोगिता दर्शाती है। किसी भी चित्रकार को अमूर्त कार्य करने पर अपने व्यक्तित्व से मुक्ति मिलने लगती है। जीवन का अवलोकन व प्रत्यक्ष बोध तीक्ष्ण होता है और कलाकार बहुत ही गहनता से संचालित होने वाली इस सृजनात्मक प्रक्रिया का एक सर्वाधिक उद्घाटन करने वाला घटक रहा है।[3]

इसलिए अमूर्त कला का आग्रह इस अभिकरण पर निर्भर है कि सौंदर्य सिद्धान्त विशिष्ट मूल्य रूप और रंगों में निहित होते हैं, न कि चित्र और मूर्ति शिल्प के विषयों में यदि होते भी हैं तो उनका कार्य केवल साधारण तरीके का होता है और स्प्रिंग बोर्ड जैसा जो उत्प्रेरक का कार्य करते हैं। कला में अमूर्तकरण का दृष्टिकोण अत्यधिक पुराना हो चला है जो ऐतिहासिक रूप से अनेक जादुई और विशुद्ध सजावटी कलाओं में परिलक्षित होता है।

भारत में जैन, बौद्ध व तंत्र कलाओं में जो प्रतीक प्रयुक्त हुए हैं वे विविध रूप से अमूर्त चित्र हैं। जिनका उद्देश्य उद्दीपन द्वारा शरीर और मन की शक्तियों का जागृत करना है। मुस्लिम देशों में जहाँ मानवाकृति के चित्रण का निषेध है और जिसमें अमूर्तकरण द्वारा भावनाओं को अभिव्यक्त किया गया है। भारतीय सांस्कृतिक परम्परा में सत्य या यथार्थ की व्यंजना अक्सर अमूर्त रूपों में हुई है। अमूर्तन के उदाहरण हिन्दूओं में शिवलिंग तथा स्वास्तिक ईसाइयों में क्रॉस, मुसलमानों में हिलाल, तारा और बौद्धों में धर्मचक्र के रूप में दिखाई देते हैं। समयान्तर से कैमरे के स्वच्छंद प्रयोग ने केवल वस्तुओं और घटनाओं को रिकार्ड कर अमूर्तन को बढ़ावा दिया है। आधुनिक कला में अमूर्तकरण का चलन असरदार होता गया किन्तु वैचारिक दृष्टि से यह कोई नई इजाद् नहीं होते हुए भी रूपांकन और चित्रांकन कला अभिव्यक्ति को सार्वजनीन और सशक्त बनाने में अत्यधिक सफल हुई है।

अमूर्त चित्रण को सम्पुष्ट करने के लिए कई घटक नियामक रूप से सिद्ध हुए हैं। यूं तो इन प्रवृत्तियों की 20वीं सदी के आरम्भ से कलाकारों के भीतर रिप्रजेंटेशन प्रवृति का निर्वाह हुआ।

अमूर्तन कला का आधार शुद्धता, काल शून्यता, सार्व भौमिकता है, जो सिर्फ कला तत्व रंग, रेखा, रूप, चित्रदेश और संयोजन को महत्त्व देते हैं। कलाकारों ने मौलिक रूप से सभी समय में उपलब्ध कला को खोजना शुरू किया, यह एक ऐसा प्रयास था, जिसने राष्ट्रीयवादी सीमाओं और इतिहास के काल खंडों से परे सार्वभौमिक कला भाषा का चयन किया और अमूर्तन और अभिव्यंजनावाद समकालीन कला को विभिन्न प्रवृतियों में उद्घाटित किया। अमूर्तन प्रवृति में सरलीकरण, सामान्यकरण और फार्मेलाइजेशन है और अभिव्यंजना प्रवृति में अतिरंजना, सम्पाकीयता और प्रभावी स्मृता है हालांकि दोनों प्रवृत्तियाँ ही सार की खोज का चित्रण है। किन्तु यह कहना कठिन है कि जहाँ यथार्थवादी रचना शैली का अंत होता है वहाँ से अमूर्तन और

अभिव्यंजनात्मक अमूर्तन आदि। प्रतिनिधि कलाकारों में पियट मोंद्रिया ने वस्तुवाद का आरम्भ किया। 5वें दशक तक कई कलाकारों ने रिप्रजेन्टेशनल प्रवृत्ति और वैचारिक अन्वेषण के साथ ज्यामितिक अमूर्तन को महत्त्वपूर्ण बना दिया। समकालीन नई कलाधारा ने अमूर्त और अभिव्यंजनावादी प्रवृत्तियों के बीच एक सेतु का काम किया।

जैक्सन पोलॉक इस दौर का ऐसा चित्रकार हुआ है जिसकी संयोजन एवं तकनीक से अर्न्तराष्ट्रीय कला जगत में कई चित्रकार प्रभावित हुए। इस आन्दोलन को गतिशील बनाने में कई प्रमुख कलाकारों के नाम प्रमुख हैं जो अमूर्तकला को स्थापित करने में अग्रणी रहे हैं।[4]

आज संसार भर में अमूर्तकला या सूक्ष्म चित्रकला का प्रचार अत्यधिक रूप से हुआ है वर्तमान समय का शायद ही कोई चित्रकार ऐसा हो, जो इस नयी चेतना से प्रभावित न हुआ हो। भारत में करीब–करीब सभी नये कलाकारों का ध्यान इस ओर आकर्षित होता है। अमूर्तकला इस सदी की एक बहुत ही प्रभावोत्पादक देन है। यह सच है कि साधारण मनुष्य इसका आनन्द लेने में असमर्थ है और इन्हें देखने पर नाक–भौं सिकोड़ता है। इस प्रकार के चित्रों की सींग–पूंछ पहचानना बड़ा मुश्किल है। यहाँ तक कि यदि किसी चित्रकार से पूछा जाये तो वह भी उन्हें समझाने में असमर्थ सिद्ध होता है क्योंकि बहुत से आधुनिक चित्रकार यूरोपीय अरूप कला से प्रभावित होकर उसकी नकल करने लग जाते हैं। न वे स्वयं ऐसे चित्रों को समझते हैं न समझा सकते हैं और कुछ बताऐंगे भी तो वे जटिल भाषा में कुछ उल्टे सीधे शब्दों से समझाने की चेष्टा कर बातों को और भी जटिल बना देते हैं जिससे बात जहाँ की तहाँ रह जाती है यही है आधुनिक सूक्ष्मवादी कला की दशा।

अमूर्तवादी चित्रकला एक रहस्यात्मक वस्तु के रूप में हमारे सम्मुख आती है, क्योंकि जो बात समझ में नहीं आती वह या तो पागलपन है या उसमें कोई रहस्य है।

यही कारण है कि अरूप कला के प्रति लोगों की ऐसी आशंकाऐं हैं, पागलपन भी हो सकता है और संसार के सभी चित्रकार धीरे–धीरे इसी पागलपन के शिकार होते जा रहे हैं। भारत जैसे विकासशील देश के चित्रकार भी इससे अछूते नहीं रहे। साहित्य के क्षेत्र में भी इसका प्रभाव दिखाई पड़ता है।

वैज्ञानिक पक्ष –

आज का युग विज्ञान का युग है और विज्ञान का प्रभाव हमारे जीवन में परिपेक्ष पर दृष्टि गोचर होता दिखाई देता है। विज्ञान के आविष्कारों से आज पूरा विश्व सभी प्रकार से लाभान्वित हो रहा है। विज्ञान ने हमें रेलगाड़ी, टेलिफोन, रेडियों मोटर, हवाईजहाज, कम्प्यूटर, टेलीविजन आदि ऐसी तमाम सुविधाएँ प्रदान की। यहाँ तक की एटामिक शक्ति से चाँद–तारों तक पहुँचाया है। मनुष्य के लिए घर, कपड़ा, खाना तथा अनेक जन–सुविधाएँ इस वैज्ञानिक शक्ति से हमें प्रचुर मात्रा में मिली है, परन्तु हर वस्तु के दो पक्ष होते हैं वैसे ही विज्ञान के भी हैं।

विज्ञान का चित्रकला के क्षेत्र में कुछ कम प्रभाव नहीं पड़ा है। चित्रकला अपनी गति से प्रगति करती जा रही थी और यथार्थ चित्रण की चरम सीमा पर पहुँच रही थी, कि एकाएक विज्ञान ने कैमरे का आविष्कार किया। चित्रकला का लक्ष्य था यथार्थ चित्रण और कैमरे के इस लक्ष्य को एक प्रकार से समाप्त कर दिया। कैमरे के द्वारा बढ़िया से बढ़िया यथार्थ चित्र तैयार होने लगे। जिस प्रकार कपड़ा बनाने की मशीन बन जाने से जुलाहे का काम छिन गया, उसी प्रकार से कैमरा बन जाने से चित्रकारों के काम को भी अत्यधिक क्षति पहुँची। और सारे संसार की कला में ऐसा ही हुआ। इस कारण अधिकतर चित्रकार बेरोजगार हो गये, उनका जीना मुश्किल हो गया, जो कुछ भी उन्होंने सीखा था उसका अब कोई उपयोग नहीं हो रहा था। अब समाज के लिए एक प्रश्न बन गया और चित्रकार की दुर्दशा अत्यंत क्षीण होती चली गई। चित्रकार चित्र बनाते और उनका मूल्य देने वाला कोई नहीं मिलता था। चित्रकार के

भूखे मरने की नौबत आ गई। अब उनके सामने आजीविका का कोई रास्ता नजर नहीं आया, तो बहुत से चित्रकार कैमरा खरीदकर फोटो ग्राफर बन गये, तो बहुत से व्यवसायिक चित्रकला का कार्य करने लगे, क्योंकि जीवन का साधन उन्हें खोजना ही था। फिर भी कुछ ऐसे भी चित्रकार थे, जिन्होंने भूखे रहना स्वीकार किया, परन्तु अपना कार्य नहीं छोड़ा और उनके चित्र समाज के लिए न होकर स्वान्त सुखाय होने लगे। अर्थात उन्होंने स्वयं के लिए चित्र को शान्ति प्रदान करने हेतु चित्रों की रचना की। जिससे उन्हें आनन्द मिलता और जो कार्य उनके दुःख–दर्द को भुला सकता था। यहीं से चित्रकला सामाजिकता से हटकर व्यक्तिवाद की ओर झुकती चली गई और जब कोई भी मनुष्य या जीव व्यक्तिवादी हो जाता है, तो वह अपनी इच्छानुसार कार्य करता है, उसी को उचित समझता है वही उसके लिए इच्छानुसार कार्य करता है, उसी को उचित समझता है वही उसके लिए सर्वोपरि विषय बन जाता है। अर्थात वह स्वतंत्रता रूपी नदी में डुबकी लगाने लग जाता है, और आज का कलाकार यही कर रहा है। जब प्रत्येक चित्रकार को व्यक्तिगत स्वतंत्रता प्राप्त हो गयी, तो यह भी सच है की, प्रत्येक चित्रकार एक ही तरह के विचारों पर आधारित चित्र नहीं बना सकता और यहीं से चित्रकला में प्रयोगवाद आरम्भ होता है। प्रत्येक चित्रकार अपनी–अपनी इच्छा के अनुसार नये–नये तरीकों से, नये–नये रंगों से चित्र बनाकर अपनी अभिव्यक्ति को प्रतिष्ठापित कर रहा है। अनेक वाद चित्रकला के क्षेत्र मे दृष्टिगोचर होते हैं जैसे प्रभाववाद, धनवाद, फाववाद, बिन्दुवाद इत्यादि अनेक शैलियों का प्रार्दुभाव हुआ और होता जा रहा है।

समकालीन कलाकार स्वतंत्र भारत में सांस ले रहा है, आज वह परिस्थितिवश कला में, पहले से कहीं अधिक स्वतंत्रता का आभास पा रहा है। यदि हम आज के चित्रकार की परिस्थितियों का विश्लेषण करें, तो यह ज्ञात होगा कि, चित्रकार आज जितना मुक्त है पहले कभी न था। आज वह धर्म के व्यर्थ प्रपंचों से मुक्त है और समाज के बंधनों से भी मुक्त है। समाज को आज समय नहीं है कि चित्रकार की ओर

ध्यान दे सके। चित्रकार अपनी चित्रकला से जीविकोपार्जन भी नहीं कर पाता उसे इसके लिए अन्य मार्ग का आश्रय लेना ही पड़ता है। ऐसी स्थिति में वह अपनी चित्रकला के क्षेत्र में पहले से कहीं अधिक स्वतंत्र हुआ है। उसे समाज की चिन्ता नही है बस वह नवनिर्माण की कामना रखता है। यही स्वतंत्रता और नव निर्माण की कल्पना आज की कला का मूल–मंत्र है। आज चित्रकार पथगामी नहीं, बल्कि पथ–दर्शक बनना चाहता है। नवभारत का स्वतंत्र चित्रकार केवल एक कारीगर की भाँति कार्य नहीं करना चाहता, प्रत्युत सर्वप्रथम वह एक दार्शनिक या मनोवैज्ञानिक की भाँति काम करने का विचार करता है। अपने जीवन–दर्शन को निर्धारित करता है, और उसी के अनुसार अपनी साधना का एक लक्ष्य बनाता है, इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु एक सिद्धान्त निश्चित करके, एक अभिनव शैली का आविष्कार करता है। वह केवल परम्परा का सहारा ही नहीं लेना चाहता, अपितु अपने विवेक और अनुसंधान के बल पर कार्य करना चाहता है इसलिये आधुनिक चित्रकला में अनेकों प्रकार के नये–नये रूप सामने आ रहे हैं, और यही कारण है कि हमें उन्हें समझाने में कठिनाई होती है। ज्यों की हम एक प्रकार की कला की परिभाषा निश्चित करते हैं त्यों ही उसकी दूसरी परिभाषाएँ बन जाती है, जो सर्वथा भिन्न होती है। वर्तमान युग का यह एक प्रचलन सा हो गया है कि कला में प्रत्येक चित्रकार एक नये रूप का अनुसंधान करने का प्रयास करता है। इस प्रकार के अनेकों रूप यूरोप और वर्तमान भारतीय कला में आविष्कृत होते चले आ रहे हैं। साधारण व्यक्ति को न इतना ज्ञान है, न इतना अवसर है कि इन नये–नये रूपों को समझ सके, अथवा उसका आनंद उठा सके। इसी कारण आधुनिक समय में कला एक पहेली सी जान पड़ती है।

यह तो समझ में आ सकता है कि, आधुनिक चित्रकार बहुत ही ऊँचे विचारों से प्रभावित होकर चित्र–रचना कर रहे हैं, और जो कुछ वे कर रहे हैं उचित कला मार्ग पर है, परन्तु उनके चित्रों से साधारण मनुष्य को या अधिकतर लोगों को आनन्द नहीं मिल पाता है। यह आधुनिक चित्र केवल विभिन्न प्रकार के रूप उपस्थित करते हैं।

चित्रों को इतने रूप भारत में पहले देखने को नहीं मिलते रहे हैं। परन्तु वर्तमान में सूक्ष्म अमूर्त रूपों की विविधता बहुतायत रूप से देखने को मिल रही है। विभिन्न–विभिन्न रूपों, रंगों एवं रेखाओं का संयोजन कलाकृतियों में दिखाई देता है। विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म एवं विचित्र रूप–रंग दर्शक के मन में कौतूहल और जिज्ञासा तो उत्पन्न करते हैं परन्तु उत्तर कुछ भी नहीं मिलता, न चित्र उत्तर देता है और ना ही चित्रकार। जिसका परिणाम यह होता है कि दर्शक का कौतूहल तथा जिज्ञासा कुछ समय बाद उत्तर न मिलने पर इन चित्रों को एक रहस्य समझने लगता है। रहस्य का अर्थ ही वह है जो समझ में न आये। अर्थात कह सकते है कि आधुनिक अरूप सूक्ष्म चित्रों के रूप में एक महान अमूलचूल परिवर्तन हो गया है और पुराने मापदण्ड झूठे पड़ गये। सारा ज्ञान बेकार हो गया उस ज्ञान के सहारे आधुनिक चित्रों की तह में पहुँचना टेढ़ी खीर है। यही कारण है कि हमारे पुराने कला मर्मज्ञ भी मौन रहते हैं। इसीलिए हमारे लिए एवं समाज के हर वर्ग के सामने कई प्रश्न खड़े हैं ? जैसे इसका धीरे–धीरे इतना प्रचार कैसे होता जा रहा है ? इस क्रान्ति से संसार भर के चित्रकार कैसे प्रभावित होते जा रहे हैं और इसका कारण क्या है ?

भारत वर्ष में अधिकतर कलाकार वे हैं जो, चित्र तो बना सकते हैं, परन्तु उसको समझा नहीं सकते अर्थात वे शब्दों के प्रयोग से चित्र को पर्दापन करने में असमर्थ है। अब भारतीय चित्रकला को अपना एक सुडौल रूप धारण करना है, वह रूप कैसा हो ? यही भारतीय आधुनिक चित्रकला की समस्या है। इसी समस्या के विभिन्न हल आधुनिक चित्रकला के विभिन्न रूप है। किसी देश या समय की कला उस देश या उस समय का प्रतिबिम्ब होती है या जैसा देश अथवा समय हो वैसी ही उसकी कला होती है। इस समय भारत की कला ही नहीं सभी देशों की कला अपना एक परिवर्तित रूप निर्माण करने की योजना में व्यस्त है, क्या रूप होगा ? कोई नहीं कह सकता ? उसी भाँति आधुनिक भारतीय चित्रकला का परिवर्तित रूप कैसा होगा ? ये भी कोई नहीं कह सकता। प्रत्येक आधुनिक चित्रकार को इसी नये रूप के

निर्माण में लगना है और भारतीय आधुनिक नव चित्रकार इस कार्य में किसी भी प्रकार से पीछे नहीं दिखाई पड़ रहे हैं। भारत के अन्य प्राचीन कालों में शायद भारतीयों का सम्बन्ध संसार की और सभ्यताओं से इतना नहीं था। जितना अब धीरे-धीरे होता जा रहा है इसलिए भारतीय संस्कृति और कला दोनों पर उनका प्रभाव पूर्णरूप से पड़ रहा है। प्राचीन काल में सुविधाओं की कमी के कारण आपसी सम्पर्क इतना नहीं था और उस समय की कला पर संसार के अन्य देशों का प्रभाव उतना नहीं था। यदि आज ऐसी सुविधा की एक देश की सभ्यता और कला पर अन्य देशों का प्रभाव पड़े तो यह स्वाभाविक ही है।[5]

कला में अदृश्य यथार्थ का अंकन -

कला में जो पक्ष बाह्य स्वरूप को प्रभावित करते हैं उनमें से अनेक दृश्यात्मक अनुभवों पर आधारित नहीं है इनके उदाहरणों में आर्थिक परिस्थिति एक है भवन के रूप का विचार समय उसमें अधिक से अधिक प्रकाश वायु तथा श्रृव्यता का ध्यान रखा जाता है। धार्मिक कारण भी कृति का रूप बदल देते हैं। इनसे किसी आकृति का प्रतीकात्मक रूप विकसित होता है। यहूदी तथा मुस्लिम कला में आकृति निषेध के कारण प्रतीकों तथा लिपि के द्वारा अनेक भावों और वस्तुओं को प्रस्तुत किया गया है। ईसा को मछली द्वारा और बुद्ध को वृक्ष, कमल आदि के प्रतीकों द्वारा प्रस्तुत करने के पीछे भी धार्मिक-दार्शनिक कारण रहे हैं। इससे ज्ञात होता है कि कला का अतीन्द्रिय अनुभवों से निरन्तर सम्बन्ध बना रहा है। पौराणिक आकृतियों जादुई भावनाओं, कामाचार तथा यौन भावनाओं, मरणोपरान्त जीवन की कल्पना नक्षत्र विद्या, प्रतीकवाद, रूपक दैत्य कल्पना आदि के पीछे इसी प्रकार की भावनाएँ हैं जिन्होंने कला में अनेक रूपों की सृष्टि की है। व्यक्ति चित्रों के पीदे चरित्र-चित्रण तथा मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का बहुत सहयोग रहा है चरित्र चित्रण ने सामुदिक शास्त्र के सहयोग से मानवाकृतियों के अनेक वर्गीकरण किये हैं भारत तथा यूरोप में इनका

विशेष प्रयोग हुआ है। इस प्रकार प्रायः समस्त प्रकार की वस्तुओं की बाहरी तथा आन्तरिक रचना का कला से सहयोग लेकर ही अध्ययन किया जाता है। इन समस्त बातों का कला के विषयों पर भी बहुत प्रभाव पड़ा है।[6]

वास्तविक कला के द्वारा हम अपने आंतरिक मन से बाह्य जगत का दर्शन करते हैं, तथा भावात्मक कला में हम बाह्य जगत से आन्तरिक मन को देखते हैं। पहली में जो भी चित्रित है स्पष्ट देखा जा सकता है परन्तु दूसरी में जो भी चित्र या आकृति है उसके अंतस में झांकना पड़ता है। स्वतंत्रता दोनों प्रकार के कलाकारों को होती है। आधुनिक कलाकार यह कहता है कि वह एक प्रयोग कर रहा है जिसमें वह अपने मनोभावों को व्यक्त करके आत्मानन्द की प्राप्ति करता है। कुछ कलाकार केवल रंगों के माध्यम से ही अपने भावों की अभिव्यक्ति करते हैं इस प्रकार के चित्रों में आकृति नहीं होती है। केवल रंग के मोटे–मोटे धब्बे होते हैं। कलाकार के अनुसार प्रत्येक रंग का धब्बा कुछ भाव लिये होता है। जैसे लाल रंग जोश तथा वीरता का परिचायक है, पीला ऐश्वर्य तथा सुख का परिचायक है। इसी प्रकार प्रत्येक रंग का महत्व है ऐसी कला को रेब्स्ट्रेक्ट कहकर बुलाया जाता है। इसी प्रकार कलाकार ने अपने मनोभाव जैसे भय, आनन्द प्रेम, दुःख घृणा वात्सल्य आदि को अपनी इच्छानुसार दर्शकों की उपेक्षा करते हुये चित्र के रूप में व्यक्त किया है।[7]

नई प्रवृत्तियाँ –

वास्तव में परम्परागत कला या एकेडमीवाद की जो नवीन पाश्चात्य धारा चली वह कला के आदर्श रूप और पाश्चात्यपन की प्रभावशाली समस्याओं को नहीं सुलझा सकी। इस आन्दोलन में दो विरोधी प्रवृत्तियाँ प्रवाहित हो रही थी इस कारण कलाकार कभी एक और झुक जाते थे और कभी दूसरी और। इस आन्दोलन की नीरसता तथा निर्बलता ने युवा कलाकारों को एक अन्य दिशा की ओर अग्रसर होने के लिए विवश किया। नवोदिक चित्रकारों ने जब रुचि की अवहेलना न कर कला को जनसुलभ और सामान्य बनाने का प्रयत्न किया। इस नवीन प्रतिक्रिया के फलस्वरूप

कलाकारों को ऐकेडमीवाद से हटकर अपनी नूतन प्रवृतियों का दिखाने का अवसर प्राप्त हुआ तथा आकृतियों के निर्माण की चेतना को प्रोत्साहन दिया।[८] तथा मानव संस्कृति में कलात्मक तथा आध्यात्मिक विकास का भी उतना ही महत्वपूर्ण स्थान है जितना वैज्ञानिक उपलब्धियों का। कलात्मक विकास व नूतन प्रवृतियों में मुख्य रूप से साहित्य, चित्रकला अथवा शिल्प स्थापत्य, संगीत, मूर्ति, नृत्य एवं अभिनय का विशेष महत्व है। अतः किसी देश की संस्कृति का अध्ययन करने के लिए उस देश की कलाओं का ज्ञान प्राप्त करना परम आवश्यक है। कला के द्वारा किसी भी देश के सामाजिक दार्शनिक तथा वैज्ञानिक विकास की पूर्ण छवि प्रतिबिम्बित हो जाती है।[९]

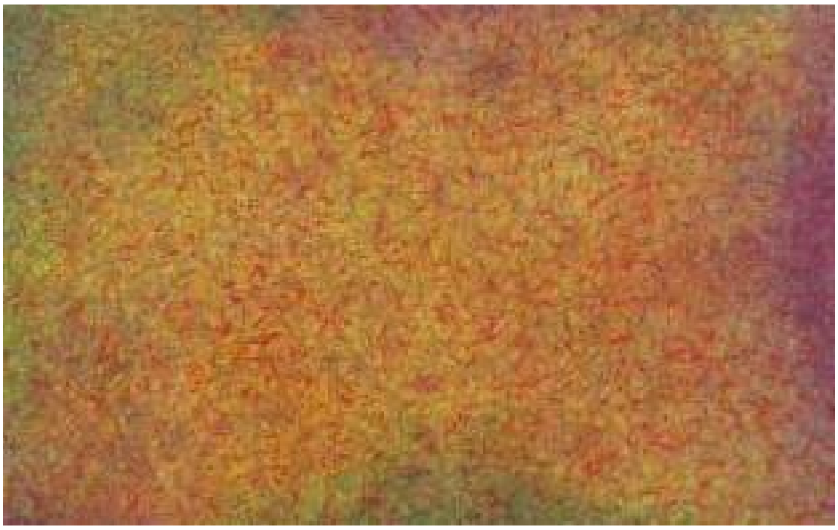

चित्र संख्या – 1 अन्टाइटिल्ड

प्रथम अध्याय

भारतीय आधुनिक कला एवं राजस्थान

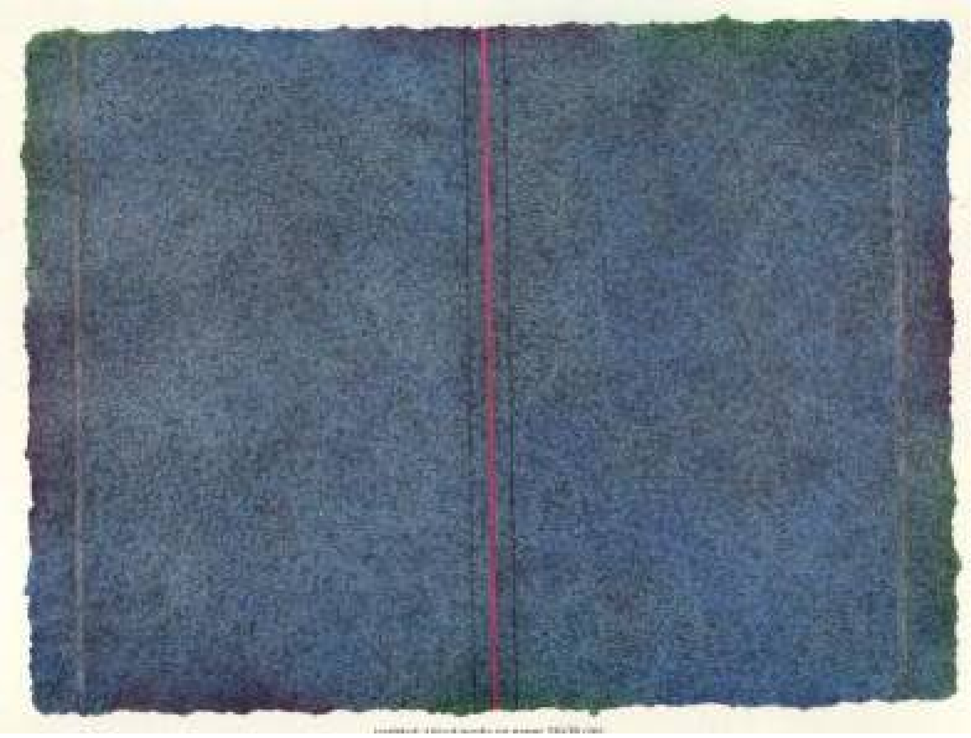

भारतीय आधुनिक कला एवं राजस्थान

आधुनिक शब्द औद्योगिक प्रगति, तकनीकी प्रगति और वैज्ञानिक प्रगति आदि के साथ जुड़ा हुआ माना गया है, किन्तु कला के साथ इसके भिन्न अर्थ है। कला सबसे पहले एक रचनात्मक चेष्टा है और सौन्दर्य प्रदान दृष्टि है। आधुनिक शब्द पिछले 500 वर्षों से भी अधिक समय से इस्तेमाल हो रहा है और कभी नये, कभी पुराने, कभी परम्परा तथा कभी इन सभी को समझने की कोशिश में इस शब्द के अर्थ की झाड़ पौंछ की जाती रही है।

आधुनिकता विशुद्ध भौतिक संदर्भ में हमारे जीवन में वह बदलाव है, जो विज्ञान और औद्योगिकरण की वजह से आया है। आधुनिक कला इस बदलाव के साथ कला में नये रिश्तों की तलाश है। कला में आधुनिकता का एक प्रमुख अर्थ यह है कि मनुष्य अपनी बनायी चीजों और अपने बारे में उपलब्ध नयी पुरानी जानकारियों को किस तरह मानवीय और सुन्दर बनाता है। एक और अर्थ में वर्तमान को भी केन्द्र में रखते हुए सचेत रहना है। इसलिये समकालीन प्रत्यक्ष या तत्कालीन जैसे शब्दों से भी इसका गहरा और सतही सम्बन्ध है।

रचनाकारों ने आधुनिकता को कई तरह से देखा है। जैसे टी.एस. इलियट ने आधुनिकता में क्लासिकी विचारधारा का पुट जरूरी समझा। स्पेण्डर ने आधुनिक और समकालीन में अन्तर किया। हेराल्ड रोजनबर्ग ने नये की परम्परा की ओर ध्यान खींचा।

इस तरह फ्रैंक करमोड ने आधुनिकता को दो वर्गों में विभाजित किया प्राक आधुनिकतावाद व नव आधुनिकतावाद प्राक आधुनिकतावाद प्रयोगात्मक होते हुए भी परम्परा और अतीत से जुड़ा रहा और नव आधुनिकतावाद पूर्णतः परम्परा विहिन और प्रयोगशील रहा है।

आधुनिकता के चिंतन में क्रोंचे और कलिंगवुड ने इसी जमीन का प्रावधान किया था। आधुनिकता के चिंतन में भारतीय संदर्भ में अमृताशेरगिल, रविन्द्रनाथ टैगोर, बेन्द्रे और यामिनी रॉय के आगमन के साथ कला के आधुनिक स्वरुप की शुरूआत हुई और फिर से लोककला की खोज प्रारम्भ हुई। वस्तुओं के सार स्वरूप को प्रकट करने की इच्छा बढ़ी।

20वीं शताब्दी के आरम्भ में जब राष्ट्रीय आजादी का आन्दोलन तेज हो रहा था और राजनैतिक तथा सामाजिक परिवर्तन द्रुतगति से होने लगे, तो भारतीय परिपेक्ष्य में कला चित्रण और उसके सोच में भी समानान्तर रूप से परिवर्तन होने लगे। भारतीय आधुनिक कला विकासक्रम सामाजिक, राजनैतिक वैज्ञानिक और आर्थिक प्रगति की प्रक्रिया के सोपानों का सहगामी रहा है। भारत में आधुनिकवाद या आधुनिकीकरण एक आकस्मिक घटना के रूप में प्रतिपादित होने के लिए ऐतिहासिक प्रक्रिया से गुजरता है।

देश में कलाशिक्षा के प्रारम्भिक काल में लगभग 1850 के आसपास अकादमिक शिक्षा के लादने से चित्रण के तौर तरीकों के लिए कला भाषा विषय वस्तु और कला की समझ में धीमी गति से धुंधले परिवर्तन होने लगे। इनके साथ–साथ एक विरोधी प्रवृत्ति भी उभरने लगी, जो 1920 के बाद बहुत स्पष्ट दिखाई देती है। वह नयी अवधारणा की गहरी तलाश में थी। इस सारी प्रक्रिया में जहाँ अकादमिक या अन्वेषणात्मक पाश्चात्य प्रभावों से सीखने का प्रश्न है। वहीं देश की निकट या सुदूर परम्परा के तत्वों को आत्मसात करने या पुनरीक्षण का प्रश्न भी था।

अधिकांश प्रारम्भिक विदेशी कला–प्राचार्यों ने नये बोध के साथ परम्परा के जीवंत तत्वों को उभारने का प्रयत्न किया और स्वाभाविक भी था, कि मद्रास, कलकत्ता, मुम्बई, लखनऊ आदि अंग्रेजी शिक्षा के केन्द्र तो बने ही सही कला शिक्षा के केन्द्र भी बने जहाँ से परम्परागत कला की अपेक्षा आधुनिक कला चित्रण की शुरूआत हुई।

आधुनिक कला का सूत्रपात/उत्पत्ति –

भारतीय कला इतिहास में 'आधुनिक' शब्द ब्रिटिश घुसपैठ के साथ अस्तित्व में आया। ब्रिटिश कला विद्यालयों के पैटर्न पर भारत के विभिन्न नगरों में खोले गये कला विद्यालयों से इस कला परम्परा की शुरुआत हुई। इन कला महाविद्यालयों का शीर्ष संचालन उनके द्वारा हो रहा था, जो किसी विशेष विचारधारा से सम्बन्ध थे और अनियोजित तरीके से वे उस कला विचार को ही विद्यार्थियों तक पहुँचा रहे थे, जिसे वे स्वयं कला की संज्ञा देते थे।

समकालीन आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर भारतीय परम्परा को आत्मसात करने का सही प्रयास नहीं किया जा रहा था। जिसे ब्रिटिश अकादमिक कला का विशेष रूप माना गया। वह न तो पुरातन से जुड़ी थी और न उस युरोपीय समकालीन कला से, जिसमें साहस और अन्वेषण का अद्वितीय गहरा बोध था।

आधुनिक कला का प्रारम्भ में स्वरूप जैसा भी रहा हो, वह आजादी के बाद पश्चिमी कला के समानान्तर चलती रही। आरम्भिक नव अकादमिक कला शिक्षा एवं प्रवृत्तियाँ भारतीय तथा पश्चिमीकरण के बीच उपजी दिक्कतों को हल नहीं कर सकी। कला में विरोधी प्रवृत्तियाँ सामानान्तर चलती रही, जो भारतीय आधुनिक कला के रूप में खड़ी हुई।[10] 19वीं सदी के प्रारम्भ से परम्परागत सामाजिक व धार्मिक निष्ठाऐं टूट रही थी, एवं आधुनिक दर्शन की स्वीकृतियों में मानव का स्वतंत्र, स्वयंपूर्ण व बहुरंगी व्यक्तित्व, उसकी मनोवैज्ञानिक चिकित्सा एवं एन्द्रिय अनुभूतियों के पीछे छिपे हुए रहस्य की खोज रही है।

ये तत्व बाह्य उद्देश्यों के बन्धनों से मुक्त होकर कार्यान्वित हो रहे थे। कलाकार का व्यक्तित्व स्वतंत्र होते ही सृजन क्षेत्र में कलाकार की आत्मिक अभिव्यक्ति व विशुद्ध सौन्दर्य की खोज के बीच द्वंद हुआ। ऐसी द्वन्द्वात्मक अवस्था में आधुनिक कला गतिमान हो गयी व उसके विभिन्न पहलू रूपायित हुए। आधुनिक कला के

विरोधियों के साधारणतः दो वर्ग पाये जाते हैं। एक वर्ग आधुनिक कला को तांत्रिक व दुर्बोध समझकर इसके बारे में विचार ही नहीं करता तो दूसरा वर्ग ऐसे दर्शकों का है, जो उसको पाखंड या विकृतिजनित मानकर उसकी निन्दा करने को उद्दत होता है।

आधुनिक कला का अध्ययन करते समय 'आधुनिक' शब्द को केवल काल निर्देशक मानना भ्रममूल होगा। वस्तुनिरपेक्ष सौन्दर्य, आत्मिक अनुभूती, अतियथार्थ कल्पना आदि कलांतर्गत सृजनशील तत्वों का स्पष्ट व विशुद्ध रूप आधुनिक काल की जिन कला शैलियों में दृष्टिगोचर हो गया है। उन सभी कला शैलियों को आधुनिक कला में सम्मिलित करते हैं। अर्थात् ये सभी तत्व सृजन प्रवृत्ति के अविभाज्य अंग होने के कारण न्यून व अधिक मात्रा में प्राचीन मध्ययुगीन एवं समकालीन सभी कला शैलियों में विद्यमान होते हैं। 20 से 30 सहस्त्र वर्ष पूर्व की वन्य मानव की कला में ये तत्त्व इतने स्पष्ट रूप से प्रकट है कि देखने में यह कला आधुनिक कला के ही स्वरूप बन गई। इसी कारण प्रसिद्ध कला समीक्षक हर्बर्ट रीड ने लिखा है कि– "आधुनिक कला तीन हजार वर्ष प्राचीन है। आधुनिक कला का अध्ययन करते समय हम देखेंगे की उपर्युक्त कलाओं से आधुनिक कलाकारों को अपरिमित प्रेरणा मिली है।"

आधुनिक कला रूपांतर्गत तत्वों के शास्त्रीय अध्ययन का परिणाम है या कलाकार की व्यक्तिगत भावनाओं की अभिव्यक्ति है या उसमें कलाकार द्वारा की गयी आंतरिक सत्य की खोज है।

भारतीय आधुनिक कला एवं परिपेक्ष्य –

समकालीन नैसर्गिकतावादी कला कलामान की दृष्टि से आधुनिक होते हुए भी उसको आधुनिक कला में समाविष्ट नहीं किया जा सकता, क्योंकि वह बाह्य उद्देश्य से सीमित है। जिन कला तत्त्वों व सृजनात्मक सहज प्रवृत्तियों को प्राचीन कलाकारों ने साधन के रूप में अपनाया, वे आधुनिक कलाकार के साध्य बन गये हैं।

प्रारम्भ में ही आधुनिक कला की सारासार–चिकित्सा या तत्त्व विवेक करने से यदि पूर्व–परिचय कराया जाये तो वह अध्ययन में अवश्य सहायक होगा। 19वीं सदी के करीब धर्म, राजा एवं धनिक वर्ग का आश्रय नष्ट होने से कलाकार बाह्य बन्धनों से अधिकांशत मुक्त होकर स्वतंत्र विचार से कलानिर्मित करने लगा। कला के लिए कला यह ध्येय वाक्य बन गया। कलाकार ने अनुभव किया कि कलांतर्गत गुणों के विकास या कलाकार की आत्मिक अभिव्यक्ति का विषय के परिणाम कारक चित्रण से समन्वय दुष्कर है। विषय का होना उसमें बाधा डालता है, इसलिये धीरे–धीरे उसने विषय को कलाकृतियों से पूर्णतया हटाकर वस्तुनिरपेक्ष कलाकृतियों का निर्माण आरम्भ किया। इस प्रकार दृष्टिकोण में आमूल परिवर्तन होते ही अपने नये उद्देश्यों की पूर्ति हेतु कलाकारों ने संशोधन–वृत्ति से कला की चिकित्सा शुरू की। कलाकार के स्वतंत्र विचारों एवं अनुभूतियों का दर्शन आधुनिक कला का महत्त्वपूर्ण अंग बन गया।

भारतीय आधुनिक कला का इतिहास पढ़ते समय हम स्पष्ट रूप से देखते हैं कि, भारतीय आधुनिक कला को पश्चिमी कलाओं से भी प्रेरणा मिली है। इसके विपरित समकालीन एशियाई कलाकार यूरोपीय व अमरीकी आधुनिक कला के सिद्धान्तों व अंकन पद्धतियों का अध्ययन करके कला निर्मिती करने में सफलता मानते हैं।

20वीं सदी के मध्य तक कला को हस्ताक्षर का महत्व प्राप्त होकर कलाकृतियाँ व्यक्तित्व निर्देशक बन गयी। धीरे–धीरे कला का प्रतीकात्मक महत्व नष्ट होता गया। इस सम्बन्ध में पिकासो का कथन था कि – "आजकल कोई कला शैलियाँ नहीं है, केवल कलाकार ही कलाकार है।" ऐसी परिस्थिति में आधुनिक कला की कोई भी परिभाषा असंभव है।[11]

इतिहास पर नजर डालें तो हम देखेंगे की कलाकार राजकीय संरक्षण या धर्म के माध्यम के रूप में बंधा हुआ था। उन बंधनों में भी उसने स्वतंत्र अभिव्यक्ति के प्रयास किये, किन्तु ऐसे कलाकारों को कठिनाइयों से गुजरना पड़ा। कलाकारों के

प्रयासों से कला में भी नदी की भाँति प्रवाह बना रहा, और कलाकार अपनी रचनाओं में पूर्ण स्वतंत्रता महसूस करने लगा, जिससे नित नये प्रयोग करने की प्रवृति विकसित हुई और कलाकारों ने अनेकों माध्यमों को अपनी अभिव्यक्ति के लिए विकसित किया। ब्रिटिश साम्राज्य के प्रभाव से भारतीय कला में काफी परिवर्तन आया। त्रिआयामी स्पेश के प्रति रूचि विकसित हुई। कला के स्वतंत्र विकास में ब्रिटिश राज्य प्रशासन शैली अत्यधिक बाधक रही। देश में स्वतंत्रता आन्दोलन व भारतीय सामाजिक चेतना आन्दोलन आदि के परिवेश में आधुनिक कला जन्मी। यह स्थिति पाश्चात्य देशों से भिन्न थी। ई.वी. हैवल, आनन्द कुमार स्वामी, अवनीन्द्रनाथ ठाकुर व रवीन्द्रनाथ टैगोर ने भारतीय कलाकारों में फिर से आत्मविश्वास जगाया और उन्हें भारतीय परम्परा के गौरवमयी व गौरवशाली इतिहास से साक्षात्कार कराया। इसके साथ जापान तथा चीन जैसे सुदूरपूर्वीय देशों के कलाकारों से भी आदान–प्रदान हुआ। इससे जो सबसे बड़ा लाभ हुआ कि भारतीय कलाकारों को विक्टोरियन कला परम्परा के अतिरिक्त भारतीय, चीन व जापानी कार्य पद्धति का ज्ञान हुआ, जिससे नई वॉश पद्धति एवं टैम्परा में अवनी बाबू तथा नन्द बाबू ने नई संभावनाऐं जगाई। इन कलाकारों ने भारतीय पारम्परिक संयोजन व कार्य पद्धति को नये आयाम दिये। नई वॉश व टैम्परा पद्धति में इन कलाकारों ने अपने चित्रों में भावात्मक संवेगों से विभिन्न भारतीय विषयों को रेखाओं द्वारा बांधा। विनोद बिहारी मुखर्जी ने म्यूरल व विभिन्न चित्र तकनीकों को गहराई से समझा और बड़े आकारों को सरल व सहज रूप में प्रयोग किया। रामकिंकर बैज ने शिल्प एंव चित्रों की दुनियाँ में नई शक्ति संचारित की। पाश्चात्य कला इतिहास पर दृष्टि डालें तो हम देखेंगे की विषय व रूपाकारों का बदलाव अधिक विविधता नहीं ला पाया, किन्तु बीसवीं सदी का कलाकार अपनी पहचान बनाये रखने के लिए संघर्षरत रहा। जिससे उसकी दृष्टि के केन्द्र बिन्दु बदलते रहे।

भारतीय कलाकारों पर हुए तो हम देखेंगे की विषय व रूपाकारों का बदलाव अधिक विविधता नहीं ला पाया, किन्तु बीसवीं सदी का कलाकार अपनी पहचान बनाये रखने के लिए संघर्षरत रहा। जिससे उसकी दृष्टि के केन्द्र बिन्दु बदलते रहे।

भारतीय कलाकारों पर हुए पाश्चात्य कलाकारों के प्रभावों से भारतीय कलाकारों के सम्बन्ध में अनेक बार यह प्रश्न उठाये गये कि उनके चित्रों में भारतीयता की जहाँ तक बात है उसका अर्थ यह कदापि नहीं लगाना चाहिए की यहाँ के पाम्परिक मुहावरों की पुनरावृत्ति है, कई कलाकरों ने पारम्परिक प्रतीकों का प्रयोग किया। कुछ ने लोक कला के सरल आकारों का प्रयोग किया, किन्तु जिन्होंने इन तत्वों को आत्मसात नहीं किया उनके चित्रों में कृत्रिमता बनी रही। भारतीय परिप्रेक्ष्य के प्रति संवेदनशील कलाकार के चित्रों में चारों ओर का वातावरण संस्कार, सामाजिक परिवेश का प्रतिबिम्ब स्वतः ही आयेगा। चित्र किसी भी मनोवृत्ति, शैली या तकनीक में किसी भी उद्देश्य से बनाया गया हो। उसका कोई भी विषय हो पर कलाकारों को मानव अनुभव की मूल संवेदनशीलता को समझना होगा और उसके साथ सामंजस्य रखना चाहिए।[12]

राजस्थान में आधुनिक कला का सूत्रपात –

राजस्थान की आधुनिक कला का इतिहास, भारतीय आधुनिक कला का सहगामी रहा है। राष्ट्रीय स्तर पर कला में जो आन्दोलन हुए और नतीजन कला में जो परिवर्तन एवं प्रभाव आये, इन सभी के कारण तत्कालीन राजस्थान की कला में सकारात्मक परिवर्तन होने लगे और चिन्तन का औपनिवेशिक ढांचा जो, अब तक चरमरा गया था। यह धारणा प्रबल हुई कि आधुनिक बौध सम्पन्न कलाकार बने बनाये साँचों में सृजन नहीं करता। सृजक का काम है कि इन साँचों को तोड़ता रहे और भाषा को मुक्त करता रहे। और फिर से पूर्वग्रह बनेंगे और साँचे तैयार हो जायेंगें, किन्तु वे फिर तोड़े जायेंगे। इसी विचार धारणा के साथ आजादी के पूर्व तक राजस्थानी परिदृश्य में आधुनिक कला प्रवेश कर चुकी थी।

राजस्थान के बुद्धिजीवी वर्ग ने अपनी विलक्षण वैयक्तिक्ता की आधुनिक संकल्पना को आत्मसात कर अपनी पहचान बनाने की जरूरत को समझा। अपनी परम्परा से सार्थक संवाद करना स्वतंत्र रचना के आवेग में अवांछनीय हस्तक्षेप को रोकना तथा अपने स्त्रोतों के विभिन्न तत्वों को तराशना उसकी कलाधर्मिता के अवयव हो गये।

पाश्चात्य बुद्धिवाद से प्रभावित राजस्थानी आधुनिक कलाकार साहसिक रूप से व्यक्तिवादी, आंतरिक रूप से जागरूक चुस्त, अपने वातावरण के विरूद्ध संघर्षरत, औपचारिकता से यथार्थवादी, तार्किक आदि जो एक प्रकार से पश्चिमी बुद्धिवाद की भावभंगिमाऐं थी। इत्यादि से राजस्थानी कलाकार गहरे में प्रभावित हुआ। साथ ही पश्चिमी राजनैतिक और सामाजिक विचारधाराओं के दबदबे ने रही सही कसर पूरी कर दी। राजस्थान के कलाकार का अर्न्तमुखी चिन्तन और अपेक्षाकृत आध्यात्मिक रूझान गौण हो गया, जो होना भी चाहिए था। क्योंकि प्राचीन भारतीय कला जैसा कि चार्ल्स फाबरी ने लिखा है–

“भारती कला के बारे में जो धारणाऐं उसके मूल्यांकन हेतु बनाई गई। वे कई बार भारतीय कला को उसकी स्वायत्तता नहीं दे सकी। कृति की गुणवत्ता उसकी कलात्मकता और सौन्दर्य बोध में है न कि उसकी धार्मिक, आध्यात्मिक और नैतिक होने में।”

जैसा की प्राच्यविदों और कला इतिहासकारों ने अक्सर इसी रूप में बखान किया है। आधुनिकरण एवं पुनर्जागरण की प्रक्रिया ने राजस्थानी कला, संस्कृति एवं साहित्य को नवीन मोड़ पर ला खड़ा किया है। आधुनिक राजस्थानी चित्रकला ने थोड़ी सी अवधि में एक लम्बी यात्रा तय की। नवीन सौंदर्य बौध से युक्त, वर्जना मुक्त, यथार्थवादी कलाभिव्यक्ति ने अमित सम्भावनाओं के द्वार खोल दिये हैं। अब चित्रकला का अर्थ मनोरंजन न रहकर चेतना को झकझोरती मानवीय संवेदनाओं से पूर्ण और बहुर्मुखी क्रिया से हो गया। वास्तव में स्वतंत्रता के बाद भारतीय चित्रकला त्रिविध धारा में प्रवाहित हुई। यही प्रवृत्तियाँ राजस्थान प्रदेश की कला में रही। कुछ कलाकार परम्परा से ही चिपके रहे और इनमें से जिन्होंने पारम्परिक चित्रों में नवीनता और समकालीन जाग्रति के स्तर पर आधुनिकता पैदा करने की कौशिश की, किन्तु उनकी कला को आधुनिक कला के मानदण्डों पर खरा नहीं कहा जा सकता। दूसरी धारा के कलाकारों ने पारम्परिक विकल्पों के मूर्त स्वरूपों को विरूपित कर सामाजिक संदर्भों

से जोड़कर चित्रांकन किया। इनमें बहुत से चित्रकारों ने आदिवासी समाज, मछुआरे, किसान, ग्रामीणजन, श्रमिक वर्ग मध्यम वर्ग का अंकन कर यहाँ के प्राकृतिक दृश्यों तथा स्थापत्य शिल्प का रूपांकन कर अपनी पहचान बनाई। तीसरी धारा में विशुद्ध रूप से अमूर्तन चित्रण करने वाले वे कलाकार थे, जिन्होंने व्यक्ति की मनोभावनाओं को अभिव्यक्ति देकर, जीवन की धुंध, घुटन, संत्रास, भागमभाग, अर्न्तमन की मार्मिक व्यथा को व्यष्टि रूप में अंकित कर राजस्थान की प्रादेशिक कला को राष्ट्रीय और अर्न्तराष्ट्रीय धारा से जोड़ दिया। इन कलाकारों ने अपने चित्रण, तकनीक, माध्यम एवं विषयों को लेकर वे सभी परम्परागत उपादान नकार दिये, जो उनकी मुक्त अभिव्यक्ति और सृजन में सीमाऐं खड़ी करते थे। इस दौर में राजस्थानी आधुनिक कलाकार एक निर्विकार फलक पर निर्बाध, अभिवयक्ति हेतु निर्बन्ध औजार वाला कलाकार था। वह खुले आकाश में विचरण करने वाले विहंग की भांति ऊँचाईयों से अपने नीड़ को ध्यान में रखते हुए, उड़ने वाला पक्षी था। उसकी कला में सबसे अधिक असर था–धनवाद, अभिवयंजनावाद, अतियथार्थवाद तथा अमूर्तवाद का।

राजस्थान में आधुनिक कला के सूत्रपात के कारण –

(i) लघुचित्र शैलियों के सामन्ती संरक्षण की समाप्ति के साथ कलाकारों का विभिन्न प्रभावों के अर्न्तगत स्वतंत्र कला चित्रण करना।

(ii) 20वीं सदी के आरम्भ से राष्ट्रीय स्तर पर घटित कला–आन्दोलनों द्वारा रूढ़ परम्परा और प्रचलित औपनिवेशिक कला प्रवृत्तियों का तीव्र विरोध करना तथा विचार, विषय और तकनीक की दृष्टि से परिवर्तन की ओर आकर्षित होना।

(iii) पश्चिमी कला की आयातित विचारधाराओं, कलादर्शन और कला में बदलते वादों से प्रभावित होना।

(iv) विदेशी ख्यात कलाकारों की चित्रण प्रक्रिया में सौंदर्य बोध जैसे आकार तथा स्थान संयोजन से अभिभूत होकर स्थानीय विषयों को नयी दृष्टि से देखना।

(v) राजस्थानी कलाकारों का भारतीय और विदेशी कला शिक्षा संस्थानों से शिक्षित–प्रशिक्षित होकर स्वदेश लौटना।

(vi) सदी की तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं वैज्ञानिक क्रांतियों की उथल–पुथल से प्रभावित होना। राजस्थान की कला के आधुनिकीकरण की पृष्ठभूमि में इनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका। उपनिवेशवाद से लोकतांत्रिक वातावरण में स्वतंत्र और स्वच्छंद अभिव्यक्ति के लिये प्रोत्साहित करने वाली भावभूमि का निर्माण होना।

स्वतंत्रता के पश्चात आधुनिक राजस्थानी चित्र सृजन की तकनीक व विचारधारों के आधार पर हम स्पष्ट रूप से तीन चरणों में बांट सकते हैं।

प्रथम – (1935–55) आजादी से एक दशकपूर्व व एक दशक के बाद का समय।

द्वितीय – (1955–65) अकादमी की स्थापना के आस–पास का समय तथा कतिपय राजस्थान के नवोदित कलाकारों का पश्चिमी कला शिक्षा और भारतीय कला शिक्षण संस्थानों में प्रशिक्षित होकर मातृभूमि में पदार्पण का समय।

तृतीय – (1965–2000) आधुनिक कला व समकालीन कला का दौर।

1940 से 1955 के डेढ़ दशक की अवधि में कलाकारों में मुख्यतः दो प्रवृत्तियाँ प्रचलित थी। प्रथम तो वे कलाकार थे जो पश्चिमी कला तकनीकों से अनुप्रेरित चित्रण कर रहे थे, तथा दूसरे वे जो बंगाल स्कूल के अवनीन्द्रनाथ ठाकुर के कला आन्दोलनों से प्रेरित होकर 'वॉश प्रणाली' का प्रयोग व भारतीय कथावस्तु का उपयोग कर रहे थे।

अवनीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा आरम्भ की गई विशिष्ट भारतीय शैली रेखीय और रंग की कमनीयता तथा कलात्मक रूमानीपन के लिए प्रसिद्ध हुई। जिसका स्पष्ट प्रभाव इन कलाकारों में देखा जा सकता था। पहली प्रवृत्ति से अनुप्रेरित कलाकारों में स्व. भूरसिंह शेखावत, बी.सी.गुई, द्वारका प्रसाद शर्मा, पी.पी. कोठावाला आदि

कलाकार थे। दूसरी प्रवृति से प्रवर्त कलाकारों में पद्म श्री कृपालसिंह शेखावत, घीरेन घोष, देवकीनंदन शर्मा, गोवर्धनलाल जोशी और पी.एन. चोयल प्रमुख थे। ये कलाकार नन्दलाल बोस से प्रेरणा पाकर अपनी कला में शनैः शनैः परिवर्तन के साथ चित्रण करते रहे।

1955 के आसपास राजस्थानी कला में एक महत्त्वपूर्ण मोड़ आया। इस समय तक कई युवा कलाकार भारत के विभिन्न कला संस्थानों से शिक्षा प्राप्त कर अपनी भूमि को लौट चुके थे। कुछ कलाशिक्षा पूरी कर रहे थे। नतीजन वैचारिक स्तर पर कला के सम्पूर्ण इतिहास में यह सबसे अधिक संक्रामक काल भी कहा जा सकता है। क्योंकि इस समय संरचना या डिजाइन को लेकर अनेक भ्रांतियाँ पैदा हो गई थी। ऐसी कोई एक आदर्श विचारधारा तथा तकनीक नहीं थी। जिसे युवा कलाकार ग्रहण कर अनुशीलन करे। तत्कालीन कलाकार पश्चिमी प्रभाव को आधुनिक कला का सूचक मानकर तथा प्रख्यात भारतीय कलाकारों से भी प्रेरणा ग्रहण कर अनुकरण करने लगे। तकनीक तथा डिजाइन का अंधानुकरण भी खुलकर किया गया। यह कहा जा सकता है कि यह वक्त छद्म आधुनिक कला प्रयोगों का था। राजस्थानी कला के इस दौर में सबसे घातक प्रभाव जर्मन अभिव्यंजनावादी कला प्रवृत्ति का पड़ा। जर्मन अभिव्यंजनावादियों ने विश्वयुद्ध से पीड़ित मानसिकतावश रंगों से तीक्ष्ण मनोवैज्ञानिक प्रभाव पैदा करना और तद्नुरुप चित्र संरचना की। इससे अभिव्यंजना महत्त्वपूर्ण और डिजाइन गौण हो गयी थी। राजस्थानी कलाकारों ने इन कलाकारों के आयातित छापों की अत्याधुनिकता और उत्प्रेरक तत्वों को जाने बगैर असंतुलित चित्र रचनाऐं की। कलाकारों का एक ऐसा वर्ग भी था जो पश्चिमी कला शैलियों का विरोधी था। उन्होंने आदर्श अनुकरण के लिए बंगाल शैली व आंशिक राजस्थानी चित्रशैलियों को अपनाया। यह स्वदेशी मोह का सतही अहम था। किन्तु ऐसा नहीं कहा जा सकता कि कुछ कलाकार अपनी प्रतिभा, खुली दृष्टि, कला शिक्षा के प्रभाव वश इस दौर में भी इस प्रांत की कला में सजग तार्किक और प्रयोगशील कला का वातावरण निर्मित कर रहे थे।

राष्ट्रीय दृष्टि से आजादी की प्राप्ति का नशा, स्वदेशी का बोलबाला, सामन्तशाही के उन्मूलन से मानवीय अस्मिता की स्वच्छन्दता का भान और लोकतांत्रिक जीवन शैली के प्रादुर्भाव से प्रेरित नये वातावरण में राजस्थानी कलाकारों के लिए भी यह ताजी हवा में सांस लेने का समय था। 1965 ई. तक आते–आते कला रचना के आवेग तेज और तीक्ष्ण हो गये। अकादमी की स्थापना हो चुकी थी। महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में कला की उच्च शिक्षा दी जाने लगी और पाठ्यक्रम में बहुसंस्कृतीय कला शिक्षा जिसमें यूरोप, अमेरिका, एशिया आदि महाद्वीपों की प्राचीन और अर्वाचीन कलाओं के ऐतिहासिक एवं अन्वेषणात्मक अध्ययन को शामिल किया गया। राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित देशी–विदेशी 'त्रिनाले' विनाले कला प्रदर्शनियों का सूचनात्मक संज्ञान राजस्थानी कलाकार को होने लगा था। यह राजस्थान की आधुनिकता के बढ़ते सोपानों की आधार भावभूमि थी। यह कला के क्षेत्र में नवजागरण काल था। जिसमें कलाकारों ने अपने कृतित्व एवं सृजन में निजी शैली माध्यम, तकनीक द्वार ब्यूनता और विविधता का प्रदर्शन किया, उनकी रचनात्मकता में सजकता तथा अभिव्यक्ति में सौंदर्यबोध का तीखा तेवर था।

कलाकार आत्मपरक और अभिव्यंजनावादी और कुछ सीमा तक अमूर्तवादी हो गया था। अब अनुभव आधारित विषयों को ही उसने अपने आकार और कन्टेन्ट में आजमाया। आरम्भ में आधुनिक राजस्थानी कला में सबसे अधिक प्रभावित करने वाली पश्चिमी कला धाराऐं धनवाद, अभिव्यंजनावादी, अतियथार्थवादी एवं अमूर्तनवादी रही है।

पश्चिम में धनवाद कला के क्रान्तिकारी परिवर्तनों में प्रथम ठोस प्रयास रहा। नियमों की जटिलता और कला के रूढ़ दर्शन को तिलांजलि दे दी गई थी। धनवाद के साथ फाववाद, भविष्यवाद, भंवरवाद, सुरीलवाद, किरणवाद, सर्वोच्ववाद, विशुद्धवाद, रचनावाद, नवलचीलवाद, दादावाद, अतियथार्थवाद एवं वस्तुनिरपेक्षवाद जैसी वैचारिक धारायें 1945 ई. तक विश्वकला में प्रचलित हो गई थी। कला अपनी

क्षैत्रियता से निकलकर विश्वफलक पर अर्न्तराष्ट्रीयता से जुड़ गई। कान्डिस्की, मेलविच, मोन्द्रियाँ जैसे अन्य कलाकारों ने कला के अविश्वसनीय अमूर्त संसार से कला जगत का साक्षात्कार कराया। कला के अमूर्त आन्दोलन में जितने रूप सामने आये, उसमें प्रमुख वस्तुनिरपेक्ष कला, अभिव्यंजनावाद, एक्शन पेन्टिंग, प्रभाववाद, अनियंत्रित कला, क्षैत्रियकला, रंग क्षैत्रियकला, कठोर किनार चित्रण, क्रमबद्ध चित्रण, आकामरित पट्ट, मनोवर्द्धक कला, अक्षरवाद आदि के माध्यम से कलाकारों ने समसामयिक कला आन्दोलन को समृद्ध किया और अभिव्यक्ति के अनगिनत मार्ग खोलें।

आधुनिक राजस्थान में कला अकादमी की स्थापना –

सामंती कला संरक्षण के समाप्त हो जाने बाद स्वाधीन राजस्थान में कला के प्रति सामाजिक उपेक्षा बढ़ती गयी। इस काल में ऐसा कोई स्थायी मंच या संस्थान नहीं था, जो कला प्रवृत्तियों के प्रोत्साहन एवं संवर्धन हेतु सुचारू रूप से कार्य करे। आजादी के करीब एक दशक तक इस प्रदेश में कला की अकादमिक शिक्षा छोटे–बड़े नगरों में कार्यरत कलाकार और उनकी कलाभिव्यक्ति के प्रयोग अनेक दिशाओं में बिखरे हुए चल रहे थे। ऐसी दशा में कलाओं के क्षेत्र में की गई प्रवृत्तियों को प्रोत्साहित करने, उन्हें एक सूत्र में बांधने तथा देशीय सांस्कृतिक एक्य को सम्बन्धित करने के उद्देश्य से प्रदेश में 1957 ई. में ललित कला अकादमी की स्थापना की गई। अकादमी की स्थापना से राज्यों के कलाकारों को एक ऐसा मंच प्राप्त हुआ, जिसकी गतिविधियों से राजस्थान की आधुनिक कला को बढ़ावा मिला। अकादमी द्वारा आयोजित वार्षिक कला प्रदर्शनियों, कला प्रतियोगिताओं ने जहाँ एक ओर कलाकारों को जागरूक एवं प्रोत्साहित किया, वहीं समाज में कलाकर्म के प्रति आकर्षण बढ़ा तथा इसे एक आदर सूचक महत्त्वपूर्ण गतिविधि के रूप में स्वीकृत किया जाने लगा। जब की विगत सदी में कलाकार की हैसियत समाज में एक कारीगर, चतारा, क्राफ्टमैन से अधिक कुछ नहीं थी। अकादमी की गतिविधियों ने न केवल कलाकारों

को कला चित्रण वरन् सामयिक राष्ट्रीय और अर्न्तराष्ट्रीय कला प्रगति एवं विचारों से अवगत कराने हेतु प्रकाशन का विशेष कार्य आरम्भ किया।

प्रारम्भ में अकादमी की कला प्रदर्शनियों में पारम्परिक तर्ज पर परिवेशगत प्रकृति तथा आकृति परक चित्रण को विशेष प्रोत्साहन दिया जाना दिखाई देता है, सन् 1959 ई. से राजस्थान में आधुनिक कला को एक व्यापक क्षेत्र मिला। वह कई रूपों में तीव्रता से प्रकट होने लगी। कलाकार अमूर्तन की ओर प्रवृत्त दिखाई देते थे, जिनकी कृतियों में नवीन प्रयोग तथा पूर्ण अमूर्तता के नाम पर आकृतियों में 'डिस्टोर्शन' झांकने लगा था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे कलाकार अमूर्तन के प्रति आशंकित दबे पाँव बढ़ रहा था लेकिन आकृति मूलक चित्रण यथार्थ से मुक्त नहीं हो पा रहा था। किन्तु कलाकारों का एक ऐसा समूह भी उभर कर सामने आया, जिसने सामाजिक अस्वीकृति तथा कला जगत की उदासीनता के बाद भी अमूर्तांकन को ही अपनाया। राजस्थान की आधुनिक कला के शुरुआती दौर के अधिकांश प्रमुख कलाकार बीसवीं सदी के प्रथम और दूसरे दशक में पैदा हुए। ये कलाकार अपने शैशव काल में देश की आर्थिक विपन्नता मानव मूल्यों के अधःपतन के नाटकीय दृश्यों से भी गुजरे। उस समय राजस्थान में कोई कला बाजार भी नहीं था, जो प्रवृत्ति विशेष या नवीनता को प्रोत्साहित कर सके। राजस्थानी कलाकार मुंबई, कलकत्ता, दिल्ली जैसे महानगरीय कला दृश्य को आदर्श मानकर आधुनिक होने की कोशिश कर रहा था। जिसका कोई स्पष्ट रूप रेखांकित नहीं किया जा सकता था।[13]

(2) राजस्थान की समसामयिक कलाधारा में अमूर्तवाद –

(क) समसामयिक कलाधाराः –

राजस्थान की कला परम्परा आरम्भ से ही समृद्ध रही है। जयपुर, बीकानेर, किशनगढ़, अलवर एवं बूंदी आदि की विभिन्न शैलियों में बने कलात्मक लघुचित्र राजस्थान द्वारा कला जगत को दी गई अनूठी भेंट है। लघु चित्रों की यह परम्परा विश्व

कला में बेजोड़ है लोक कला के क्षेत्र में भी राजस्थान की देन अनुपम है, यहाँ के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन में लोक कला के विविध रूपों एवं रंगों को उजागर होता हुआ देखा जा सकता हैं।

राजस्थानी मांडना, मेंहदी, गोदना आदि लोक अलंकरण की अनेक शैलियाँ राजस्थान में आज पूर्ण जीवित है और यहाँ की कला परम्परा को समृद्ध बना रही है। विद्वान कला समालोचक वाचस्पति गेरोला ने एक स्थान पर लिखा है– भारतीय कला के इतिहास में राजस्थान के कलाकारों की देन अनुपम है एवं अद्वितीय है। मोहक वातावरण और प्राकृतिक रूप निर्माण के कारण कला एवं काव्य के उद्भव के लिए राजस्थान की धरती स्वाभाविक रूप से उपयुक्त रही है।

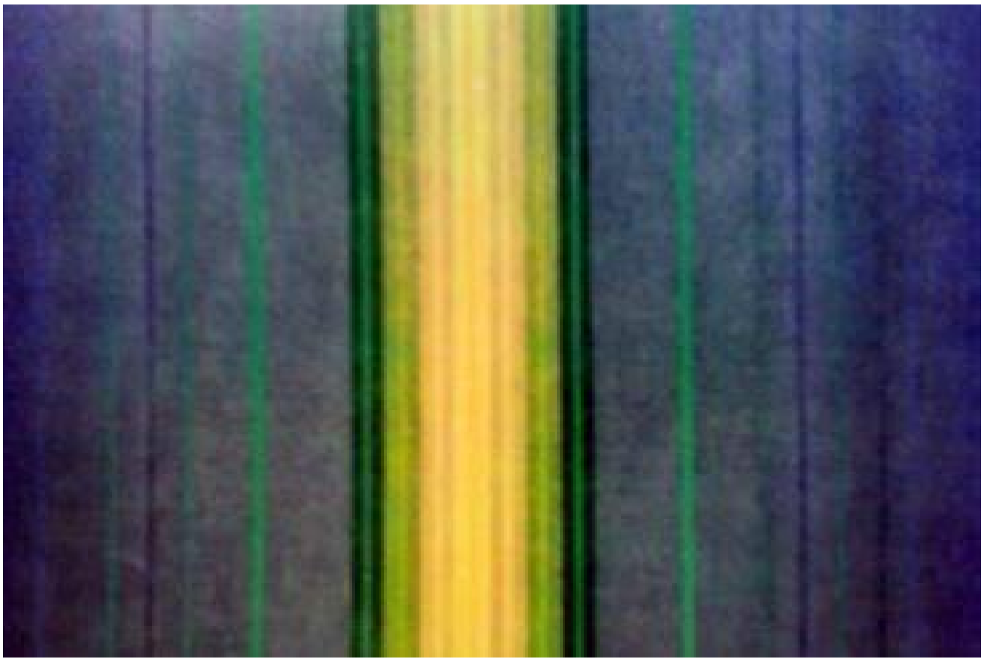

चित्र संख्या – 2 अन्टाइटिल्ड

विगत पाँच दशकों में राजस्थान की कला का स्वतंत्र रूप से विकास हुआ है। राज्याश्रयी वातावरण से निकलकर यहाँ के चित्रकारों ने स्वयं में सृजनात्मक तत्वों को संजोकर उसे प्रयोग के आधुनिक पथ पर अग्रसर किया है। यह समय अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ है। इस अवधि में जो प्रमुख कला शैलियाँ विकसित हुई। उन

पर विचार कर लेना समीचीन होगा। विगत चार दशकों में राजस्थान में मुख्यतया अग्रांकित तीन प्रमुख चित्र धाराओं में काम हुआ है। ये धाराऐं–यथार्थवादी, परम्परावादी और अमूर्तवादी है। आधुनिक प्रयोगवादी कला के अर्न्तगत ग्राफिक शैली पर भी बहुत से कलाकारों द्वारा विविध चित्र बनाए गए हैं।

(ख) अमूर्त चित्रांकन का परिदृश्य –

कला मानव की कहानी है दर्पण है अनुभवों का मूर्त रूप है। जीवनवाहिनी है, भावों का प्रदर्शन है, एक स्वपनित संसार है। जो हमें शिव व सुंदरम से साक्षात्कार करवाता है। क्रिया कलापों से मानव सदैव नवीनता की तलाश में प्रयत्नशील रहता है। कुछ प्राप्त करना है व पुनः नवीनता की तलाश में संघर्ष आरम्भ कर देता है। यहाँ क्रिया आदि काल से कला जगत में कलाकारों द्वारा दोहराई जा रही है। जिसका इतिहास साक्षी है, कला क्रम में मूर्त–अमूर्त का सामंजस्य एवं द्वन्द्व सदैव चलता रहा है। अमूर्त विचारों भावों एवं कल्पनाओं को फलक पर रूपाकारों के माध्यम से मूर्त रूप देने में कलाकार ने कई तेवर दिखाए हैं। यथार्थ को दर्शाने के समस्त प्रयासों पर कैमरे के आविष्कार ने प्रश्न चिन्ह लगा दिया। कलाकार ने अपने अस्तित्व को बनाये रखने के अनेक प्रयास किये जो मूलतः यूरोप की धरती पर होते रहे। 20वीं सदी तक आते–आते कलाकार प्रकृति एवं मानव देह को कलासृजन का आदर्श मानने की प्रवृत्ति का विरोध कर एक ऐसे कला संसार में प्रवेश करता है जो इससे पूर्व मात्र अभिप्रायों एवं संकेतों के माध्यम से कला संसार में प्रमुख स्थान बनाये रखा। 20वीं सदी का यह नवीन कला संसार कलाकार वैयक्तिक अभिव्यक्ति, मुक्त सृजन एवं पारम्परिक बंधनों का खुला विद्रोह था।

जिसे इस सदी में अमूर्त कला आन्दोलन के रूप में अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर एक मूक भाषा के रूप में स्वीकारा गया। अब कलाकार कृति, सृजन में ऐसे रंगतों एवं रूपाकारों का सृजन करने लगा। जो इस संसार में विद्यमान नहीं है। जिनके सृजन

में अनुकृति विषय वस्तु या आकृतियों के बंधन से मुक्ती मार्ग बनाती है। जिसे समझने एवं सृजन करने में दर्शक एवं सृजनकर्ता आनंद प्राप्ति हेतु स्वतंत्र होते है। अमूर्तकला रंग–रेखाओं एवं आकारों की शुद्ध भाषा है, जो स्थिर न होकर एक प्रवाह है। जिससे सैकड़ों धाराओं का प्रवाह हुआ है। राजस्थान में वास्तववादी कृतियों एवं विषयों को समान महत्व नहीं दिया गया था। राजस्थानी पारम्परिक चित्रों, लोक कलाओं में अमूर्त रूपाकारों, संयोजनों एवं काल्पनिक धरातल को विशेष महत्व दिया गया। भाषित संसार में जो नहीं हो सकता उसको कलाकार ने चित्रों में रूपबद्ध किया है, जिसे आध्यात्मिक आधार दिया है। मुगल व यूरोपियन प्रभाव भी इस सोच में परिवर्तन नहीं ला सका। कलाकार बंधन में रहते हुए भी बंधन मुक्त था। यह उसकी खुशबू फैलाती बहुरंगी कलाकृतियों से अहसास किया जा सकता है। इसी क्रम में बीसवीं सदी की अर्न्तराष्ट्रीय अमूर्त कला धारा राजस्थान की धरती पर भी प्रवाहित हुई।

स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व कलाकारों में राजस्थान की चर्चा यहाँ की विश्व प्रसिद्ध लघुचित्र शैलियों यथा– जोधपुर, बीकानेर, उदयपुर, कोटा, बूंदी तथा किशनगढ़ शैली आदि के कारण की जानी जाती रही है। किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही यहाँ आधुनिक प्रयोगवादी चित्रकृतियों का निर्माण भी आरम्भ हुआ, जिसने यहाँ के कला जगत की दिशा ही बदल दी।

कोई पाँच शताब्दी पूर्व यहाँ के राजकीय अथवा रियासती संरक्षण में विभिन्न क्षेत्रों की अपनी चित्र शैलियाँ विकसित हुई। इनके अन्तर्गत लघु आकारों में कलाकर्म करने वाले सिद्धहस्त चित्रकारों ने विविध रंगी चित्रकृतियाँ बनाई। इन बेजोड़ कलाकृतियों के प्रति कला–प्रेमियों का आकर्षण बना रहा। यद्यपि इन कृतियों के विषय जैसे पौराणिक कथा–प्रसंगों, राजाओं के आखेटों, व्यक्तिगत कार्यकलापों तथा पारस्परिक काव्य कृतियों में आए चरित्रों तक ही सीमित रहे, तथापि इन लघुचित्र कृतियों ने कला के क्षेत्र में राजस्थान की धाक सम्पूर्ण विश्व में जमा दी।

19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जब विश्वभर में आधुनिक कला आन्दोलन ने जोर पकड़ा तो भारत का कला क्षेत्र भी उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रहा। पश्चिम के अनेक देशों में जब पारम्परिक, सामाजिक धाराऐं बदली, धार्मिक बन्धन टूटे, आधुनिक दर्शन की स्वतंत्र विचारधारा का विकास हुआ तो भारत के लोगों की सोच में भी परिवर्तन आया। यहाँ के सृजनशील कलाकारों ने अभिव्यक्ति के स्तर पर बदलाव किया। कला में विशुद्ध सौन्दर्य दिखाए जाने की परम्परा खंडित हुई और उसमें सृजक कलाकार के आन्तरिक द्वन्द्व का समावेश हुआ। कला में समसामयिक बोध का विकास होने लगा और कलाकारों ने अपनी कृतियों में वैज्ञानिक ढंग से परिष्कार करना आरम्भ किया।

यह वह समय था जब राजस्थान के रजवाड़ों में पनपी लघु चित्रकला अतीत की वस्तु बन चुकी थी। हांलाकि पुरातत्त्व की दृष्टि से तो उसका मूल्य बढ़ा, किन्तु इतनी सूक्ष्म कला सृष्टि करने वाला एक भी कलाकार यहाँ शेष नही रहा था। एक अंतराल, एक 'खाली स्थान' था जिसे भरा जाना था। राजस्थान में कला क्षेत्र के इस अन्तराल को यहाँ के ऐसे प्रयोगधर्मी नए चित्रकारों ने पहचाना जो भारत में चल रहे आधुनिक कला आन्दोलन के समानान्तर बढ़ रहे थे। इस आन्दोलन के प्रभाव तथा प्रवृत्तियों को अंगीकार करने वाले राजस्थान के अनेक कलाकार अपनी स्वच्छन्द कला प्रतिभा तथा स्वतंत्र चित्र शैलियों की स्थापना के लिए व्याकुल दिखाई देने लगे। अपनी सहज स्वाभाविक प्रेरणा से चित्र बनाने वाले कलाकार आरम्भ में तो अपने-अपने क्षेत्रों में ही कला का प्रदर्शन करते रहे, किन्तु सन् 1954 में जब यहाँ ललित कला अकादमी की स्थापना हुई तो राज्यभर के कलाकारों को एक मंच प्राप्त हुआ। अकादमी की वार्षिक प्रतियोगिता प्रदर्शनियों से यहाँ के कलाकारों को प्रतिवर्ष अपनी कला को प्रदर्शित करने का अवसर मिला।

राजस्थान में आधुनिक कलाकृतियों के प्रदर्शन के यों तो कुछ व्यक्तिगत प्रयास 1955 से ही आरम्भ हो गये थे, किन्तु सन् 1959 से राजस्थान ललित कला अकादमी की वार्षिक प्रदर्शनियों के माध्यम से प्रतिवर्ष अनेक महत्वपूर्ण कलाकृतियाँ प्रकाश में आने लगी।

ये कला कृतियाँ वस्तुतः तीन प्रकार की थी–

1. वे कृतियाँ तो आकृतिपरक तथा मूर्त थीं, किन्तु उनमें प्रयोग की एक झीनी सी चादर चढ़ी हुई दिखाई देती थी। ऐसा प्रतीत होता था कि चित्रकार किसी न किसी कोण से परम्परा को छोड़कर आधुनिकता को अपनाना चाहता है।

2. वे कृतियाँ जो अमूर्त तो थीं किन्तु उन्हें पूर्ण रूप से अमूर्त नहीं कहा जा सकता था। उनमें प्रयोग तो था ही किन्तु कहीं न कहीं कुछ 'डिस्टोर्टेड आकृतियाँ' भी थीं। ऐसा प्रतीत होता था जैसे कलाकार अमूर्तांकन की ओर बढ़ते हुए भी आकृति के मोह से नहीं उबर सका है।

3. वे कृतियाँ जिनके सृजक कलाकार अपने काम की स्थापना तथा कठिनाइयों की चिन्ता किये बिना सम्पूर्ण रूप से अमूर्त्तांकन को अपना चुके थे। आगे चलकर इसी श्रेणी के कार्य को प्रयोगवादी स्तर पर मान्यता प्राप्त हुई।

यहाँ इस प्रश्न पर विचार कर लेना प्रासांगिक होगा कि जिस क्षेत्र में श्रृंगार नायिकाओं के नख–नख वर्णन तथा राजघरानों की केलि क्रीड़ाओं के चित्र बनते रहे थे, वहाँ सम्पूर्ण रूप से अमूर्तांकन की नींव कैसे पड़ी ?

वस्तुतः उन दिनों यूरोप तथा अन्य एशियाई देशों में विभिन्न स्वतंत्रता आन्दोलन चल रहे थे। उनके प्रभाव से लोगों की सोच में भी परिवर्तन होता जा रहा था। एकछत्र राज्य के संरक्षण को ही अपनी नियति समझने के भ्रमजाल से सम्पूर्ण विश्व के लोग मुक्ति पाने लगे थे। अतः भारत का कलाकार भी राजकीय निर्भरता, रियासती संरक्षण और सामंती स्वामित्व से मुक्त होने लगा। एक समय ऐसा आया जब न तो कलाकारों के स्वामी उनका भरण पोषण करने हेतु समर्थ रहे और न उन पर निर्भर कलाकार ही जीवित रहे। अतः यह परम्परा ही नष्ट हो गई। एक और कला के राजकीय संरक्षण की परम्परा का अंत हुआ तो दूसरी ओर एकछत्र के राज्य के शोषण से मुक्त हुए समाज में व्याप्त भूख, बेकारी अभाव, कुंठा आदि नव समाजवादी समस्याओं का चित्रण कलाकृतियों में प्रतीक रूप में होने लगा। ये अधिकांश अमूर्त

प्रतीक थे। आधुनिक अमूर्त कृतियों में रंगों, रंगाघातों, अव्यवस्थित रेखाओं तथा वस्तु संगठन के माध्यम से कलाकार अपनी बात कहने लगे।

जब हम राजस्थान में अमूर्तांकन की शुरूआत उसकी उपलब्धियों तथा संभावानाओं के विषय पर केन्द्रित रहकर चर्चा करते हैं, तो केवल चंद कलाकारों के नाम हमारे समक्ष रह जाते हैं। राज्य के बहुत से चर्चित–अचर्चित कलाकारों के नाम इस श्रृंखला में वर्णित होने से भी रह जाऐगें। साथ ही विषय की सीमाओं में रहते हुए राजस्थान में अमूर्तांकन की शुरूआत में हिस्सा लेकर जो कलाकार अपना कलाकर्म जारी नहीं रख सके, उनकी चर्चा भी हम नहीं कर पाऐंगे।

राजस्थान में अमूर्तांकन की वास्तविक शुरूआत चित्रकार ओ.डी. उपाध्याय, ज्योतिस्वरुप, पी.मंसाराम, पी.एन. चोयल प्रेमचंद गोस्वामी, आर.बी. गौतम, रमेश गर्ग, रंजन गौतम और द्वारकाप्रसाद शर्मा की अमूर्त कृतियों से मानी जानी चाहिए। इसी कला श्रृंखला में श्री सुरेश शर्मा, लक्ष्मीलाल वर्मा, भवानीशंकर शर्मा आदि का भी प्रयाप्त योगदान रहा है। इसके उपरान्त मोहन शर्मा, विद्यासागर उपाध्याय और शब्बीर हसन काजी जैसे ये सशक्त चित्रकार भी उभरे, जिनके चित्रों में अमूर्त तत्व विशेष रूप से मुखर थे। अपनी–अपनी शैलीगत विशेषताओं के कारण तीनों ही चित्रकारों ने अमूर्त कला के नए आयाम खोले।

अमूर्त चित्रांकन के चौथे चक्र में जिन कलाकारों ने उल्लेखनीय कार्य किया उनमें सुभाष केकरे, वीरबाला, भावसार, सुभाष मेहता, अब्दुल करीम, हेमन्त शेष, डॉ. मनोज, ए.एल. दमामी, मीनाक्षी काजी और दिलीप सिंह चौहान के नाम विशेष रूप से गिनाए जा सकते हैं। धीरे–धीरे कुछ और नाम भी इस श्रृंखला में जुड़े जिनकी चर्चा अमूर्तकला के कलाकारों में कही जाती है।

राजस्थान में अमूर्तांकन की साहसिक शुरूआत करने वाले चित्रकारों में ज्योतिस्वरूप अग्रणी कलाकार हैं। इनकी वैविध्यपूर्ण अमूर्त चित्रकृतियों ने राज्य में अमूर्तांकन की नींव डाली। रंग प्रयोग, संयोजन, भाव, प्रतीक, बिम्ब और स्पेस की

दृष्टि से इनकी कृतियाँ सम्पूर्ण आधुनिकता लिए होती थीं। सन् 1961 ई. से 1981 ई. तक अनेक बार राज्य अकादमी पुरस्कारों से सम्मानित होकर ज्योतिस्वरूप ने यहाँ अमूर्तांकन की जड़ें गहरे तक जमा दीं। इनकी 'इनर जंगल', 'शिवशक्ति' और 'ज्योतिस्वरूप' शीर्षकों से बनी चित्र शृंखलाएँ विशेष रुप से चर्चित और प्रशंसित हुई।

यह सही है कि उदयपुर के चित्रकार ओ.डी. उपाध्याय का कला कर्म अधिक समय तक दर्शकों तक दर्शकों के समक्ष नहीं आया, किन्तु राज्य ललित कला अकादमी की प्रारम्भिक प्रदर्शनियों में तथा एकाध अलग से संयोजित प्रदर्शनी में उन्होंने कृतियों से मानवीय जीवन संघर्ष, त्रासदी और ऊहापोह को चटक रंगों के प्रतिरोधी आघातों द्वारा सशक्त अभिव्यक्ति दी।

आधुनिक कला की साहसिक शुरूआत के दिनों में इनके योगदान को अवश्य सराहा जाना चाहिए। चित्रकार पी.एन. चोयल ने यद्यपि अमूर्तांकन का मार्ग बहुत देर से अपनाया और फिर छोड़ दिया, किन्तु इस मार्ग पर चलते हुए उन्होंने जो चित्रकृतियाँ बनाई उनमें रंगाघातों और बहती रंगधाराओं के जो विविध कोणिय बिम्ब उभरे, उन्होंने दर्शकों को लम्बे समय तक चमत्कृत किया।

बीकानेर में जन्में तीन चित्रकारों ने प्रेमचंद गोस्वामी, आर.बी. गौत्तम और रंजन गौत्तम ने अमूर्तांकन की शृंखला को न केवल संभाला अपितु उसे एक ठोस आधार और विकासमान गति दी। आकृति चित्रण के मोह से निकलकर प्रेमचंद गोस्वामी तथा आर.बी. गौत्तम ने जयपुर में पहलीबार द्विव्यक्तिय चित्रकला प्रदर्शनी का आयोजन किया। उनके अमूर्त चित्रांकन के बारे में कला समीक्षक हेमन्त शेष ने लिखा है– प्रेमचंद गोस्वामी के चित्रों में रंगों से भरा अमूर्तन है आर.बी.गौत्तम अमूर्तांकन की जिस शैली में काम करते हैं उससे गहरे और मटमैले रंगों के मिश्रण से नवीन प्रतीकों की खोज नगरीय हलचल तथा मानवीय त्रास का चित्र उभरा है। रंजन गौत्तम का चित्रकर्म यद्यपि थोड़े समय तक ही दर्शकों के समक्ष आ सका, किन्तु गुणात्मक दृष्टि से उनके चित्रों में आधुनिकता बोध अपने चरम पर रहा। माउंट आबू

में जन्में पी.मंसाराम ने यद्यपि कॉलेज शैली में कुछ अमूर्त चित्रों की रचना की किन्तु कला कर्म अपनाने के बाद राजस्थान में उनका निवास और यहाँ के अमूर्त कला आन्दोलन में उनका योगदान नगण्य रहा। रमेश गर्ग के चित्रों में एक सृजक कन की क्षुब्ध आकांक्षाओं का चित्रण हुआ। इनके प्रयोगवादी अमूर्त चित्रों के माध्यम भी समय–समय पर बदलते रहे। किन्तु अमूर्तांकन की परम्परा को निरन्तर पोषित करने वाले इस चित्रकार की तड़प रूढ़िगत चित्रण को ध्वस्त करने की रही। इस प्रयास में वे सफल भी रहे। राजस्थान में अमूर्त चित्रांकन की एक सौन्दर्यमयी, रंग श्रृंखला प्रस्तुत करके कला क्षेत्र में अपनी विशिष्ट पहचान कायम करने वाले स्व. मोहन शर्मा का योगदान इस दिशा में मील के पत्थर के समान है। गहरे से हल्के होती हुई रंग छायाओं और रंग परतों से वांछित प्रभाव उत्पन्न करके सुखद रंगानुभूति से सराबोर करने वाले उनके कितने ही चित्र उनकी समर्थ रंगयात्रा के साक्षी हैं। विद्यासागर उपाध्याय अकेले ऐसे चित्रकार हैं जिन्होंने कैनवास पर पहले श्वेत–श्याम अमूर्तांकन किया, फिर रंगों से छाया के वैविध्यपूर्ण प्रयोग करके इस क्षेत्र में अपनी खास जगह बनाई। वे रंगों से स्वच्छन्द होकर खेलते हैं। अपने चित्रों का संयोजन वे अपनी निजी शैली में लयबद्ध ढंग से करते हैं। अमूर्तन के जरिये बिम्ब उभारने, प्रकृति के रहस्य खोलने और एक अद्भुक्ष चित्र सम्मोहन उत्पन्न करने में वे अपना सानी नहीं रखते। शब्बीर काजी रंगों की सपाट किन्तु अमूर्त परतों के बीच प्रकृति और पुरुष के सामंजस्य को प्रकट करने वाले बिम्बों एवं प्रतीकों की संरचना करते हैं। कभी वे अत्यंत सहज तो कभी अत्यंत रहस्यमय हो उठते हैं। सृजक की आत्मकथा भली–भांति प्रकट करने वाले उनके चित्र अभिव्यक्ति के स्तर पर काफी सुन्दर बन सके हैं। सुभाष केकरे एक ऐसे कलाकार हैं जो वर्षों से परिश्रम के साथ अमूर्त चित्रांकन कर रहे हैं।

वीर बाला भावसार ने अमूर्तांकन के मार्ग पर बहुत देर से कदम बढ़ाए, किन्तु अब वे निरन्तर उसी पर चलकर कुछ उल्लेखनीय कृतियाँ देने को व्याकुल हैं। अपनी प्रारम्भिक कृतियों से अलग हटकर उन्होंने कैनवास पर रेत के उपयोग से जो प्रयोग

किये हैं, उनका सृजनात्मक पक्ष पर्याप्त सबल है। माध्यम चित्र का साध्य नहीं साधन है और इस साधन का उन्होंने बखूबी प्रयोग किया है। दिलीपसिंह चौहान कैनवास पर मनुष्य के विभक्त व्यक्तित्व को, उसकी त्रास्दी तथा संघर्ष को एक्रेलिक रंगों से एक खास शैली में उभारते हैं। गहरे हल्के रंगों के मिश्रण से रचे गये उनके चित्रों की रचनायें मानव मन की अनेक परतें खोलती प्रतीत होती है। मीनाक्षी भारती का अमूर्त काम लीक से हटकर भी है और प्रभावपूर्ण भी। प्रकृति के प्रतीकों की उपस्थिति तथा टेक्स्चर का आकर्षक परिवेश इनके चित्रों को बहुआयामी रंगों में ढालता है।

उदयपुर के ए.एल. दमामी का भी काम सामने आया है। लेकिन जो कृतियाँ उन्होंने दी हैं उनकी अनगढ़ता अमूर्त चित्र संसार के आस-पास ही घूमती दिखाई देती है। हेमन्त शेष, पहले कवि है फिर चित्रकार, इसलिए उनके चित्रों में कविता का सा लयात्मक एवं सृजनात्मक सम्मोहन है। उनके रेखाचित्र किसी घने जंगल एकांत में विश्रामस्थल मिल जाने के समान हैं। प्रतिरोधी रंगों को संकलित करके वे अत्यधिक सजगता के साथ कलात्मक सृजनबोध जगाते हैं। राजस्थान में अमूर्तांकन के कला आन्दोलन को आठवें दशक में जिन चित्रकारों ने आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और जो आज भी सक्रिय है उनमें सुरेन्द्रपाल जोशी, हरिशंकर गुप्ता, विनय शर्मा, सुनीत् घिर्डियाल, बसंत कश्यप, मीनू श्रीवास्तव, रामेश्वर सिंह आदि के नाम प्रमुख हैं। राजस्थान के अमूर्त क्षितिज में ऐसे सृजनशील कलाकारों की पीढ़ी एक साथ सभी नहीं उभरी। इनकी कृतियाँ आने वाले समय में राज्य के कला भंडार की अनमोल थाती सिद्ध होंगी।

राजस्थान में अमूर्तांकन आरम्भ से ही उपलब्धि मूलक रही। क्योंकि यहाँ अच्छी खासी संख्या में प्रतिवर्ष ऐसे कलाकारों का आगमन हुआ, जिन्होंने मनोयोग के साथ अमूर्तन को अपनाया। परम्परावादी चित्रसृजन के प्रति कलाकारों का मोह कम हुआ तथा पुरस्कारों पर भी अमूर्त शैली में काम करने वाले चित्रकारों का

अधिकार होने लगा। अब तो अधिकांश कलाकार अमूर्त शैली को अपना चुके हैं। राजस्थान के बाहर भी यहाँ के अमूर्त चित्रकारों ने बड़े–छोटे पुरस्कार प्राप्त करके यह सिद्ध कर दिखाया है कि राजस्थान का चित्रकार केवल सामंतों की इच्छा के अनुसार नारी श्रृंगार का चित्रण करने वाला कलाकार नहीं है अपितु समसामयिक जीवन तथा मानवीय संवेदना से जुड़कर सृजनात्मक चित्रसाधना करने का पक्षधर है। राष्ट्रीय तथा अर्न्तराष्ट्रीय चित्र प्रदर्शनों में यहाँ के चित्रकारों की भागीदारी, कलाशिविरों में निमंत्रण, द्विवार्षिकी एवं त्रिवार्षिकी जैसे महत्वपूर्ण आयोजनों में कलाकृतियों का प्रदर्शन यहाँ के अमूर्त चित्रकारों की संभावनाऐं जगाने वाली उपलब्धि है।

यहाँ के चित्रकार जिस रूचि एवं गति के साथ अमूर्तांकन को अपना रहे हैं, वह निरन्तर नई संभावनाऐं तथा नई आशाऐं जगा रहा है। राज्य के स्कूल ऑफ आर्ट्स, विश्वविद्यालय तथा कॉलेजों में कला शिक्षा ग्रहण कर रहे छात्र–छात्राओं का अमूर्तन की ओर आकर्षण बढ़ा है और वे अपनी कला अकादमी, केन्द्रीय ललित कला अकादमी एवं भारत भवन आदि द्वारा प्रर्वतित कला प्रदर्शनों में भाग लेकर तथा पुरस्कार प्राप्त करके भी यहाँ के अमूर्त चित्रकार नए प्रतिमान स्थापित कर रहे हैं।[14]

अमूर्त अभिव्यंजना और राजस्थानी लोक कला –

अभिव्यक्ति कला और कलाकार के लिये सदैव सर्वोपरि रही है। प्रागैतिहासिक काल से आज तक मानव अभिव्यक्ति के लिये कला का सहारा लेता आया है। कलाकारों ने भिन्न–भिन्न माध्यमों, शैलियों, तकनीकों के द्वारा भिन्न–भिन्न रूपों का सृजन किया है। शैली के आधार पर कला का यदि वर्गीकरण करें, तो मोटे रूप में हम इन्हें दो भागों में विभक्त कर सकते हैं। पहली वो जो कि वस्तुगत शैली है जो अन्धानुकरण पर आधारित है व दूसरी शैली में प्रत्यक्ष दृष्टिगत, वस्तुगत आकारों को हूबहू न बनाकर उसमें कल्पना का समावेश करके भावाभिव्यक्ति के लिए आकारों का सृजन होता है, जो अर्द्ध अमूर्त या अमूर्त होती है। इनमें भाव की प्रमुखता रहती है और

यह विशेषतः सौन्दर्य पर आधारित होती है। इसमें कलाकार की अनुभूति महत्त्वपूर्ण है। अमूर्त अभिव्यक्ति क्या है ? पॉलक्ली ने कहा है कि यह– "अर्द्धचेतन मन द्वारा अस्वैच्छिक आकारों की अभिव्यक्ति है।" यह कहा जाए कि यह किसी दृश्यगत वस्तु के बारे में हमारी अनुभूति है। अमूर्तकला में प्राकृतिक तथा यथार्थवादी आकारों को पूर्णतः त्याग दिया जाता है और ये आकार हमारे परिचित आकारों से मिलते जुलते नहीं है। अर्थात् इनमें वस्तुगत सत्यता नहीं रहती। अमूर्त कलाकार जानबूझकर अपना ध्यान चित्रों के मूलभूत तत्वों पर केन्द्रित रखते हैं, इनके आकार कभी ज्यामितीय, कभी वस्तुगत या कई बार दोनों का मिश्रण होते हैं और इनके सही प्रयोग से सौंदर्यात्मक सामंजस्य प्राप्त की जाती है। अमूर्त कला में संयोजन दृश्यगत व भावात्मक अपील रखते हैं तथा इनमें भाव पहुँचाने की भावना तीव्र रहती है जबकि पारम्परिक आकारद कलाओं में यह भावना कम रहती है 19वीं 20वीं शताब्दी में पश्चिमी देशों में प्रचलित अमूर्त कला शैली के प्रति विश्व के कलाकारों में बहुत रूझान है। भारतीय चित्रकार भी उन्हीं शैलियों की ओर उन्मुख है जबकि भारत में अमूर्त आकारों को बनाने की प्रथा अत्यन्त प्राचीन है। कला के अनुरागी इस तथ्य से परिचित है कि भारतीय पारंपरिक कलाओं विशेषकर 'लोककलाओं' में अमूर्त रूपों को सहर्ष स्वीकारा है। इनके अर्थों की व्याख्या नहीं करनी पड़ती क्योंकि ये आकार हमारे ग्रामीणों के संस्कारों से जुड़े हैं।

अमूर्त रूप जैसे ऊँ, स्वास्तिक, त्रिशूल, वृत्त, अर्द्धवृत, वक्राकार रेखाएँ अपने में गहन अर्थ समेटे हैं। ये हमें अमूर्त नहीं लगते क्योंकि बचपन से ही ये हमारे समक्ष एक परिचित आकार व प्रतीक के रूप में आते रहे हैं। जहाँ हम आधुनिक अमूर्त चित्रों को समझने में असमर्थ है। वहीं एक ग्रामीण, अनपढ़ इन संकेतों के गूढ़ अर्थों को भलीभाँति समझता है। वह उन्हें जीवन में स्वीकारता है। राजस्थान में खुले देवरों पर छोटे–बड़े विभिन्न आकारों के चपटे पत्थरों को चबूतरे पर स्थापित करके उनपर रंगीन पन्नियाँ चिपका कर देवताओं का स्वरूप दिया जाता है। रूखे मरूस्थल में देवरों के ये अमूर्त देवता दूर से चमकते हुए आकर्षक दैविक प्रभाव उत्पन्न करते हैं।

घड़ों पर बने सांकेतिक, आलंकारिक अलंकरण जिनमें आकृति की प्रमुखता है, कभी ज्यामितीय आकारों द्वारा तो कभी केवल रेखाओं द्वारा भावाभिव्यक्ति करते हैं। अलग–अलग अवसरों पर अर्थपूर्ण आकार चित्रित किये जाते हैं जहाँ वृत्त सूर्य बन जाता है, अर्द्धवृत चन्द्रमा और वक्राकार रेखाएँ पानी की लहरों का आभास देती हैं। गुदनों में बहुत सी बिन्दियाँ त्रिभुजाकार में लगे तीन बिन्दु, वृत्त कुंआ चूल्हा, लक्ष्मी जी के पैर, लाडा–लाडी, चौपड़, पोंहची, घड़े, पानी आदि जिस सरलतम् रूप में बनाए जाते हैं, इतने सरल आकार हमें शायद ही पाश्चात्य अमूर्त कला में मिलेंगे। राजस्थानी मांडणें, फूल आदि ग्रामीणों के जीवन के रस की सुन्दर अभिव्यक्तियाँ हैं, जिनमें वास्तविक दृश्य रूप में कहीं साम्य नहीं है। नवरात्री में गाँवों में दीवारों पर गोबर और मिट्टी आदि से बनी साँझी जो कि कुवांरी कथाओं के मन, अभिलाषाओं, आकांक्षाओं का प्रतीक है। एक अमूर्त कोलाज के रूप में हमारे समक्ष आता है, जिससे प्रेरणा लेकर भारत के आधुनिक चित्रकारों ने चित्र बनाए हैं एक आयत के अन्दर पूरे गाँव और ग्राम निवासियों के क्रिया कलापों का कल्पनापूर्ण सरल चित्र मन को मोहित किये बिना नहीं रहता। पॉल क्ली के चित्र यही लोक मोटिफ संयोजित किये हुए दिखाई देते हैं। अन्य चित्र जैसे में भी हमारी लोक कलाओं के अमूर्तकारों की पुनरावृत्ति दिखाई देती है जिनमें आकृतियों का हल्का सा सुझाव, विषय और भाव को इंगित करता है। इसी प्रकार श्रवणकुमार, मोर मोरड़ी, सात सहेलियाँ, लक्ष्मी जी के पैर भी अमूर्त अलंकरणों के रूप में दिखाई देते हैं। भारतीय लोक कला में रंग भावाभिव्यक्ति का प्रमुख साधन है। दर्शक आकारों को बाद में देखता है पहले रंग उन्हें आकर्षित करते हैं। पत्थर पर केवल सिंदूरी रंग लगाने से ही उसमें देव आ जाते हैं और वह गणेश जी में परिवर्तित हो जाते हैं काले रंग की हांडी कुदृष्टि को रोकती है। गोरे रंग का आकार देवता है तो उसे काला रंग करते ही वह भैरव बन जाता है। भारतीय लोक कलाओं में भी रंगों, आकारों, रेखाओं को एक अलग स्वरूप में देखा गया जो वस्तु की वास्तविकता से भिन्न थी।

भारतीय पट चित्रों की शैली हमें पिकासों के चित्रों की याद अवश्य दिलाती है जिनमें काल्पनिक प्रमाण, आकृति विघटन, काल्पनिक परिपेक्ष्य, सरलीकरण, आलंकारिकता आकृतियों का विशेष शैलिकरण, अमूर्तता की ओर ले जाता है। पिकासों ने जो शब्द अपनी कला शैली के लिये कहे, वे भारतीय लोक कला के लिये सत्य प्रतीत होते हैं। उन्होंने कहा था कि– "वस्तु कलाकार को प्रेरणा देने, उसके विचारों को उत्तेजित करने और भावों को जागृत करने के लिए है न कि उसका अन्धानुकरण करने के लिये।"[15]

राजस्थान लोक कला की खान है। यहाँ के जनजीवन में लोक कला विविध रंगों और रूपों में उभरी है। लोक कला के विकास में और उसे प्राणवान बनाये रखने में उभरी है। लोक कला के विकास में और उसे प्राणवान बनाये रखने में यहाँ की कुशल महिलाओं का प्रर्याप्त योगदान रहा है। लोक जीवन के विविध अंगों की यहाँ की नारियों ने कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान की है। आज भी नारियाँ इन आकर्षक कलाओं को जीवित रखे हुए हैं। समाज की धार्मिक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक प्रवृत्तियों को सहज कलात्मक अमूर्त अभिव्यंजित करने वाली राजस्थानी लोक कला का क्षेत्र बहुत विकसित है।

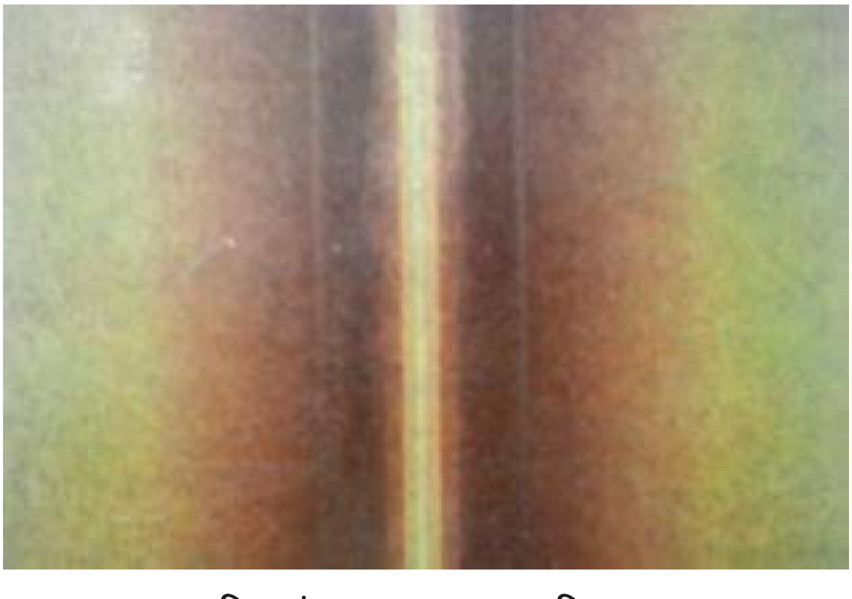

चित्र संख्या – 3 अन्टाइटिल्ड

सन्दर्भ –

1. हेमन्त शेष : राजस्थान में आधुनिक कला के पाँच दशक, पृ.सं.–10 कला दीर्घा अप्रेल 2003
2. शब्बीर हसन काजी, राजस्थान की समसामयिक कला, पृ.सं.–53,54,55, राज. ल.क. अकादमी, जयपुर
3. कला में यथार्थ और अमूर्तन (शैफाली भटनागर) कलादीर्घा अक्टूबर 2000 पृ.सं.–31,32
4. अमूर्त विशेषांक, आकृति जुलाई–सितम्बर 1995 (ए.एल. दमामी), पृ.सं.–1,2,3
5. आधुनिक चित्रकला : (लेखक–रामचंद्र शुक्ल) साहित्य संगम इलाहाबाद, पृ.सं.– 25,26,28,29,117,151
6. गिर्राज विशेष अग्रवाल : कला निबन्ध लेखक, संजय पब्लिकेशन्स आगरा, पृ.सं.– 18, 19
7. भारत की चित्रकला का संक्षिपत इतिहास (लोकेश चंद्र शर्मा) (गोयल पब्लिशिंग हाउस मेरठ) पृ.सं. 152, 153
8. भारतीय चित्रकला का इतिहास (डॉ. अविनाश बहादुर वर्मा, अनिल वर्मा, संगीता वर्मा) प्रकाश बुक डिपो बरेली, पृ.सं.– 277
9. कला एवं तकनीक (डॉ. अविनाश बहादुर वर्मा) पृ.सं.–72
10. राज. की आधुनिक कला एवं कलाविद् (ए.एल. दमामी) पृ.सं.–13,14,15
11. आधुनिक चित्रकला का इतिहास (लेखक–र.वि.सांखलकर) पृ.सं.– 2,3,4
12. शोध निधी, भारतीय कला परम्परा व आधुनिक परिपेक्ष्य, (प्रो. भवानी शंकर शर्मा) जनवरी 2012 से जून 2012 पृ.सं.–1,2
13. राजस्थान की आधुनिक कला एवं कलाविद् (ए.एल. दमामी) पृ.सं.–15 से 21
14. राजस्थान, संस्कृति, कला एवं साहित्य (लेकख–डॉ. प्रेमचंद गोस्वामी) पृ.सं.–57,58, 62 से 68 तक
15. भारतीय लोक कला (आकृति) जुलाई–सितंम्बर 1995 (रेखा भटनागर) पृ.सं.–13,14,15

द्वितीय अध्याय

चित्रकार सुरेश शर्मा का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

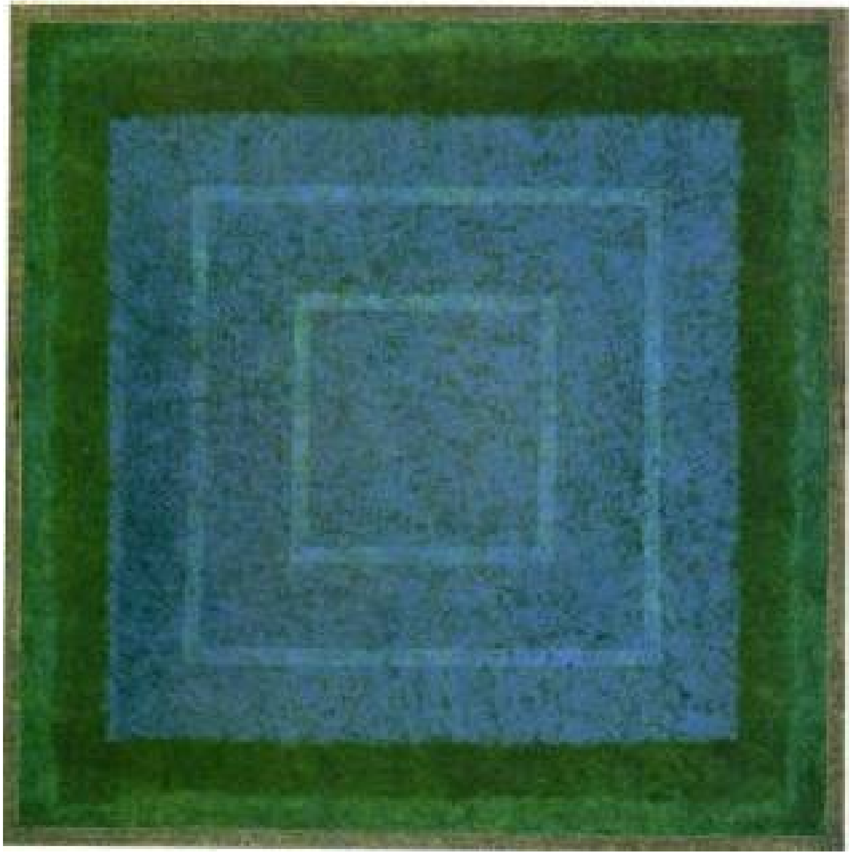

(1) जीवन परिचय

(2) शिक्षा

(3) चित्रण कार्य

(4) उपलब्धियाँ

चित्रकार सुरेश शर्मा का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

व्यक्तित्व –

चित्र संख्या – 4 कलाविद् सुरेश शर्मा का व्यक्तिचित्र

(1) **सादगीपूर्ण जीवन** – सरल व सादगीपूर्ण जीवन व्यक्तित्व व कृतित्व में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है शर्मा जी के प्रथम दर्शन के साथ ही उनके सादगीपूर्ण जीवन और सरलता से परिचय हो जाता है यह उनकी जीवन शैली का प्रमुख अंग और सरलता का बुनियादी आधार है। सादा जीवन उच्च विचार दिखाये नहीं जाते, अपितु देखने वाले की दृष्टि चेहरे के भावों और व्यवहार से स्वतः निर्णय के अन्तिम बिन्दु तक पहुँचने में सक्षम होती है। बाल सुलभ, सरलता, सौम्यता और मुस्कान नवागन्तुक को बरबस ही आकर्षित करती है।

सामान्य कद, गठिली काया, गेहूँआ रंग, सिर पर उड़े हुए कुछ घुंघराले बाल, पेन्ट–शर्ट पहने हुए उत्साह से परिपूर्ण सदाबहार हल्की सी मुस्कान लिए हुए तथा चेतना से परिपूर्ण व्यक्तित्व–सहज ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यह

अवश्य ही कलाकार है, जब उस कलाकार के सामने बैठकर तूलिका और मन की संवेदनाओं का चमत्कार देखने को मिले तो उस व्यक्तित्व से अभिभूत होना स्वाभाविक है। ऐसा ही सादगीपूर्ण व्यक्तित्व है श्री सुरेश शर्मा का। आप सुप्रसिद्ध चित्रकार, कला विशेषज्ञ, दार्शनिक, सौन्दर्य–प्रेमी और कला संग्राहक आदि गुणों से सम्पन्न बहुमुखी प्रतिभा के धनी है, मधुर वाणी, स्नेही हृदय, सरल और आडम्बर रहित स्वभाव तथा शांत व विनोदीप्रवृत्ति के कारण लोगों को अपनी और आकर्षित करते है। संवेदनशील और दया भाव से ओत–प्रोत होने के कारण किसी की भी परेशानी देखकर या सुनकर द्रवित होना आपके स्वभाव में है। शर्मा के जीवन और दर्शन में मित्ययता और अपरिग्रह के सर्वश्रेष्ठ सूत्रों का सार मिलता है आपने जीवन के हर पक्ष में सादगी और मितव्यता को अपनाया और इन्हीं के कारण आपका जीवन एक अनुकरणीय उदाहरण है।

(2) **स्पष्टवादिता –** ऐसा कहा जाता है सत्य के सर्वाधिक शत्रु होते हैं। सत्य का पर्यायी है स्पष्टवादिता क्योंकि स्पष्ट और सत्य कथन को स्वीकार करने का बिरले व्यक्तियों में ही साहस देखा जा सकता है स्पष्ट और सत्य बोलना और वो भी स्नेह, सरलता और सादगी से, यह शर्मा जी के व्यक्तित्व की एक अलग पहचान हमारे सामने रखता है, सत्य बोलना और स्पष्टवादिता एक मौलिक गुण है यह व्यक्ति के कार्यों या कृत्यों में प्रशंसा, सुधार, अच्छाई, बुराई या श्रेष्ठता के प्रति प्रेरणा और प्रयास के भाव को छिपाये रखता है। आपकी स्पष्टवादिता सम्पर्क में आये व्यक्ति को खलती नहीं, अपितु यह उसकी ताकत और हथियार के रूप में वह पाता है और अगर कुछ व्यक्ति उनकी इस स्पष्टवादिता से डरकर या बुरा मानकर अगर परे हो जाते हैं तो वे शर्मा जी के धन में से एक कौड़ी भी प्राप्त नहीं कर सकते हैं।

(3) **सहृदय व विनयशीलता –** मानवीय शक्ति, दुःस्हाहस, दंभ और घृणा में नहीं, अपितु विनम्रता और सहृदय में परिलक्षित होती है, कोई भी व्यक्ति विनम्रता से बहुत कुछ पा सकता है, विनम्रता का तात्पर्य, चापलूसी नहीं और न ही प्रशंसा या दिखावा है बल्कि विनम्र व्यक्ति ऐसा चाहता है कि उसके विनम्र रहने से सम्मान और श्रेष्ठता की प्राप्ति होती है। शर्मा जी सहृदयता और विनम्रता की प्रतिमूर्ति है जैसा की उनके

चित्रों और रंगों में भाव सरल और विनम्र होते हैं ऐसा ही उनके व्यक्तित्व में दिखाई देता है। सहृदयता और विनम्रता हमें संबंधों की प्रगाढ़ता और स्थायित्व प्रदान करती है शर्मा का हृदय निर्मल जलधारा की तरह स्वचछ है।

(4) **समय की पाबंदी** – समय की पाबन्दी सफलता के मूलमंत्र में है यदि समय पर लोगों द्वारा कार्य प्रारम्भ नहीं किये गये होते, तो सफलताऐं आविष्कार, उपलब्धियाँ, खोजें कुछ भी तो संभव नहीं था, समय की पाबंदी आपके आने या जाने का समय नहीं अपितु किसी भी कार्य को इच्छाशक्ति के साथ प्रारम्भ करने और उस पर सतत् कार्य करते रहने और पूरा करने के दौरान अकर्मण्यता आलस्य और कर्त्तव्य विमुखता से है। शर्मा जी के साथ कार्य करके या उनके कार्यों में अनुभव की जा सकती है उनकी जीवन शैली और जीवनचर्या समय की पाबन्दी का पर्याय है। आप अपने कार्य को तुरंत और अतिशीघ्र निबटाने को उत्सुक रहते हैं समय अमूल्य है इसलिए किसी न किसी कार्य में व्यस्त रहना समय का आदर करना होता है। शर्मा जी की उम्र के सात दशक पूर्ण होने व बीमारी से जूझने के बावजूद भी सुबह जल्दी उठकर भ्रमण करना व तत्पश्चात अपने दैनिक कार्यों से निबटकर एकान्त में अपनी कला की दुनिया में लीन हो जाते है निरन्तर चित्रकर्म करते रहना व समय के महत्त्व को जानना आपकी जीवन शैली में शुरू से ही विद्यमान रहा है।

(5) **सकारात्मक दृष्टिकोण** – श्री शर्मा का हमेशा सकारात्मक दृष्टिकोण रहा है, हमेशा आपने अपनी युवावस्था व प्रौढ़ अवस्था में कभी अन्तर नहीं समझा। सकारात्मक दृष्टिकोण प्रेरणा, प्रोत्साहन और सद्व्यवहार का परिचायक है किसी भी विचार संदेश, दृश्य के प्रति यदि सकारात्मक भाव नहीं होंगे तो हम उसे समझने, जानने और रचने में सदैव, असफल रहेंगे। चित्रों में नकारात्मक आलोचना एक दूसरे के पर्याय से हो जाते हैं और आलोचना के बारे में एक कथन सदैव याद आता है।

सम्पूर्ण विश्व में देखा जाये तो किसी गली व चौराहे पर आलोचकों के स्मारक नहीं होते इसका तात्पर्य हमारी सकारात्मक सोच होती है शर्मा जी कहते हैं कि यदि

तुम सड़क के किनारे किसी पड़े पत्थर को देखते हो तो उसके प्रति सकारात्मक सोच रखकर विचारों तो, वो तुम्हें अवश्य ही अमूल्य विधि के रूप में प्रतीत होगा और यदि नकारात्मक सोच के साथ तुम उसे देखते हो तो वो एक व्यर्थ और किसी के द्वारा लापरवाही से फेंका गया या पड़ा हुआ एक पत्थर ही दिखाई देगा। यही विचार यही सोच शर्मा जी को एक महान चित्रकार के रूप में हमारे सामने रखती है। वो आपकी सकारात्मक दृष्टि ही थी जिसके कारण आपने अपने कलाकर्म को उत्कृष्ट बनाया और यह आपकी सकारात्मक सोच ही थी जो आपने अमूर्त कला को अपनी पहचान का हिस्सेदार नियुक्त किया अन्यथा साधारण व्यक्ति व समाज ने अमूर्तता को हमेशा निगेटिव लिया है और लेते हैं लेकिन आपने सकारात्मक विचारों से उन सभी को गलत साबित किया है।

(6) **दार्शनिक दृष्टिकोण** – एक चित्रकार की पूर्णता दार्शनिक अभिव्यक्ति के बिना अधूरी है एक चित्रकार अपने भावों में दार्शनिक सोच को लेकर जब आगे बढ़ता है तो उसका अनुपम स्वरूप उसकी कृतियों में तो उतर कर आता ही है कि शनैः–शनैः उसका जीवन उसकी जीवन शैली स्वयं एक दार्शनिक का स्वरूप ग्रहण कर लेती है। और यह उस चित्रकार के दर्शन मात्र से ही अनुभव किया जाता है श्री सुरेश जी का व्यक्तित्वपूर्ण दार्शनिक और दर्शन में भी परिपक्वता का परिचय देता है।

(7) **मिट्टी से जुड़ाव** – मिट्टी से अभिप्राय अपनी धरती मातृ भूमि के वो संस्कार और संस्कृति लोकरंजनता जो कण–कण में विद्यमान हो, आज के समय में बहुत ही कम देखने को मिलता है, अल्प उपालब्धियों को लेकर ही व्यक्ति अपनी मिट्‌टी से ऊपर अपने पैर उठाने का प्रयास करता है और यह प्रयास उसे मुँह के बल गिरा देता है किन्तु सुरेश जी की साँसों मेंदेश की मिट्‌टी की अपने गाँव से लेकर एक महानगर की यात्रा तक जो सौरम सदैव बसती है यह उनसे मिलने पर उनकी बातों और उनके चित्रों में बोलती दिखाई देती है 'जननी जन्मभूमि स्वर्गादपि गरियसी' के भाव को सजीवता व सतत जीने व्यक्तित्व का नाम सुरेश शर्मा है।

चित्र संख्या – 5 टेराकोटा शिल्प बनाते हुए

(8) **भावुकता एवं संकल्पशीलता** – यह तो जग जाहिर तथ्य है कि एक चित्रकार मन का बहुत कोमल होता है किन्तु यह कोमलता सहज भावों के साथ विचारों और व्यवहार में परिलक्षित हो तो सोने में सुहागा कहावत चरितार्थ हो जाती है दूसरों के दुख–दर्द व पीढ़ाओं को अपनी ही मानकर उनका निराकरण खोजने की प्रवृत्ति अद्भुत व अनुपम व्यक्तित्व प्रदान करती है साथ ही इन भावों की पूर्णता के लिए दृढ़ संकल्प का इसे एक भावुक होने के साथ ठोस आधार प्रदान करती है जो कि किसी व्यक्तित्व का एक विशिष्ट और परम गुण कहा जा सकता है चित्रकार सुरेश शर्मा में भावुकता व संकल्पशीलता का यह गुण विद्यमान है।

(9) **आध्यात्मिक एवं धार्मिक प्रवृत्ति** – सबसे बड़ा धर्म मानव धर्म कहलाता है मानव धर्म मानवीय संवेदनाओं, कार्यों, कर्त्तव्यों और निष्ठाओं का सुगठित स्वरूप है क्योंकि सभी धर्मों को समान आदर देते हुए निजधर्म पालन करना सच्चे युग पुरूष

का द्योतक है जब भी चित्रकार सुरेश जी के साथ विराम के क्षण व्यतित होते हैं या विश्राम काल के समय अध्यात्म पर आपके विचार अकस्मात–चौंका देते हैं अचम्भित कर देते हैं और धर्म तथा आध्यात्म उनकी गहरी पैठ समझ के स्वाभाविक दर्शन किये जा सकते हैं दिन–प्रतिदिन किसी भी चीज को सिर्फ चिंतन द्वारा हासिल नहीं किया जा सकता, लेकिन यह जीवन उन चीजों को पाने की तीव्र इच्छा रखता है, जो व्यक्तिगत और सांसारिक जीवन से परे होती है। आध्यात्म एक ऐसी आस्था है जिसमें आप प्राकृतिक रूप से हमेशा जुड़े रहे हैं। श्री शर्मा आध्यात्मिक व्याकुलता को वैयक्तिक चीज समझते है जैसे स्वयं के प्रश्नों के लिए सत्य से रू–ब–रू होना। आज भी स्मृति में प्रार्थना करते हुए पाये जाते हैं। यही वजह है कि आपका जीवन सृजनशील व चमकदार बना है आपका कथन है कि– "जीवन सिर्फ वंश बेल बढ़ाना है तो जीने का क्या औचित्य, मेरे लिए जीवन का महत्त्व इसे सृजनकारी व संपूर्ण बनाना है और इसके द्वारा अपने कलाकर्म को पूर्ण करना है।"

(10) **निरन्तर मौन साधना में निमग्न –** साधक होना एक अलग पहलू है और साधनारत होना एक अलग, किन्तु निमग्न होना साधना का उच्चतम् परिचय देता है जैसे मीरा, सूर, तुलसी का अपने आराध्य में निमग्न होना, सभी को उनका हो जाने को या उस रस में डूब जाने को अन्तस्य प्रेरित करता है समान रूप से रंगों की साधना में रत श्री सुरेश जी को देखकर प्रतीत होता है जैसे कोई साधक अपने ईष्ट में एकीकार हो गया हो, या उसी के विशाल स्वरूप में समाहित हो गया, एक मौन साधक के रूप में आपको यह साधना करते हुए देख अपरिचित का भी मस्तक नमन में झुक जाता है।

(11) **कला संरक्षक –** किसी भी कलाविद्, साहित्यकर्मी, रचनाकर्मी का निपुणता प्राप्त करना उसकी उपलब्धियाँ योग्यता या क्षमता हो सकता है किन्तु उसको संरक्षित करना अर्थात आश्रय प्रदान करना ना केवल निजि अपितु चारों और बिखरी हुई सम्बन्धित विधा को सिमेटकर पोषित करना, उसकी पूर्णता का परिचायक है यदि वो

ऐसा कर पाने में असमर्थ है तो उसे स्वान्तसुखाय, आत्ममुग्ध, स्वार्थी जैसे नामों से परिचित होना पड़ सकता है। किन्तु चित्रकार सुरेश शर्मा कोई भी कलाकार की कृति और प्रयास को एक संरक्षक के रूप में सहेजते हैं परिमार्जित करते हैं और प्रोत्साहित करते है। एक प्रेरणास्त्रोत और प्रकाशस्तंभ के रूप में अपनी किरणों से मार्ग प्रशस्त करते हैं तथा चित्रकार की तूलियों को भटकने नहीं देते। उनके विनम्रता पूर्ण और प्रेरक विचारों से इतने ही चित्रकार उनके इस संरक्षकीय व्यक्तित्व के कायल है।

कृतित्व –

कलाविद् श्री सुरेश शर्मा जन्मजात से ही कलाकार है आप रंग और सूक्ष्म रेखाओं के जादूगर है इस जादू से आपने असंख्य रूपाकारों की कृतियों से एक नई सृष्टि की रचना बड़े ही तन्मयता से की। जीवन के शुरुआती दौर में आपने विभिन्न प्रकार की मुद्राओं में अंकित आकर्षक रूप लावण्य व मन को मोहने वाला सुसज्जित चित्रांकन किया। आपने सौन्दर्य व ओज से परिपूर्ण आनंद प्राप्त करने वाली कल्पना को साकार रूप प्रदान करके अपनी अर्न्तआत्मा की महिन संवेदनाओं को धरातल पर सुशोभित किया।

आपके चित्रों से निश्चल सौन्दर्य की अनुभूति होती है। आपके पूर्वजों व परिवार में कोई भी व्यक्ति कलाकार नहीं हुआ, फिर भी आप बचपन से ही कला के पुजारी रहे हैं। आपने बचपन से ही जिस कला संसार को रचने में अपना मन लगाया उस चित्र रचना में लौकिक अलौकिक दृश्य व अदृश्य जगत के कई रूपों का सृजन है। जिनसे चित्रकार एक कथाकार की तरह अनेक मानवीय भावों और संवेदनाओं से साक्षात्कार कराता है। उनकी रचनात्मक अभिव्यक्ति विगत 5 दशकों से निरन्तर मूल्यांकन और समादृत होती रही। शर्मा की कला ने और सुगम क्षितिजों से परे देखने को प्रेरित किया है। कला रचना की उन्होंने एक नयी और नाट्कीय दृष्टि दी। शर्मा की कला प्रतिरूपात्मक के बजाय आत्मपरक है। उनकी कला हमें आँख से देखने से अधिक महसूस करने के लिए विवश करती है।

शर्मा की कला यात्रा यथार्थवादी चित्रण से आरम्भ हुई। तथा यथार्थवादी चित्रण के पश्चात अपने अन्तःभूत रूपान्तरित आकारों के पश्चात स्वतंत्र व अरूप चित्रों को चित्रित करने लगे।

शर्मा की कला भाव या विचार रूपान्तरण की कला है जो उन्हें भीतर से आन्दोलित करके व्यक्त हुई चिन्हों तथा प्रतीकों को नये ढंग से रूपान्तरित करने का रचनात्मक प्रयोग है कई बार रंगों से अधिक टेक्स्चर महत्त्वपूर्ण बन पड़े हैं जो उनकी चित्र शैली को विशिष्ट बनाता है और उन्होंने अपनी रचनात्मक ऊर्जा का पूरा इस्तेमाल किया कई विधाओं और माध्यमों से आपकों उत्कृष्ट तकनीक एवं कार्य करने की प्रणाली का ज्ञान प्राप्त है आपके चित्रों में ट्रेक्स्चर्स का प्रयोग अभिव्यक्ति को सघनता प्रदान करता है। जिसमें एक रहस्यमय वातावरण की सृष्टि हुई है। आपके कृतित्व में स्पेस विभाजन व संयोजन सपाट और सादगीपूर्ण है आपके बनाये आकार काफी संयमित और अनुशासित है जो आँखों को ठंडक प्रदान करते हैं तथा जादुई आकर्षण पैदा करने वाले रूप अपने आप में विशिष्ट स्थान रखते हैं। शर्मा ने अपनी रचनात्मकता की अभिव्यक्ति से अपने समय की विकृतियों और विशेषताओं को उजागर करने का भरसक प्रयास किया। ईश्वर ने प्रकृति का निर्माण किया है और मनुष्य ने प्रकृति की रचना की है इस तरह सबसे बड़ कृतिकार परमात्मा को मनुष्य जैसे छोटे कृतिकार ने रूपाकारों और सौंदर्य की भावांजली दी, चित्रों में दृश्यों और प्रकृति के वातावरण को सजीव बनाने में उनकी शैली की सबसे महत्त्वपूर्ण और उल्लेखनीय विशेषता है। रंगों द्वारा वातावरण का सृजन उनके चित्रों में विशेष महत्त्व रखता है।

रंगों के अनूठे प्रयोग से चित्रों में वातावरण की गहराई और चाक्षुक गमन का क्रम उनके तकनीकी कौशल का द्योतक है। जिससे समरसता एवं रोचकता का आभास होता है।

शर्मा की कलाकृतियाँ निसर्ग की प्रतिकृति नहीं बल्कि उन्हें पुनः–पुनः रचने की कलाकार अकूत सामर्थ्य की अभिव्यक्ति है। इसलिए उनका चित्रांकन विरल प्रयोग से उत्पन्न एक जादूलोक की छवि प्रदान करता है।

उनके आकारों में जैसी छवि होती है वैसा ही उनके व्यक्तित्व में भी झलकती है। उन्होंने प्रकृति के मूर्त सौंदर्य को अमूर्तता की ओर अपने रंगों व ट्रेक्स्चर से सींचा है। शर्मा ने अपनी शैली से इस विचार को पुष्ट किया है कि कला यथार्थ की अनुभूति को सृजनशील दृष्टि द्वारा अलौकिक दृश्य जगत् में रूपान्तरिक किया जा सकता है।

शर्मा ने अपनी सृजनात्मकता की स्वतंत्रता को स्थापित करने के लिए प्रकृति जगत को नये रूपों और अपनी अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने के लिए उनकी भौतिकता में कला सौंदर्य की प्राण प्रतिष्ठा की है।

उनकी प्रयोगवादी अभिरूची के कारण उन्होंने अपनी कला यात्रा में कई तरह के चित्र बनाए जो विविध विषयों की अभिव्यक्ति देते हैं। उनके अरूप चित्रों की लम्बी श्रृंखला है जो विविध रूपों में परिभाषित है। जिसमें उनके चित्र लयात्मकता, सुमधुर रंग योजना और फलक विभाजन का निजी बोध छुपा हुआ है।

चित्रों के अमूर्त रूपाकार गत्यात्मक और स्पेस के अन्तराल में तैरते, उड़ते और बहते हुए नजर आते हैं। यह बात कहने का उनका अलग ढंग है तथा शर्मा ने विभिन्न प्राकृतिक छटाओं के आनन्द को भी भावमय रूप में चित्रित कर प्रस्तुत किया।

श्री सुरेश शर्मा के चित्रों में रंगों से भरा अमूर्तन है रंगों का निकट मिलन तथा उसके कारण पैदा होने वाली गति और सम्पूर्ण कैनवास पर अमूर्तन की हलचलें इनके काम की विशेषताएँ हैं मूल रंगों का प्रयोग और फलक पर उपजाई गई प्राकृतिक छटा इनकी कला में देखी जा सकती है।

शर्मा की रचनाओं में प्राकृतिक जगत के मूर्त बिम्बों का अमूर्तीकरण है वह प्राकृतिक वातावरण के माध्यम से हमारी खंडित चेतना को उपस्थित करते हैं उन्होंने एक ही रंग की रंगत और उससे अत्यन्त सावधानी से रचे गये ज्यामितीय आकार उदाहरणार्थ है। जो कैनवास के विशाल स्पेस में खुद अपना अर्थ तलाशती है शर्मा ऐसी रंगतों के चित्रकार है। जिनके यहाँ निराकार के प्रति तीव्र त्यामोह उपस्थित रहता

है। विशुद्ध रंगों और स्प्रे के सहारे उत्पन्न की गई उसी रंग की रंगतों में बहुत तरल ज्यामितिक आग्रह श्री शर्मा के चित्रों को अपना एक अलग ही व्यक्तित्व देता है। विशुद्ध अर्मूत रूपाकारों को बड़े आकार के कैनवासों पर प्रकट करते है। नीले रंग उनकी प्रारम्भिक रचनाओं के एक प्रकृति आवरण के तौर पर रहा करता था किन्तु बाद में आपने विभिन्न रंगों को अपनी कृतियों में ढालने की कोशिश की। आपने वास्तविकता का खुली आँखों से साक्षात्कार कर अपना दृष्टिकोण बदलकर अपने विजन का परिष्कार कर आपने अपनी क्रियात्मक भावना को कैनवास पर कसौटी के साथ उतारा और आपके चित्रों में एक निश्चल भावाभिव्यंजना के दर्शन होते हैं।

चित्र संख्या – 6 अन्टाइटिल्ड

अमूर्तन कला प्रवृत्तियों की समन्वयक शैली के सर्जक शर्मा राजस्थान की आधुनिक कला के प्रमुख कलाकार है वे परम्पराओं की जटिल अवधारणाओं की विशेषताओं, समसामयिक कलादर्शन और अर्न्तराष्ट्रीय कला प्रवृत्तियों से भलीभांति परिचित थे। गहन अनुशीलन पर आधारित उनकी कला 'शैली और तकनीक' की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। शर्मा का रचना संसार सृजन की विविधता एवं नूतनता से परिपूर्ण है। उन्होंने अपने परिपक्व रचनाकाल में भौतिक दृश्यों के सरलीकरण,

ज्यामितीय रूपान्तरण, सरलीकरण को महत्त्व दिया। हल्की गहरी रंग, ताने और आड़ी खड़ी कोणीय रेखओं द्वारा संरचनात्मक रूपों में संयोजित किया जिनमें उनकी वैयक्तिक शैली की छाप है।

विविध ज्यामितीय रूपाकारों और रंग संगतियों को एक खास अन्दाज में पुनः स्थापित करने की उनकी शैली उनके विभिन्न पर्यावरणीय संरचनाओं की जानकारी पर आधारित है। इन संरचनाओं में शर्ता ने चित्र के अंतराल को प्रतीक रूप में आकाश धरती, ताल के रूप में प्रयुक्त किया। ये बहुप्रयुक्त रूपाकार उनके चित्रों के मूलाधार है।

मनुष्य के सृजन सामर्थ्य और कल्पना शक्ति के प्रमाण अवश्य हैं उनके चित्रों में व्याप्त निर्जरता का निर्जनता जीवन की कलात्मक अभिव्यक्ति है। उन्होंने जीवन का सौंदर्य मूक प्रकृति में ही ढूंढा तथा नैसर्गिक आकर्षण प्रदान किया। अतः उनके चित्र ज्यामितीय विभाजन से अटे पड़े हैं। उनकी जड़ता को तोड़ने के लिए उन्होंने रंगतों से उनमें पारदर्शिता, दृश्यलघुता, समयाबोध और अन्तराल जैसे तत्वों का समावेश कर उन्हें सजीव बना दिया। उनके चित्र काल्पनिक और रचना सौंदर्य के मौलिक उदाहरण है। उन्होंने चित्रों में धनवादी, होरिजोन्टल, वर्टीकल विभाजन द्वारा सौंदर्य प्रदान किया है। शर्मा ने प्राकृतिक सौंदर्य को अपने विशिष्ट दृष्टिकोण से ग्रहण कर सृजित करने का कार्य किया जो पारंपरिक प्रचलन से नितांत भिन्न एवं नवीन है। शर्मा ने अपनी रचनात्मकता की अभिव्यक्ति से अपने समय की विकृतियों और विशेषताओं को उजागर किया। ईश्वर ने प्रकृति का निर्माण किया है और मनुष्य ने प्रकृति में नई प्रकृति की रचना की है। इस तरह सबसे बड़े कृतिकार परमात्मा को मनुष्य जैसे छोटे कृतिकार ने रूपाकारों और सौंदर्य की भावांजलि दी है। शर्मा ने उनकी शैली में रंगों की पारदर्शिता का निर्वाह करते हुए एक रंग को तिरोहित करते हुए दूसरे रंग के छोर तक ले जाकर उसमें विलिन कर देते हैं और दृश्यावलि को जादुई प्रभाव देकर कला कौशल का बोध कराते हैं। शर्मा की कलाकृतियाँ निसर्ग की प्रतिकृति नहीं वरन् उन्हें पुनः रचने की अकूत सामर्थ्य की अभिव्यक्ति है। शर्मा के चित्रों से संशलिष्ट वास्तु आभास रंगों के विरल व पारदर्शिक प्रयोग से उत्पन्न

जादूलोक है। उन्होंने प्रकृति के मूर्त रूपों को अमूर्त सौंदर्य प्रदान किया है। शर्मा ने अपनी शैली से इस विचार को पुष्ट किया कि कला निसर्ग की अनुकृति मात्र नहीं है। कला में यथार्थ की अनुभूति को सृजनशील दृष्टि द्वारा अलौकिक दृश्य जगत् में रूपान्तरित किया जा सकता है। यह अशेष सत्य का उद्घाटन है जो चाक्षुक स्तर पर प्राप्त नहीं हो पाता है। शर्मा ने अपनी सृजनात्मकता की स्वतंत्रता को स्थापित करने के लिए दृश्य जगत को नए रूपों और अपनी अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने के लिए उनकी भौतिकता में कला सौंदर्य की प्राण प्रतिष्ठा की है। आपकी चित्र रचना में लौकिक अलौकिक दृश्य व अदृश्य जगत के कई रूपों का सृजन दिखाई पड़ता है और एक कथाकार की तरह उनकी कलाकृतियाँ अनेक मानवीय भावों और संवेदनाओं से साक्षात्कार कराता है। आपने अपने चित्रों में कुछ मोटी, गाढ़ी रेखाओं और टेक्सचर से बुने गए हैं। कई चित्रों में एक वर्णीय रंग योजना के बावजूद भी उनके चित्र एकरसता के शिकार नहीं है एक्रेलिक माध्यम से सुन्दर सामंजस्य और संरचना की कसावट आकर्षक रूप से उनकी कलाभिव्यक्ति को प्रभावपूर्ण बनाती है।

कलात्मकता की दृष्टि से इनमें उनकी कल्पना शक्ति और कार्य शैली का विस्तार ही हुआ है निसंदेह श्री शर्मा का प्रयास काल के परावर्तन द्वारा प्रातःकाल से सांयकाल तक के बदलते वातावरण का सामंजस्य स्थापित करने में है।

पृष्ठभूमि –

सामान्य कद, गठिली काया, गेंहूआ रंग, सिर पर उड़े हुए कुछ घुंघराले बाल, पेन्ट–शर्ट पहने हुए या फिर घर पर बनियान और लूंगी बांधे हुए, उत्साह से परिपूर्ण सदाबहार हल्की सी मुस्कान लिए हुए और चेतना से परिपूर्ण व्यक्तित्व–सहज ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वह अवश्य ही कलाकार है, जब उस कलाकार के सामने बैठ्कर तूलिका और मन की संवेदनाओं का चमत्कार देखने को मिले तो उस व्यक्तित्व से अभिभूत होना स्वाभाविक है। ऐसा ही व्यक्तित्व है कलाविद श्री सुरेश शर्मा का। आप सुप्रसिद्ध चित्रकार, कला विशेषज्ञ, दार्शनिक सौन्दर्य प्रेमी और कला

संग्राहक आदि गुणों से सम्पन्न बहुमुखी प्रतिभा के धनी है मधुरवाणी, स्नेही हृदय, सरल और आडम्बर रहित स्वभाव तथा शांत व विनोदी प्रवृत्ति के कारण लोगों को अपनी और आकर्षित करते हैं।

संवेदनशील और दयाभाव से ओत–प्रोत होने के कारण किसी की भी परेशानी देखकर या सुनकर द्रवित होना आपके स्वभाव में है। हमेशा अपने से छोटे कलाकारों व शिष्यों के साथ मित्रों जैसा व्यवहार व हंसी मजाक करना आपके व्यवहार में दिखाई देता है। आपने अपने जीवन काल में कई चीजों में परिवर्तन व प्रयोग किये हैं परन्तु अपने व्यक्तित्व में हमेशा सादगी, सरलता, शिष्टाचार व स्नेह के अलावा किसी दूसरी प्रवृत्ति को आत्मसात नहीं किया। इसी वजह से आप न किसी से द्वेष रखते हैं और न ही किसी से ईर्ष्या। व्यक्तिगत रूप में मस्तमौला और आनन्द जीवी होने के साथ ही प्रकृति प्रेमी व चित्रकार के रूप में गम्भीर दायित्वशील और क्रान्ति दृष्टा थे। आत्म प्रशंसा से विमुख सदैव सृजनशील रहते है। आपने राजस्थान के कला जगत को अपनी अनवरत साधना, गरिमा और अरूप कला की विशिष्टता व नवीन संचार द्वारा समृद्ध बनाया है। आज आप चित्रकारों के आदर्श और प्रेरणा स्त्रोत हैं। आप में आत्म–नियंत्रण का विशेष गुण है, जिससे विचारों, व्यवहार इच्छाओं भावनाओं आदि का संचार होता है और इसी कारण आप जीवन में कभी हताश नहीं हुए। आपके जीवन में गुरु व माता–पिता के संरक्षकों का भी सकारात्मक प्रभाव पड़ा यही संस्कार थे, जिनसे आपको यह विश्वास मिला कि उद्बुद्ध और जागृत आत्म प्रेरणा ही एक मात्र जीवन शक्ति है जो प्रतिकूल परिस्थितियों में भी हम में यह आस्था जगा सकती है कि अन्ततः परिस्थितियाँ नहीं वरन् मानवीय संकल्प ही विजयी होते हैं। इसी कारण आपने परिस्थितियों से डरकर कभी पलायन नहीं किया, वरन् निश्चय और विश्वास पर दृढ़ रहते हुए संघर्ष किया। आपने जीवन निर्वाह की चिंता महत्त्वाकांक्षा, सुखोपभोग का मोह सम्मान व अधिकार की आकांक्षा आदि, बाह्य उद्देश्यों के मानसिक दबावों का दास बनकर कभी कार्य नहीं किया। बल्कि प्रेम, कला, साहित्य अध्यापन प्रतिभा, परिश्रम, निष्ठा व कौशल से परिपूर्ण होकर अपने संकल्प की पूर्ति करते रहे है।

जीवन का अर्थ है संघर्ष करना, अतः जीने का जो आनन्द है वैसा ही आनन्द संघर्ष करने में भी होता है। शर्मा जी में कलात्मक अभिरूचि का विकास शनैः शनैः विकसित होने वाली परिस्थितियों के मध्य हुआ है, जिसमें न किसी वाद विशेष का आग्रह था और न ही किसी परम्परा विशेष से बंधे रहने की प्रवृत्ति। भारत में भी यूरोप की भाँति आधुनिक कला आन्दोलन का विकास हुआ और भारतीय कलाकारों ने भी राज्याश्रित व राज्य संस्थाओं के नियंत्रण से मुक्त होकर स्वतंत्र सृजन धर्म को स्वीकार किया। आयु के 40वें वर्ष के लगभग शर्मा जी भी आधुनिक कला के सम्पर्क में आये और प्रयोगवादी कलाकृतियाँ बनाना शुरु किया। नवीनता की खोज में आपने चित्रण और अभिव्यक्ति का तरीका परिवर्तित करने का प्रयास किया क्योंकि समय की दौड़ में आप पीछे नहीं रहना चाहते थे।

शर्मा जी का व्यक्तित्व एक ऐसी परम्परा का प्रतिनिधित्व करता था जो सहज सिद्ध चित्रकार के रूप में अपनी कला का विकास निरन्तर करते रहे। आपके बहुमुखी व्यक्तित्व के विकास में तत्कालीन कला प्रणेताओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही, जिनमें प्रसिद्ध कलाकार स्व. पी.ए. चोयल स्व. रामकिकर बैज, स्व. विनोद बिहारी मुखर्जी आदि थे। वस्तुतः श्री शर्मा एक कर्मठ व्यक्तित्व का नाम है जिन्होंने भूतकाल, वर्तमानकाल और भविष्य तीनों के लिए अद्‌भुत सृजन किया। यह सृजन सम्पूर्ण मानव जीवन का चित्रात्मक लेख है, सत्यम, शिवम, सुन्दरम् की अभिव्यक्ति है तथा साथ ही कला जगत के अक्षय कोष की श्री वृद्धि करता है। श्री शर्मा का सम्पूर्ण जीवन उनकी बहुमुखी प्रतिभा के ज्ञान रस से भरा हुआ है जिसके मधुर स्वाद ने समस्त राष्ट्र के कला प्रेमियों को अपनी मिठास से ओत-प्रोत कर दिया। जीवन ग्रन्थ अनुक्रम के प्रारम्भिक अध्यायों में उनकी कलात्मक अभिव्यक्ति व उच्चकोटी की कला अभिरूची को व्यक्त करती है। आपकी कला चेतना अनेक नवीन दिशाओं में सहस्त्रों इन्द्रधनुषी रंगों में लिपट सम्पूर्ण कला जगत के मानस क्षितिज पर छा गयी और जीवन काल में उनकी अभिव्यक्ति सरल, सहज व रहस्यमयी आकारों में उलझ कर खेलना आपको रास आया।

शर्मा की चित्रवृत्ति सदैव सृष्टि के भाव जगत में विचरण करती रही है एवं उनकी तीव्र कल्पना दृष्टि ने सौंदर्यपूर्ण एवं उत्कृष्ट रचनाओं को जन्म देकर प्रसिद्धि प्राप्त की है कला सृजन में शर्मा प्रकृति की अमूर्तता एवं रहस्यात्मकता में इतनी गहराई तक उतरते चले गये कि प्रकृति उनके जीवन का एक अंग बन गई, प्रकृति एवं जीवन के रहस्यों के प्रति उनका आकर्षण उत्तरोत्तर बढ़ता गया जिसमें प्रकृति चेतना का प्रभाव उनके मानस पटल पर इस भाँति अंकित हुआ कि वे स्वयं अपनी चेतना से परिचित हो गये।

कला की विविध गतिविधियों में भाग लेते रहने के बावजूद शर्मा ने चित्रण कार्य में कटौती नहीं की। वे निरन्तर सृजनरत रहे। आपकी कला में रेखांकन क्षमता, रंग दक्षता तथा सहज कल्पनाजन्य सामर्थ्य का परिचय निरन्तर बना रहा और अपने आपको भूल जाने में जीवन की सम्पूर्णता व अपनी विराट अनुभूति का मूल जीवन मंत्र शर्मा के व्यक्तित्व में समाया है चाहे फिर अनुभूतियों की सीमा वेदना की ही क्यों न हो।

(1) जीवन परिचय –

श्री सुरेश शर्मा का सम्पूर्ण जीवन उनकी बहुमुखी प्रतिभा के रस से भरा हुआ है। जिसके मधुर स्वाद ने समस्त कला प्रेमियों को अपनी मिठास से ओत–प्रोत कर दिया। जीवन ग्रन्थ अनुक्रम के प्रारम्भिक अध्यायों में उनकी रंगों रेखाओं की अभिव्यक्ति उनकी उच्च कोटि की कला अभिरूचि को व्यक्त करती है उनकी कला चेतना अनेक नवीन दिशाओं में सहस्त्रों इन्द्रधनुषी रंगों में लिपट सम्पूर्ण कला जगत के मानस क्षितिज पर छा गयी।

चित्रकार के रूप में आप रंग और रेखाओं के उत्कृष्ट कलाकार है इस जादू से असंख्य रूपाकार और प्रकृति को प्रस्तुत करने वाले प्रतीक के रूप में प्रकट हुए, जिनसे एक नयी दुनिया की सृष्टि हुई। विभिन्न मुद्राओं में अंकित आकृतियाँ, आकर्षक रूप लावण्य, सौन्दर्य से मन मौह लेता है। आपके पूर्वजों में कोई कलाकार नहीं हुआ, फिर भी आप बाल्यकाल से ही कलाप्रेमी थे। आपने राजस्थान में कला

के माध्यम से एक अखण्ड ज्योती प्रज्वलित की जो, आज भी युवा कलाकारों के लिए प्रेरणा स्त्रोत है। आप वो कर्मयोगी हैं जो झूठे आडम्बरों में विश्वास न करके अपने कार्य को ही प्रभु की आराधना मानते हैं जिसका प्रमाण असंख्य कलाकृतियाँ हैं। कला व साहित्य के इतिहास में विशिष्ट शैली, विशेषकर प्रयासों एवं परम्परावादिता के कारण आपका एक विशिष्ट स्थान रहा है।

शान्ति की जननी, ईश्वरीय स्वरूप एवं मोक्षदायिनी के रूप में कला आपके लेखों में अभिव्यक्त हुई, जो सत्यम, शिवम् सुन्दरम् का प्रतीक है। इस संसार में कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जो, समाज और जातियों का इतिहास बनाते है। आजीवन संघर्षरत भावी पीढ़ियों का मार्ग दर्शन करते हैं। ऐसे कर्मयोगी और अपूर्व व्यक्ति प्रतिदिन जन्म नहीं लेते। प्रकृति भी ऐसे अपूर्व शख्स के जन्म पर आनंदित होकर खुशियाँ मनाती है।

ऐसा ही एक अवसर आया जब एक कलाकार का जन्म हुआ और वो थे चित्रकार श्री सुरेश शर्मा। हाँ आजादी से एक दशक पहले विक्रम संवत 1994 अर्थात सोमवार 15 फरवरी 1937 ई. को राजस्थान के दक्षिणी–पूर्व भाग पर बसे झालावाड़ जिले के छोटे से कस्बे खानपुर जो राजस्थान एकीकरण से पहले कोटा रियासत में था।

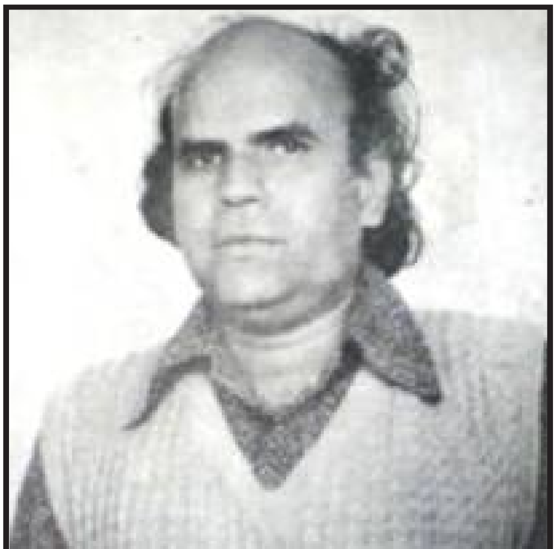

चित्र संख्या – 7 सुरेश शर्मा का प्रौढ़ अवस्था का चित्र

वहाँ श्री सुरेश शर्मा जी का जन्म एक बहुत ही साधारण परिवार में हुआ। उनके पिता स्व. श्री नंदलाल जी शर्मा (बड़गारिया) ग्राम छीपाबड़ौद के मूल निवासी थे जो पेशे से एक अध्यापक थे तथा माता स्व. श्रीमती गुलाब बाई गृहिणी थी। आपके पिता स्व. श्री नन्द लाल जी शर्मा खानपुर, इकलेरा, असनावर इत्यादि ग्रामीण अंचलों में अध्यापक रहे तथा असनावर में नन्दलाल जी हैडमास्टर की पोस्ट पर कार्यरत रहे तथा बाद में कोटा रामपुरा मिडिल स्कूल कंवर लाल जी का नोहरा स्थित भी नन्दलाल जी हैडमास्टर पद पर रहे। आपके पिता बहुत ही सज्जन व ईमानदार छवि वाले पुरुष थे, जिन्होंने हमेशा ही श्री सुरेश शर्मा जी की इच्छाओं की कद्र करते हुए आपको एक कलाकार बनने के लिए आजादी प्रदान की। कभी किसी बात का दबाव बाल्यकाल में सुरेश जी पर नहीं रहा।

हैडमास्टर स्व. श्री नन्दलाल जी शर्मा के चार संताने थी। इसमें 3 भाई व एक बहिन थी, सुरेश जी से बड़े एक भाई श्री विमल शर्मा जो डिप्टी डाइरेक्र लॉ की पोस्ट पर थे दूसरे नम्बर के सुरेश जी शर्मा तथा आपसे छोटी एक बहिन श्रीमती सज्जन बाई और सज्जन बाई से छोटे भाई श्री प्रकाशचंद शर्मा जो भी अध्यापक थे। आप बचपन में चित्रों को देखकर उनको निहारते। चित्रों का यह अटूट प्रेम एक भविष्य का उत्कृष्ट चित्रकार बनने की ओर अग्रसर कर रहा था। बाल्यकाल में चित्रण के अलावा आपका और कोई दूसरा शौक खास नहीं रहा।

श्री शर्मा अपने आरम्भिक जीवन में बहुत ही साधारण परिवेश में रहते थे। साधारण कपड़े पहनना पैरों में चप्पल पहनना तथा ज्यादा से ज्यादा पैदल चलना श्री शर्मा को रास आता था फिर साइकिल चलाना। शर्मा जी अपने घर से कॉलेज साइकिल से जाया करते थे, आपके सहपाठियों में स्व. श्री रमेश जी विद्यार्थी (वारिद) व गिरिराज शर्मा थे। श्री गिरिराज जी के अनुसार सुरेश जी को केले खाने का बहुत शौक था। कॉलेज अध्ययन के समय चित्रकला प्रतियोगिता में भाग लेने साथ जाया करते थे, जिसमें सुरेश जी हमेशा ईनाम पाते। शर्मा जी कभी अपने बालों में कंघी नहीं करते थे वो केवल अपने हल्के लम्बे बालों को दोनों हाथों से सिर में घुमाकर पीछे

की ओर ले जाते जिससे आपके बाल व्यवस्थित हो जाते। शर्मा जी के पिता नंदलाल जी कोटा आने के बाद पुराने कोटा शहर के घण्टाघर स्थित गिरिजाघर के पास मकान

चित्र संख्या – 8 रामपुरा स्थित मिडिल स्कूल जहाँ सुरेश शर्मा ने प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण की

में रहते जहाँ से सुरेश जी ने अपने सुनहरे भविष्य की शुरुआत की। आप एक शाकाहारी खानपान वाले लोगों में से एक थे आपकों कभी कोई गलत शौक जैसे तम्बाकू, बीड़ी, सिगरेट की लत नहीं लगी कभी–कभी पान जरुर खाने का शौक था वो भी धीरे–धीरे छूट गया। बचपन में शर्मा जी पढ़ाई के दौरान देवी–देवताओं व ग्रामीण परिवेश के लोगों के रेखाचित्र खींचा करते, अपने घण्टाघर स्थित निजी आवास के पास कुम्हार का घर होने की वजह से आप अधिकतर मटके बनाने वाले के स्केच बनाते इसके अलावा दूध वाले, ग्रामीण महिलाओं के चित्र, ग्रामीण जनजीवन के दृश्य इत्यादि चित्र बनाकर अपनी कला प्रवृत्ति को आगे बढ़ाया।

आपने भारतीय कला के पारम्परिक व लोकजीवन के चित्रों से ही शुरुआत की अपने इन चित्रों के माध्यम से आपने पिता स्वर्गीय नंदलाल तथा परिवार के अन्य लोगों को अपनी मूक भावनाऐं स्पष्ट कर दी थी और अपने पिता का पूरा सहयोग

आपको आगे बढ़ाने में रहा जो आज अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर पहुँच चुकी है आपका मन हमेशा से ही दूसरे कार्यों की बजाए दिन रात चित्रों के इर्द-गिर्द मँडराता रहता और यही शौक आगे चलकर आपके मन की भावनाओं व कल्पना को मुखर करने की प्रेरणा का स्त्रोत बना। सांसारिक विषयों में उलझने की बजाए सदैव संसार की क्षण भंगुरता में लीन रहना आपका रास आया।

अपनी बहुआयामी प्रतिभा के बीज उन्हें अपने आस-पास के वातावरण व परिवार से ही उपलब्ध हो गये थे चूंकि किसी भी रचनात्मक कला के लिए प्रकृति विशेष रूप से प्रेरणा का स्त्रोत रहती है और सुमधुर वातावरण में जब आपने किशोरावस्था में कदम रखा तो आपका विवाह श्रीमती गुलाब बाई से हुआ जिनसे शर्मा जी को तीन पुत्रियाँ प्राप्त हुई आपको कोई पुत्र नहीं है शायद इसी बात की ठीस आपके मन में जरूर रहती होगी। परन्तु चित्रकला के शौक ने आपकी इस नीरसता के समय में भी साथ दिया और कला के माध्यम से होने वाली भावाभिव्यक्ति अविराम चलती रही है। यही कारण है कि आप शारीरिक व मानसिक रूप से हमेशा स्वस्थ रहे तथा निरन्तर कला साधना में मग्न रहे और निरन्तर बोध होता रहा कि इस क्षैत्र में अभी बहुत कुछ करना शेष है।

(2) शिक्षा -

कलाविद् श्री सुरेश शर्मा जी का बचपन हाड़ौती के कई स्थानों पर बीता, आप के पिता अध्यापक होने के कारण उनका स्थानान्तरण एक जगह से दूसरी जगह पर हुआ करता था, इसलिए आपकी पढ़ाई भी स्थानान्तरित हुई। शुरुआत के 2-3 वर्ष आपके खानपुर कस्बे में बीते इसके तत्पश्चात् आपके पिता का स्थानान्तरण इकलेरा में हुआ, इस वजह से आपको कक्षा 4 तक इकलेरा में अध्ययन करना पड़ा। आपने कुछ समय इकलेरा में व्यतित करने के बाद आपके पिता स्व. श्री नन्दलाल जी का तबादला कोटा हो गया और रामपुरा मिडिल स्कूल में वो हैडमास्टर के पद पर कार्यरत हुए इसलिए आपका भी कोटा आना आवश्यक हुआ और कक्षा 4 से आगे की पढ़ाई करने के लिए आपने अपने पिता के सानिध्य में रामपुरा मिडिल स्कूल में दाखिला

लिया जहाँ आप अपने भाई–बहिन के साथ पढ़ने जाया करते थे। यहाँ पढ़ने के साथ–साथ आपको खेलने का भी मौका मिला और अपने सहपाठियों के साथ खूब मौज मस्ती करते। मिडिल स्कूल से आठवीं की परीक्षा पास करने के बाद पुराने शहर से बाहर और हाड़ौती के सबसे बड़े विद्यालय मल्टीपरपज व हाई स्कूल में प्रवेश लिया। यहाँ पर भी सुरेश जी अपनी कॉपी के खाली पन्नों पर ग्रामीण दृश्यों के चित्र, महापुरुषों व देवी–देवताओं के चित्र बनाते और सुर्खियाँ बटोरते। सन् 1952–53 में मैट्रिक की परीक्षा पास करने के बाद आपने ब्रिटिश गर्वन्मेन्ट में स्थापित हर्बट कॉलेज नयापुरा कोटा में दाखिला लिया। यहाँ पर आपने इन्टरमिडियट व ग्रेजुएशन की पढ़ाई अपने कला गुरु व अर्न्तराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त स्व. श्री परमानन्द चोयल से प्राप्त की। चोयल साहब से ही आपने कला के आरम्भिक गुर सीखे और आगे बढ़ने की प्रेरणा प्राप्त की। शर्मा जी पी.एन. चोयल साहब के प्रिय शिष्य रहे हैं और चोयल साहब को ही आप आदर्श गुरुओं में से एक मानते थे और इन्हीं से प्रेरणा पाकर आप सन् 1958 ई. में कला की उच्च शिक्षा प्राप्त करने विश्वभारती कला संस्थान, शांति निकेतन से फाईन आर्ट एण्ड क्राफ्ट में डिप्लोमा करने पश्चिम बंगाल चले गये। यहाँ पर रहते हुए आपने कई माध्यमों में कला की तकनीकों की जानकारी प्राप्त की और उनमें कार्य भी किया। आपने यहाँ रहकर लिथोग्राफी, एचिंग, वुडकर, चायनीझ आर्ट, एनग्रेविंग भारतीय पारम्परिक कला व इतिहास के बारे में अपने कला गुरुओं नन्दलाल बोस, विनोद बिहारी मुखर्जी, रामकिंकर बैज इत्यादि से महत्त्वपूर्ण शिक्षा प्राप्त की।

इन कला गुरुओं की दिनचर्या, सृजन करने की प्रक्रिया, कला शिक्षण तथा चिन्तन ने उनके व्यक्तित्व तथा सृजन की स्वतंत्र चेतना के विकास में महत्त्वपूर्ण प्रेरक बीज बोए। चार वर्षीय ललित कला में डिप्लोमा प्राप्त करने के पश्चात आप वापस कोटा चले आये और जो समय आपने शांति निकेतन में रहकर गुजारा उसका उत्कृष्ट परिणाम मिलना ही था और सन् 1962 ई. में आप राजकीय महाविद्यालय, बूंदी में प्राध्यापक के रूप में नियुक्त हुए। जहाँ आपने अपने विद्यार्थियों को भी कला की शिक्षा भली भाँति प्रदान की जिनसे कई विद्यार्थी आज कला क्षैत्र में अपना कार्य कर रहे हैं।

आपने प्राध्यापक पद पर नियुक्त होने के 6 वर्ष पश्चात् सन् 1968 ई. में आप कला के नये प्रयोगवादी व विभिन्न तकनीकों के अर्न्तराष्ट्रीय स्वरूप को नजदीक से देखने व जानने हेतु अमेरिका की 'बैकमेन स्कॉलरशिप' पर ब्रुकलिन म्यूजियम आर्ट स्कूल चले गये तथा सन् 1969 ई. में शर्मा जी 'प्राद् ग्राफिक इन्स्टीट्यूट' से प्रिन्ट मेकिंग का कार्य सीखने न्यूयार्क (U.S.A.) गये। जहाँ रहकर आपने प्रिन्ट मेकिंग की बारिकियों को नजदीक से जाना व उसमें योग्यता हासिल की।

चित्र संख्या – 9 हर्बर्ट कॉलेज, कोटा

आप एक ऐसी कला रचना–पद्धति से और चिंतन से रूबरू हुए जो अब तक की पारम्परिक शिक्षा से भिन्न और चमत्कृत करने वाली थी। शिक्षा के क्षैत्र में शर्मा जी ने हर क्षैत्र में बाजी मारी। और आज भी आप अपने ज्ञान का इजाफा करते हुए एक सिद्धहस्त कलाकार के बजाए एक प्रशिक्षु कलाकार की तरह जीवन जीते है। नई सोच और नए कन्सेप्ट को जानने की पूरी लालसा रखते हैं और ये आपकी प्राथमिकता भी रहती है।

(3) चित्रण कार्य –

सुरेश शर्मा ने अपने जीवन काल में बंधकर कार्य करना नहीं सीखा। वे सदैव नवीन प्रयोगों को सृजन कार्य के साथ जोड़ कर स्वतंत्र व्यक्तित्व एवं वैयक्तिक अभिव्यक्ति को महत्त्व देते रहे है। आपने कला को मात्र आकस्मिक अध्ययन का विषय न मानकर अभिव्यक्ति पूर्णता व प्रयोगवादी स्वरूप को स्वीकारा है। सुरेश शर्मा का सृजन आकृति रहित अमूर्तता का रहा है। शर्मा जी अपने कार्य को बड़ी तन्मयता से किया करते हैं, चित्रों को हमेशा आपने बड़ी सहजता से बनाया है। शर्मा जी ने अपनी सेवाकाल के दौरान कई प्रकार के चित्रों को बनाकर उन्हें संजोया है। शर्मा जी ने अपने जीवन के लगभग 50 वर्ष कला साधना में व्यतित किये, जिसमें उन्होंने अपनी भावनाओं को संवेदना–सौन्दर्य के रूप में प्रस्तुत किया है।

आपकी कुछ अभिव्यक्तियाँ ऐसी भी है जिसमें भावनाओं का प्रतीक मूर्त रूप आँखों के सामने साकार हो उठता है आपकी कुछ आकृतियाँ रहस्यमय और आश्चर्यजनक है भावाभिव्यक्ति की यह अवस्था भावनाओं की तत्पर अभिव्यक्ति एवं रंगों के बीच की प्रक्रिया है। धीरे–धीरे शर्मा जी स्वतंत्र आकृतियों का चित्रण कार्य करने में लीन हुए, जिसमें मानवीय संवेदनाओं की अभिव्यक्ति चित्रकृतियों के रूप में हैं। शर्मा के चित्रगत का शुभारम्भ प्रयोगवादी विचारधारा से हुआ जो आधुनिक कला की मुख्य विशेषता रही है। प्रकृति के प्रति अनुभूति की भावनाऐं ऐसी भी है, जिनकी अभिव्यक्ति का स्पष्टीकरण शब्दों की अपेक्षा रंगों एवं रेखाओं में अधिक सुदृढ़ और स्पष्ट हो सकता है। जब आपने यह अनुभव किया कि जगत के विभिन्न आकारों में निहित सौन्दर्य की समस्त साकार एवं निराकार भावनाओं को शब्दों द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता, तो आपने अपनी भावनाओं को रंगों के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति को सशक्त करने का प्रयास दिनों–दिन किया।

चित्रकार सुरेश शर्मा ने अधिकांशतः ऐसे चित्रों की रचना की है जो इस जगत की वास्तविकता नहीं लगती, वरन् वे किसी अलौकिक जगत का प्रतिनिधित्व करते हैं। चित्रांकन से पूर्व सुरेश जी लोकोत्तर जगत की कल्पना करते तथा अपरिचित

अमूर्त व्यक्तित्व को मित्र के रूप में प्रस्तुत किया करते है आपका यही प्रस्तुतीकरण रंगों की भाषा में चित्ररूपी दृश्यपटल पर बड़े ही सहज, किन्तु गहनता से प्रस्तुत हुआ है। शर्मा ने चित्रों के अलावा कुछ म्यूरल भी अपने चित्रकर्म काल के दौरान तैयार किये, तो छापा कला ने भी शर्मा को अत्यधिक आकर्षित किया है। शर्मा जी ने खासकर प्रकृति के विभिन्न रंगों एवं छटाओं को अपनी तूलिका से बांधा है। प्रकृति में अनेक तत्व ऐसे हैं जो प्रत्यक्ष नहीं है किन्तु फिर भी अनुभूतिगम्य अवश्य है। ऐसे तत्वों की अनुभूति कर चित्र में उसकी अभिव्यक्ति करना कलाकार की सृजनता का परिचायक है, शर्मा जी का मत है कि कलाकार जितना अधिक सृजनशील होगा वह उतना ही अधिक प्रकृति के साथ एकाकार रहेगा तभी चित्र में रस उत्पन्न होता है और उसकी अनुभूति होते ही चित्र सजीव हो उठता है यही सजीवता कलाकार की चेतना का दर्पण है। प्रकृति का रूप शर्मा के सौन्दर्यात्मक जगत का आधार रहा है छठे दशक में आपके चित्र पर कोटा–बूंदी शैली का भी प्रभाव रहा। आपने अपने चित्र तकनीक विभाजन एवं काल्पनिक अमूर्त चित्रों को विभिन्न प्रकार के टेक्स्चर्स के द्वारा सजीव व मौलिकता प्रदान की है।

3.1 स्वतंत्र काल्पनिक एवं अमूर्त चित्रण –

टेक्स्चर्स से चित्रों में रूपान्तरित हुए आकारों के पश्चात शर्मा ने स्वतंत्र चित्रों की रचना की, जो काल्पनिक एवं अमूर्त आकारों के रूप में है। इस प्रकार के चित्रों में कहीं सपाट चोखाने हैं तो कहीं बारीक महीन रेखाओं द्वारा खींचे गये खण्ड नारंगी, नीले व हरे रंग से आपके चित्र प्रकृति के रंगों की याद ताजा कराते हैं तथा ऐसे चित्रों में कार्य करने की स्वच्छेद प्रक्रिया है। शर्मा का कला जगत उनके परालौकिक सौन्दर्य चिन्तन का परिणाम है। उनके द्वारा रचित विभिन्न कला रूपों में उनकी उच्च सौन्दर्यानुभूति छिपी दिखाई देती है। प्रिन्ट मेकिंग के कार्य में भी शर्मा जी कुशलतापूर्वक कार्य कर लेते हैं।

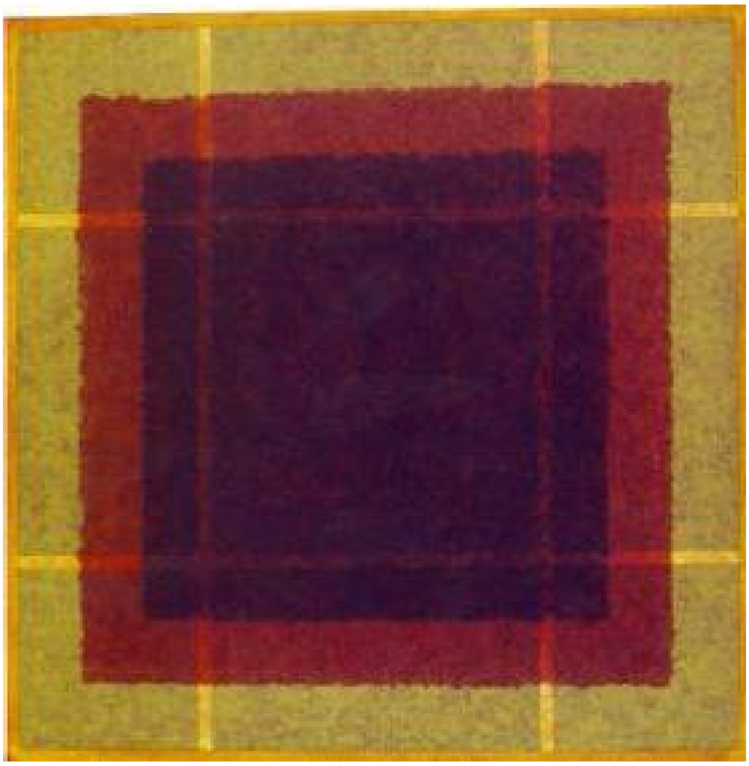

चित्र संख्या – 10 अन्टाइटिल्ड

आपने कई प्रकार के प्रिन्ट बड़ी सूझबूझ से तैयार किये। शर्मा जी छापा चित्रण के लिए टखमण–28 कला स्टूडियों पर कई प्रकार के प्रिन्ट से मुख्य तकनीकी बारिकीयाँ अपने युवा कला विद्यार्थियों को बताते जिससे की छात्रों को इसकी जानकारियाँ मिल सके 1 वर्ष में एक–दो बार यहाँ वर्कशॉप भी करते जिसमें राजस्थान के कई चित्रकारों को जो छापा–चित्रण से अनभिज्ञ थे उन्हें यह कला सीखने को मिली और अपनी इस रूचि में पारंगत भी हुए।

जहाँ तक चित्रों का सवाल है तो सीमित रंगों के प्रयोग में शर्मा जी ने काफी कार्य किया जिन्हें आप अनेक पोतों के माध्यम से विकसित करते हैं। आपका मानना है कि आकृति एक ऐसा शब्द है जो निराकार और साकार दोनों अभिव्यक्त करने की क्षमता रखता है और जब एक माध्यम में काम करते–करते जब मन ऊब जाता तो

स्वाद में बदलाव लाने के लिए अलग–अलग माध्यमों का प्रयोग करते। छापा कला में भी आपके पोत की तकनीक अतुलनीय साबित हुई है। जो युवा कलाकारों के लिए उलझन पैदा करती है कि वास्तव में यह पोत कैसे लगाये होंगे। चित्रों में पोत का प्रयोग अभिव्यक्ति को सघनता प्रदान करता है पोतों के प्रयोग द्वारा रहस्यमय वातावरण की सृष्टि हुई है। आपने कई चित्रों में पेन्सिल, स्याही के प्रयोग से श्वेत श्याम रंगतो से गहरे और हल्के स्तर पैदा कर उनमें विशेष प्रभाव उत्पन्न किया। रेखांकन व टेक्स्चर्स प्रदान इन कलाकृतियों में तांत्रिक व प्रकृति का आभास कराने वाल अलांकारिता है और स्पेस विभाजन व संयोजन सपाट और सादगीपूर्ण है आपके चित्रों में काफी संयमित और अनुशासित रूप की झलक दिखाई पड़ती है। तकनीकी दृष्टि से आपने नए प्रयोगों द्वारा विशेष प्रभाव उत्पन्न कर रचना की है पाँच दशकों के अन्तराल में चार–पाँच हजार से अधिक कलाकृतियों का सभी माध्यमों में निर्माण उनके अनवरत सृजन का प्रमाण है।

आपके अनुसार यह उनकी रचनात्मकता के उत्कर्ष का संघर्ष है शर्मा जी ने टेराकोटा में भी कार्य किया जिसमें मिट्टी में कुछ मात्रा में रेत मिलाकर कई प्रकार की रूपाकृतियाँ, खिलौने, बर्तन आदि बनाकर उन्हें चोकोर मिट्टी के धरातल पर चिपकाकर उन्हें आग में पका लिया करते जो हस्तशिल्प का उत्कृष्ट उदाहरण है। मिट्टी के बर्तनों व खिलौनों तथा मुखौटों को इस तरह व्यवस्थित करके जमाते की वो संयोजित लगते जो ग्रामीण हाट बाजार व उद्योग मेलों में लोगों को पसंद आते। टेराकोटा के अलावा रेत सिमेंट के स्टेच्यू व म्यूरल भी बनाने का कार्य शर्मा जी ने किया जो अधिकतर उदयपुर के पार्कों, मोलेला ग्राम व टखमण–28 की चार दीवारी में स्थापित है। चूंकि आपके मन में संयोजित रूपाकार नित नये रूपों का संयोजन स्वरूप ग्रहण करते हैं आपने अपनी कला परम्परा से स्वयं का विकास किया है क्योंकि सक्रिय कलाकार सदा नये रूपाकारों का सृजन करने हेतु नये माध्यमों का सहारा लेता है। गतिशीलता एवं बदलाव ने सदा आपकी कला में शक्ति का संचार उत्पन्न किया है इन सभी पहलुओं पर एक नजर डाली जाए तो आपका कलाकर्म सराहनीय व प्रशंसनीय है तथा अथक खोजी प्रवृत्ति ने आपको नवीन तकनीक के तरीके ढूंढने को प्रेरित किया।

आपके द्वारा बनाये चित्रों, म्यूरल व शिल्पों में सौन्दर्य, सुघड़ता तथा स्पष्ट विवरणात्मकता परिलक्षित होती है। आपकी उत्कृष्ट कृतियों में हृदयगत मूल भावनाएँ एकाकार हुई।

(4) उपलब्धियाँ –

कलाविद् सुरेश शर्मा के लगभग 5 दशक अपने चित्रकर्म में बीते इन्हीं पाँच दशकों में आपने अपनी कला से पूरे राष्ट्र में अमूर्त कलाकार के रूप में छवि बनाई तथा राजस्थान की अमूर्त परम्परा में भी अग्रणी रहे। आपने समय–समय पर अपनी अभिव्यक्ति की छाप कला के जानकारों के मस्तिष्क पर छोड़ी है। सुरेश जी ने ऐसे अनगिनत कलात्मक कार्य अपने जीवन में किये जिनसे कला के क्षेत्र में आधुनिक प्रवृत्ति विश्व के सभी क्षेत्रों में समय की नवीन गति की तरह स्थापित हुई, भारत में भी इसका प्रभाव सामयिक गति के प्रभाव के रूप में आया।

राजस्थान के समकालीन कला जगत में सृजनरत प्रमुख कलाकारों में श्री शर्मा की उपलब्धियों को विभाजित नहीं किया जा सकता। आपकी कार्य शैली और विचारिक शैली के अनुसार मोटे तौर पर मूर्त्त–अमूर्त्त और मध्यमार्गी धाराओं में व्याख्या की जा सकती है। राजस्थान में समकालीन कला की सही मायनों में शुरुआत, ज्योतिस्वरूप, पी.एन. चोयल नारायण आचार्य, रमेश गर्ग, प्रेमचंद गोस्वामी आदि के कृतित्व में तो समझी जा सकती है, लेकिन इन सभी के बीच सुरेश शर्मा की कार्य व साधना से राजस्थान की समकालीन कला ने एक ऊँचा मुकाम पाया है और इसे आगे बढ़ाने में अन्य कलाकारों का सहयोग शर्मा को मिला। अपने चित्र फलक को विभिन्न रंगतों की एक के ऊपर एक परतों से भर देने वाले सुरेश शर्मा रंग शास्त्री भी कहे जाते हैं, चित्रों में रंगों के विशुद्ध सौंदर्य में जितना आकर्षण आपने उत्पन्न किया, उतनी ही प्रकाशमय छवि, आपकी कला जगत में बनती चली गई। आपने देश–विदेश कई बड़े शहरों में अपनी कलाकृतियों को प्रदर्शित किया। देश–विदेश में सैंकड़ों कला उत्सवों में भाग लिया तथा कैम्पों (शिविरों) में भी बराबर अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई। तथा राज्य सरकार व भारत सरकार ने आपकों इन उपलब्धियों

के लिए सम्मानित व पुरस्कृत भी किया। ऐसे कई पुरस्कार आपने जीते जो एक कलाकार का सबसे बड़ा धन होता है। श्री सुरेश शर्मा की विभिन्न उपलब्धियाँ निम्नलिखित है जिसमें आपके सम्पूर्ण कलाकर्म को प्रस्तुत किया है।

4.1 स्कॉलरशिप/फैलोशिप

4.2 पुरस्कार व सम्मान

4.3 शिविर व कार्यशाला (वर्कशॉप)

4.4 एकल प्रदर्शनियाँ

4.5 सामुहिक प्रदर्शनियाँ

4.6 कॉन्फ्रेन्स व गोष्ठियाँ

4.7 सदस्यता

4.8 चित्र संग्रह

4.1 स्कॉलरशिप/फैलोशिप –

सातवें दशक के अन्तिम वर्षों में वह सुअवसर आया जब श्री शर्मा को अमेरिका में 2 वर्षों के लिए **'बैकमेन मेमोरियल स्कॉलरशिप'** सन् 1968–70 ई. के दौरान उच्च अध्ययन एवं कला के अर्न्तराष्ट्रीय स्वरूप को जानने हेतु छात्रवृत्ति प्रदान की गई। इस छात्रवृत्ति से मिली शिक्षा ने शर्मा के जीवन को पूरी तरह बदलकर रख दिया और आपको उत्कृष्ट कार्य करने व सीखने को मिला।

इसी प्रकार सन् 1985 ई. में राजस्थान ललित कला अकादमी द्वारा आपको फैलोशिप के लिए चुना गया। इस श्रृंखला में शर्मा को सन् 2000–2002 ई. में दो वर्ष के लिए **'ह्यूमन रिसोर्स एण्ड कल्चरल डिपार्टमेन्ट'** भारत सरकार नई दिल्ली द्वारा **'सीनियर फैलोशिप'** प्रदान की गई।

4.2 पुरस्कार एवं सम्मान –

श्री शर्मा को अनेक विभिन्न पुरस्कारों से उत्कृष्ट कार्य के लिए सम्मानित किया जा चुका है। जिससे आपके कला कर्म का मजबूत पक्ष उजागर हुआ। शर्मा को सन् 1959 ई. में बंगाल यूथ फेस्टीवल में स्पेशल प्राइज दिया गया।

चित्र संख्या – 11 सुरेश शर्मा रत्न सदस्यता ग्रहण करते हुए

सन् 1961, 63, 70 ई. में राजस्थान ललित कला अकादमी जयपुर के द्वारा तीन बार आपको राज्यस्तरीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया जो अपने आप में एक बड़ी उपलब्धि है। सन् 1976 ई. में शर्मा को राष्ट्रीय ललित कला अकादमी नई दिल्ली द्वारा 'कमेन्डेशन' पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इसी तरह आपके उत्कृष्ट कार्यों को ध्यान में रखते हुए राजस्थान ललित कला अकादमी ने सन् 1985 ई. में कला के उच्च सम्मान 'कलाविद्' की उपाधी प्रदान की। जिसमें शर्मा के योगदान को सराहा गया।

29 अप्रेल सन् 2012 ई. को मोहललाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय के एक सम्मान समारोह में ललित कला अकादमी नई दिल्ली द्वारा कला क्षेत्र में विशिष्ट योगदान देने हेतु अकादमी के चैयरमेन श्री बामन नाम्बियार व पद्मभूषण विजेता ए. रामचन्द्रन ने कलाविद् सुरेश शर्मा को 'रत्न सदस्यता' सम्मान की उपाधी प्रदान की। ललित कला अकादमी द्वारा विभिन्न कला क्षेत्रों में यह सम्मान प्रति वर्ष एक ही कलाकार को दिया जाता है वो भी ताउम्र योग्यता के आधार पर।

4.3 शिविर व कार्यशाला –

वैसे तो सुरेश शर्मा ने कई शिविरों एवं कार्यशालाओं में भाग लिया। और इन कार्यशालाओं और शिविरों में आपने डेमोस्ट्रेशन के माध्यम से वहाँ आये सभी नवआगन्तुक कलाकारों को विभिन्न माध्यम और तकनीकों के माध्यम से प्रोत्साहित किया और ज्यादा से ज्यादा जानकारियाँ प्रदान की। शर्मा जी के कई ऐसे शिष्य भी हैं जो राजस्थान की समसामयिक कला में निरन्तर अपना कार्य कर रहे है जिनमें प्रमुख है विद्यासागर उपाध्याय, शब्बीर हसनकाजी, लक्ष्मीलाल वर्मा इत्यादि आपकी अमूर्तन परिपाटी को आगे बढ़ा रहे हैं। कला शिविरों में डेमोस्ट्रेशन के माध्यम से शर्मा ने अपने अनुभवों को प्रदेश के लगभग सभी युवा कलाकारों के बीच बाँटा है और ये प्रमुख शिविर व कार्यशालाऐं निम्न हैं।

- सन् 1978 ई. में 'कन्वीनर ऑफ ऑल इण्डिया पेन्टर्स' की कार्यशाला राष्ट्रीय ललित कला अकादमी नई दिल्ली द्वारा आयोजित की गई, जिसमें शर्मा की भागीदारी रही।
- सन् 1980ई. में 'ऐकेडमी ऑफ आर्ट एण्ड लैंगवेज' की राष्ट्रीय कार्यशाला श्री नगर कश्मीर में आयोजित की गई उसमें भागीदारी।
- सन् 1985 ई. में पश्चिमी (वेस्ट) जर्मनी द्वारा आयोजित 'अर्न्तराष्ट्रीय पेन्टर्स कैम्प' मेक्समूलर भवन कोलकाता में आपने हिस्सा लिया और उसमें अपने अनुभव बाँटे।
- सन् 1990 ई. में गोवा ललित कला अकादमी द्वारा पन्जिम और वेस्ट जोन कल्चरल सेन्टर उदयपुर में आयोजित टेराकोटा कैम्प में आपकी विशेष उपस्थिति रही। जहाँ शर्मा ने टेराकोटा कला में कार्य भी किया और उसकी जानकारियाँ प्रस्तुत की।
- सन् 2000 ई. में त्रिनाले प्रिन्ट मेकिंग कैम्प जयपुर में भी आपकी विशेष भागीदारी रही जिसमें छापा कला के बारे में विस्तृत जानकारियाँ दी तथ इस विधा में कार्य कर डेमोस्ट्रेशन दिया।

- सन् 1992 ई. में भारत भवन भोपाल में आयोजित ग्राफिक–कैम्प में आपकी उपस्थिति सराहनीय रही।

- सन् 2003 ई. में पोर्ट ब्लेयर में राष्ट्रीय ललित कला अकादमी नई दिल्ली द्वारा आयोजित 'नेशनल आर्टिस्ट कैम्प' में श्री शर्मा ने अपने चित्रकर्म को प्रदशित किया और अपनी कला शैली से सभी कलाकारों को इसकी तकनीकी विशेषता के बारे में बताया।

- 1980, 2000 ई. में राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर द्वारा आयोजित शिविर व कार्यशाला में भी शर्मा ने भाग लिया जहाँ आपको युवा कलाकारों से मुखतिब होने का मौका मिला।

- सन् 1980, 2002 ई. वेस्ट जोन और नोर्थ जोन कल्चर सेन्टर और टखमण–28 द्वारा आयोजित कलाशिविर में श्रीशर्मा ने अपनी साझेदारी दी।

- सन् 1997 ई. में राजस्थान ललित कला अकादमी एवं पश्चिम क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, उदयपुर के संयुक्त प्रयासों से आयोजित कला शिविर मे भागीदारी निभायी। जो उदयपुर की बागोर की हवेली आयोजित हुआ। इस कार्यशाला में राज्य के वरिष्ठतम् कलाकारों ने भाग लिया।

चित्र संख्या – 12 श्री शर्मा कार्यशाला में पेन्टिंग के गुर सिखाते हुए

जिसमें पद्‌म श्री रामगोपाल विजयवर्गीय, पद्‌म श्री रामगोपाल विजयवर्गीय, श्री बी.सी. गुई, सुरेश शर्मा, स्व. गोवर्धनलाल जोशी (बाबा), स्व. पी.एन. चोयल, प्रो देवकीनंदन शर्मा, श्री ज्योतीस्वरूप, डॉ. अर्चना कुलश्रेष्ठ इत्यादि वरिष्ठ चित्रकारों ने भाग लिया। इसमें भावी पीढ़ी के सृजनात्मक मार्गदर्शन तथा अनुभवी चितेरों के कृतित्व को नवीन पीढ़ी तक पहुँचाने के उद्देश्य से वयोवृद्ध कलाकार शिविर का आयोजन उदयपुर में किया गया। जिसमें श्री शर्मा ने भी कलाकार विशेष के जीवनवृत्त, कलाकर्म की यात्रा के विविध रूपों एवं कला सम्बन्धी विचारों का विवरण प्रस्तुत किया।

- इसके अलावा सन् 1981 ई. में अखिल भारतीय चित्रकार शिविर, महाराणा पैलेस उदयपुर।
- सन् 1982 ई. में अखिल भारतीय टेराकोटा कैम्प मोलेला उदयपुर में भाग लिया।
- सन् 1992 ई. में पश्चिम क्षैत्र सांस्कृति केन्द्र, उदयपुर द्वारा आयोजित कलाकार शिविर सर जे.जे. स्कूल ऑफ आर्ट मुम्बई में हिस्सा लिया।
- आपने और भी कई दर्जनों कला शिविरों व कैम्प में अपने हुनर का प्रस्तुतीकरण दिया।

4.4 एकल प्रदर्शनियाँ –

कलाविद् श्री सुरेश शर्मा ने अपनी कलाकृतियों की प्रदर्शनियाँ देश–विदेश के कई कला दीर्घाओं में आयोजित की। अपनी चित्र प्रदर्शनियों से आपने अपनी कला के माध्यम से तकनीकी व शैली से पूरे कला जगत को जागृत किया। आपकी मधुर व प्रकृति को परिभाषित करने वाली सुन्दर कृतियाँ कितनी ही कलादीर्घाओं की शोभा बनी। और आज भी शर्मा जी अपने कार्य को पूरी ईमानदारी व मेहनत से तैयार करके समाज को एक आईना दिखाने की कोशिश में निरन्तर प्रयत्नशील है। ये प्रदर्शनियाँ चित्रकार की मनोदशा को परिभाषित करके समाज के समक्ष उन पहलुओं पर कटाक्ष

करती है। उन्हीं विचारों को संयोजित करने का कार्य ये प्रदर्शनियाँ करती है और ऐसा ही किया चित्रकार सुरेश शर्मा ने अपने चित्रों को कला दीर्घाओं में प्रस्तुत किया जो उल्लेखित है।

(i) सन् 1963 ई. में राजकीय महाविद्यालय, बूंदी में आपने अपने चित्रों की एकल प्रदर्शनी आयोजित की।

(ii) सन् 1973, 79 ई. में रविन्द्र भवन, नई दिल्ली में शर्मा ने चित्रों की एकल प्रदर्शनी लगाई।

(iii) सन् 1973,75 ई. में कॉयर आर्ट गैलेरी, राष्ट्रीय ललित कला अकादमी, नई दिल्ली में प्रदर्शनी।

(iv) सन् 1992, 2011, 2006 ई. में श्री धरणी आर्ट गैलेरी, त्रिवेणी कला संगम, नई दिल्ली में एकल प्रदर्शनी आयोजित की।

(v) सन् 2001 में रेट्रोस्पेक्टीव (Retrospective) प्रदर्शनी ऑफ आर्ट वर्क्स, जवाहर कला केन्द्र जयपुर में शर्मा ने अपने चार दर्जन चित्रों की एकल प्रदर्शनी आयोजित की।

(vi) सन् 1969 ई. में ब्रुकलीन कम्यूनिटी आर्ट गैलेरी, न्यूयार्क, अमेरिका में ग्राफिक प्रदर्शनी का सफल आयोजन किया, जिसमें शर्मा को अत्यधिक प्रोत्साहन मिला और ग्राफिक कार्य को सभी देखने वाले दर्शकों ने सराहा।

(vii) सन् 2004 ई. में सुकृति कला दीर्घा, जवाहर कला केन्द्र में ‘शो ऑफ रिसेन्ट ड्राइंग’ नाम से चित्रों की एकल प्रदर्शनी लगाई जहाँ राजस्थान के युवा चित्रकारों के लिये एक मंच तैयार किया।

(viii) सन् 2007 ई. में ‘प्रिन्स ऑफ वेल्स म्यूजियम आर्ट गैलेरी मुम्बई में आपके चित्रों की एकल प्रदर्शनी लगी, जहाँ आपके 40 चित्रों को प्रदर्शनी में लगाया गया।

(ix) सन् 2006 ई. में राष्ट्रीय कला प्रदर्शनी, केन्द्रीय ललित कला अकादमी नई दिल्ली द्वारा आयोजित में एक प्रदर्शनी।

(x) सन् 2010 ई. में भारत भवन भोपाल में अपने चित्रों की एकल प्रदर्शनी जिसमें आपके 52 चित्रों को प्रदर्शित किया गया।

4.5 सामूहिक चित्र प्रदर्शनियाँ –

सामूहिक चित्र प्रदर्शनियों में भी श्री सुरेश शर्मा राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय स्तर भी अपने चित्रों को प्रदर्शित करते रहे।

- दिल्ली में त्रिनाले द्वारा आयोजित 'इण्डिया सेक्शन' में शर्मा की 5 पेन्टिंग को महत्त्वपूर्ण स्थान मिला।
- सन् 1988 ई. में जापान में आयोजित 'इण्डिया फेस्टीवल' की समसामयिक कला प्रदर्शनी में भी आपके चित्रों को स्थान मिला, जिन्हें जापान के यूथ कलाकारों ने प्रशंसनीय कार्य बताया।
- सन् 1989 ई. में रूस में आयोजित 'इण्डिया फेस्टिवल' में भी आप चित्र प्रदर्शित हुए।
- सन् 1998 ई. में बांग्लादेश में आयोजित बिनाले द्वारा लगाई चित्र प्रदर्शनी में भी सुरेश शर्मा के चित्रों को प्रमुख जगह मिली।
- सन् 1980 ई. एशियन आर्ट (कला) प्रदर्शनी 'फाकुकाओ' जापान में आयोजित 'इण्डिया सेक्शन' में आपके चित्र प्रदर्शित हुए।
- सन् 1985 ई. में राष्ट्रीय ललित कला अकादमी द्वारा आयोजित सिल्वर जुबली चित्र प्रदर्शनी में भी सुरेश जी के चित्र प्रदर्शित हुए, जिन्हें कला समीक्षकों ने सराहा।
- सन् 2000 ई. में राष्ट्रीय ललित कला अकादमी, नई दिल्ली द्वारा आयोजित 42वीं राष्ट्रीय कला प्रदर्शनी में देश के ख्यातनाम चित्रकारों के बीच आपके चित्रों की विशेषताओं की खुशबू से पूरा कला जगत लम्बी सांसे भरने पर मजबूर हुआ।
- सन् 2001 ई. में ताओ कला दीर्घा मुम्बई में आयोजित ईस्ट वेस्ट साउथ नोर्थ कला प्रदर्शनी में भी आपके चित्रों की प्रदर्शनी लगी। इन चित्रों में सम्पूर्ण भारतीय कला प्रयोगवादी शख्स की पहचान और बढ़ी।

- सन् 2006 ई. में राष्ट्रीय ललित कला अकादमी द्वारा सिंगापुर में आयोजित भारतीय अमूर्त कला प्रदर्शनी में तो शर्मा के अरूप चित्रों ने ऐसी छाप छोड़ी, जिससे भारतीय कला जगत के अमूर्तवादी चित्रकार आपके सामने बौने नजर आने लगे।
- इसके अलावा आपने अर्न्तराष्ट्रीय कला प्रदर्शनी, जापान में भी अपने चित्रों को प्रदर्शित किया।

  कला प्रदर्शनियों के माध्यम से आपकी कलाकृतियों ने समाज में उसे बोधगम्य बनाया तथा अनुभवों को युवा कलाकारों के अशांत मन जड़ता प्रदान की।

  श्री शर्मा ने उपरोक्त सभी चित्र प्रदर्शनियों के अलावा भी कई जगह अपने चित्रों को प्रदर्शित किया है।
- सन् 2005 ई. में 77वीं वार्षिक अखिल भारतीय कला प्रदर्शनी आईफेक्स, नई दिल्ली में सामूहिक प्रदर्शनी।
- सन् 2008 ई. समसामयिक कलाकार ग्रुप प्रदर्शनी, समन्वय आर्ट गैलेरी, जवाहर कला केन्द्र, जयपुर में सामूहिक चित्र प्रदर्शनी।

4.6 कान्फ्रेन्स एण्ड सेमिनार –

कलाविद् सुरेश शर्मा ने देश–विदेश की कई अनेक संगोष्ठियों में बढ़–चढ़कर भागीदारी निभाई है जिनमें आप कला के बदलते परिवेश व उसकी उन्नती और कला के नये आयामों पर विस्तार से चर्चा कर अपनी बात रखने की निरन्तर कोशिश करते रहे हैं। आपने सदैव यही प्रयास किया कि कला की समस्त विधाएँ समृद्धि की और उन्मुख हों 5 दशकों से आप भारतीय कला एवं संस्कृति को समृद्ध बनाने एवं प्रोत्साहित करने की दिशा में प्रयासरत हैं। आप परम्परा एवं यथार्थ चित्रण से आगे प्रयोगवादी रूपों को 20वीं सदी में राजस्थान के अमूर्त कला आन्दोलन को राष्ट्रीय

कला धारा में प्रथम पंक्ति में स्वीकार कर इसको संबल प्रदान करते हैं और इनके लिए कॉन्फ्रेंस व सेमीनार का चुनाव सही दिशा में सिद्ध हुआ है।

- ♦ सन् 1973 ई. में राष्ट्रीय ललित कला अकादमी, नई दिल्ली की संगोष्ठी में हिस्सा लिया।
- ♦ सन् 1972, 2002 ई. में राजस्थान ललित कला अकादमी जयपुर द्वारा कला संगोष्ठी में साझेदारी।

4.7 सदस्यता –

चित्रकार सुरेश शर्मा की उपलब्धियों में आपकी सदस्यता प्रमुख स्थान रखती है आपकी मौजूदगी किसी भी कला संस्था व कला ग्रुप के लिए लाभदायक रही है आप विभिन्न कला संस्थाओं, कला दीर्घाओं या फाईन आर्ट विभागों से जुड़े रहे हैं जो निम्न हैः–

(क) कला ग्रुप टखमण–28 के FOUNDER & चेयरमेन अर्थात् इस ग्रुप के प्रमुख संस्थापक रहे हैं आपने इस कला ग्रुप को नई ऊँचाइयाँ प्रदान की जिसमें आपका विशेष योगदान रहा है। आपके संस्थापक रहते हुए टखमण–28 में अनवरत विकास करते हुए राष्ट्रीय स्तर अपना विशिष्ट स्थान बनाया है गत तीन दशकों से यह ग्रुप उदयपुर के अतिरिक्त जयपुर, दिल्ली, कोलकाता, हैदराबाद, चैन्नई, मुम्बई आदि 4 स्थानों पर समूह एवं एकल प्रदर्शनियाँ आयोजित कर चुका है। अनेक शिविर टखमण–28 के तत्वाधान में हो चुके हैं टखमण–ग्रुप ने उदयपुर में भूमि क्रय कर भवन निर्माण किया जिसमें चित्रकला, मूर्तिकला व ग्राफिक स्टूडियो स्थापित है यह सब आपके कार्यकाल में हुआ।

(ख) राजस्थान ललित कला अकादमी जयपुर के आप पूर्व उपचेयरमेन रहे हैं। आपके चेयरमेन रहते हुए अकादमी ने हर वर्ष कला मेले, कला शिविर, छात्र कला प्रदर्शनियाँ आयोजित की और यह निरन्तर चली आ रही है।

(ग) सन् 1972 से 80 ई. व 1984 से 88 ई. तक राष्ट्रीय ललित कला अकादमी, नई दिल्ली के सदस्य भी शर्मा जी रहे।

(घ) सन् 1978 से 89 ई. तक श्री सुरेश शर्मा राजस्थान विश्वविद्यालय व मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय के बोर्ड सदस्य रहे। जिनके कार्यकाल में ललित कला संकाय उन्नति की और उन्मुख हुआ।

(ङ) श्री शर्मा मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय में ललित कला संकाय के हैड ऑफ डिपार्टमेन्ट (विभागाध्यक्ष) भी रहे। आपके विभागाध्यक्ष रहते हुए ललित कला संकाय के छात्रों ने कला की भाव प्रवण विशेषता हासिल की तथा श्री शर्मा ने अपने सेवाकाल के समय अनेक विद्यार्थियों को पी.एच.डी. (रिसर्च) करवा चुके है।

4.8 चित्र संग्रह –

शर्मा ने अपने चित्रकर्म काल में सैंकड़ों कलाकृतियाँ बनाई, जिनमें आपने कई माध्यमों में कार्य किया जैसे–कैनवास पेन्टिंग, प्रिन्ट मेकिंग, टेराकोटा, म्यूरल इत्यादि इन सभी कलाकृतियों में से कुछ कलाकृतियाँ अनेक निजी व सावजनिक संग्रहों में संग्रहीत है।

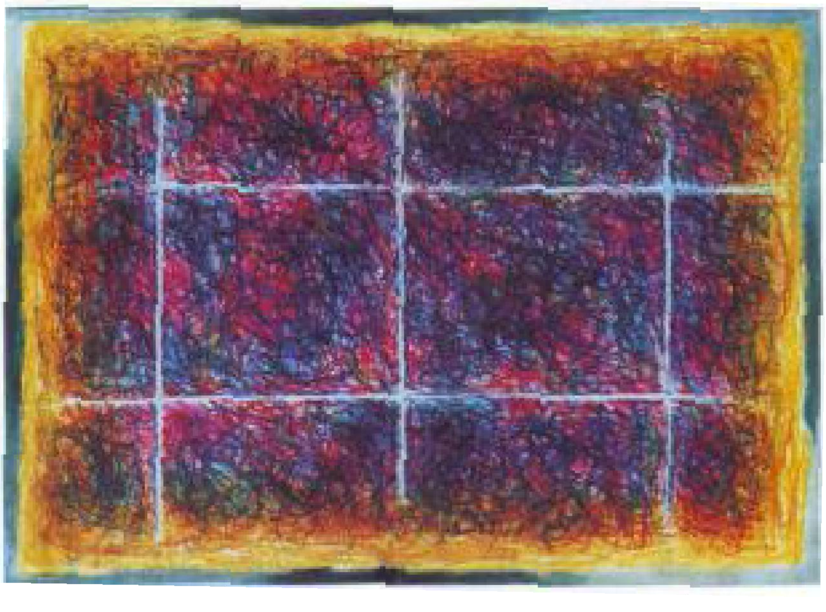

चित्र संख्या – 13 अन्टाइटिल्ड

(i) राष्ट्रीय ललित कला अकादमी, नई दिल्ली

(ii) राष्ट्रीय आधुनिक कला दीर्घा, नई दिल्ली

(iii) जवाहर कलाकेन्द्र, जयपुर (राजस्थान)

(iv) अमेरिकन दूतावास, नई दिल्ली

(v) राज्य समसामयिक कला दीर्घा, जयपुर

(vi) हुडको (HUDCO) पैलेस, नई दिल्ली

(vii) ताज होटल नई दिल्ली

(viii) नीरजा मोदी स्कूल, जयपुर

(ix) ताओ आर्ट गैलेरी, मुम्बई

नोट : द्वितीय अध्याय की उपर्युक्त शोध सामग्री चित्रकार सुरेश शर्मा जी के साक्षात्कार से ली गई है।

♦♦♦♦♦

तृतीय अध्याय

विविध क्षैत्रों में सृजनात्मक भूमिका

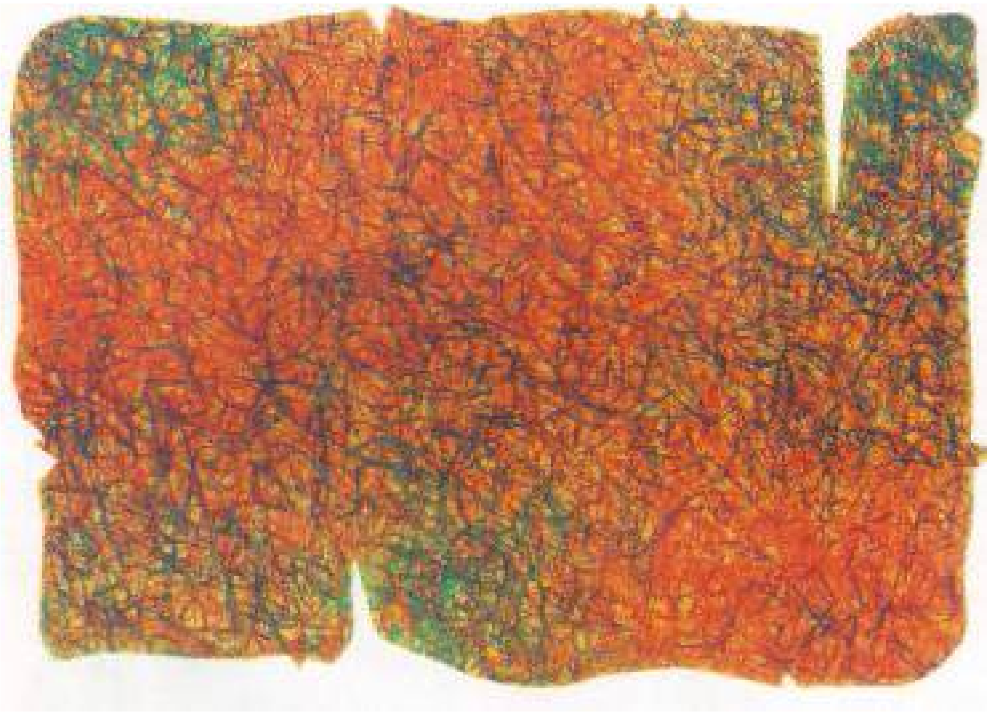

(1) शिक्षक एवं आचार्य के रूप में भूमिका

(2) कला के क्षैत्र में दृष्टि

(3) साहित्य सृजन

(4) आधुनिक चित्रकला के प्रति दृष्टिकोण

विविध क्षैत्रों में सृजनात्मक भूमिका

कलाकार जिस युग में आविर्भूत होता है, उस युग का चित्र स्वतः ही उसकी कृतियों में झाँकने लगता है, इच्छा होने पर भी वह अपने समय के प्रभाव से मुक्त नहीं रह सकता क्योंकि कलाकार का निर्माण उसकी समकालीन युग की परिस्थितियों से ही होता है। और प्रत्येक युग में कलाकार इन परिस्थितियों से उत्पन्न समस्याओं का समाधान ही अपनी विभिन्न रचनाओं से प्रस्तुत करता है। कला का अस्तित्व सामाजिक है। जिस प्रकार की सामाजिक विकास की परिस्थिति होती है वैसी ही मनुष्य की विचारधारा बनती है और उसी के अनुसार व्यक्ति के मस्तिष्क में बिम्ब विकसित होते हैं। ये बिम्ब ही कला–रूपों की प्रेरणा बनते हैं और इसी से विविध क्षैत्रों में सृजनात्मकता की कड़ी से कड़ी जुड़ती चली जाती है। इसी क्रम में कलाविद् सुरेश शर्मा ने अपने जीवन काल में कई ऐसी कड़ीयाँ जोड़ी, जो आज अपने आप में एक मिशाल है। शर्मा राजस्थान की समसामयिक कला के एक ऐसे पर्याय हैं जिनकी भूमिका आने वाली पीढ़ी के लिए प्रेरणा दायक होगी। सुरेश जी अपने चित्रकर्म में सृजन के विविध रंगों को एक साथ लेकर चले हैं, अपने असाधारण व्यक्तित्व के धनी शर्मा, परिवार के प्रत्येक सदस्य में अपनी कला की परछाइयों को निहारते नज़र आते हैं।

सुरेश शर्मा ने कला सृजन का कोई सा भी क्षैत्र हो उसमें बड़ी तल्लीनता से कार्य किया है, और पूरी ईमानदारी के साथ अपने कार्य को मुकाम तक पहुँचाया है। शर्मा का अलग–अलग क्षैत्रों में सृजनात्मक कार्य उच्च कोटी का होने के साथ ही उत्कृष्टता लिये हुए हैं। आपने अपने जीवन में विविध रूपांकनों को बड़ी सहजता व तन्मयता से बनाया है। आपने भारतीय संदर्भ में सृजनात्मक प्रवृत्ति को एक सुनिश्चित परम्परा माना है, जिसका आधार सर्वव्यापी निष्ठा है। यह एक ऐसी नृत्य प्रणाली है जो विस्मयकारी है। यह ध्यान की भाव यात्रा है, और कला एवं स्थापत्य की सम्मोहक चित्र प्रतिमा है, जो जीवन से भी अधिक उदात्त् एवं प्राणवान है। इन सभी ने मनुष्य को भौतिक सीमाओं तथा सांसारिक व्याह मोह से मुक्ति दिलाने में सहायता प्रदान

की है। शर्मा ने समसामयिक कला जगत में सृजनात्मक परम्परा को आधुनिकता के संदर्भ में देखा और साथ ही मानवीय भावनाओं की प्रवृत्तियों का समुचित समावेश करके नवीन आयाम देने का प्रयास किया। विविध क्षैत्रों में आपकी भूमिका से नई पीढ़ी ने बहुत कुछ सीखा है। प्रारम्भ से ही शर्मा जी कला चेतना के लिए प्रतिबद्ध रहे। दीन–दुखियों को उपदेश देने के बजाए आपने चित्रण कार्य करना अधिक सार्थक समझा। आपने प्राचीन अभिजात्य परम्पराओं और रूढ़ियों को नकार कर आन्तरिक सौन्दर्य को प्राकृतिक सौन्दर्य में मानवता को खोजा। जिस समय भारत में भौतिक सौन्दर्य के चित्रण के लिए सुन्दर मॉडलों से अभ्यास किया जा रहा था, उस समय शर्मा प्रकृति के करुणामय सौन्दर्य में अपनी अभिव्यक्ति को तलाश रहे थे और यही बात उन्हें एक कथ्य प्रदान करती है। जिसकी अभिव्यक्ति करके ही वे सहज होते। उनकी इस शाश्वत सौन्दर्य दृष्टि ने उन्हें विश्व स्तर की कलामय छवि के लिए स्थापित किया। आपने कला की इस भूमिका को मानवीय सरोकार को समर्पित किया। इन्हीं भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए शर्मा ने प्राचीन कला के स्वरूप को बदलकर उसे आधुनिक एवं नूतन आयाम दिये। कला के क्षैत्र में आब्जेक्ट और सब्जेक्ट की चर्चा प्रारम्भ से ही होती रही है। कला मनीषियों ने वस्तु और विषय को बड़ी व्यापक दृष्टि से देखा और दृष्टि में यह जगत आब्जेक्ट अर्थात वस्तु है और विषय भी है। शर्मा ने इन्हीं विषयों के आधार पर प्रकृति के ऊपर मानसिक जगत का प्रक्षेपण करके उसे अपनी आवश्यकताओं के अनुसार, प्रकृति चित्र का निर्माण करके उसे बिम्ब के रूप में प्रस्तुत किया। उसका सम्बन्ध हमारी इन्द्रियों से होता है। हम अपनी आवश्यकताओं के द्वारा निर्मित चित्रों को मानव हृदय की अनुभूतियों से सम्पृक्त करके जीवन प्रदान करते हैं, और इसीलिए श्री शर्मा ने अपने चित्रों का ताना–बाना प्राकृतिक आब्जेक्ट के इर्द–गिर्द ही बुना। शर्मा की यही एकाकार होने की दृष्टि उनकी कला का प्राण है। आपने जिस किसी भी विषय को चुना उसी के माध्यम से अपनी गहन संवेदना को व्यक्त किया। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि शर्मा ने कला के कुछ अंश ग्रामीण अंचल से और सामान्य लोगों से ही सीखा। सबसे पहली उनकी चित्रशाला

गाँव की जमीन ही थी। इसलिए उनके चित्रों में अपनी धरती और फसलों की सौंधी महक अपने कैनवास पर उतारकर चमत्कारिक कर्म जल से प्रक्षलित करके रंगों से चमत्कृत कर दिया।

शर्मा के अनुसार कलाकार कलाप्रतिभा के साथ जन्म लेते हैं परन्तु परिवार, परिवेश, युग और परिस्थितियाँ उन्हें अभिव्यक्ति के लिए अनुभव और शक्ति देते रहते हैं। कहीं सुखों से तो कहीं दुखों और पीड़ाओं से उनकी कला विविध माध्यमों से नये–नये रूपों में अभिव्यक्त होती रहती है। सृजन के लिए कलाकार कहीं परिवेश से सामंजस्य तो कहीं विद्रोह करके निरन्तर कलाधर्म की अलग–अलग भूमिका में स्थापना करता है। अतः किसी कलाकार के मूल्यांकन के लिए प्रारम्भ से ही उसके जीवन, परिवेश और परिस्थितियों को अलग–अलग प्रकार से व्यंजित करता है। इस संदर्भ में सुरेश जी की कला के विविध क्षैत्रों में सृजनात्मक भूमिका रही है।

(1) शिक्षक एवं आचार्य के रूप में भूमिका

(2) कला के क्षैत्र में दृष्टि

(3) साहित्य सृजन

(4) आधुनिक चित्रकला के प्रति दृष्टिकोण

(1) शिक्षक एवं आचार्य के रूप में भूमिका –

आधुनिक युग में शिक्षक की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। शिक्षक वह पथ प्रदर्शक होता है। जो हमें किताबी ज्ञान ही नहीं, बल्कि जीवन जीने की कला भी सिखाता है। भारतीय संस्कृति में शिक्षक को दो स्वरूपों में देखा जाता है, जिन्हें आध्यात्मिक गुरु और लौकिक गुरु के रूप में परिभाषित किया गया है। शिक्षक का दर्जा समाज में हमेशा से ही पूज्यनीय रहा है, क्योंकि उन्हें गुरु की संज्ञा दी गई है। लेकिन अब सामाजिक व्यवस्थाओं का स्वरूप बदल गया है। इसलिए शिक्षक भी इस परिवर्तन से अछूता नहीं रहा है। शिक्षक अक्षरों व मात्राओं को जोड़कर उन्हें छोटे–छोटे बच्चों को

सिखाकर एक ऐसे इंसान की रचना करते है। जो देश की किस्मत को नई दिशा देते हैं। शिक्षक ही विद्यार्थी के जीवन की शुरुआत की बुनियाद रखता है और जब बुनियाद मजबूत हो तो विद्यार्थी का जीवन तो सफल होता ही है साथ ही साथ शिक्षक का मस्तिष्क गर्व से ऊँचा हो जाता है। परन्तु शिक्षक की शिक्षा में वो सभी गुण विद्यमान हों जो एक सफल विद्यार्थी के लिए जरुरी है।

चित्र संख्या – 14 मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, श्री शर्मा की कर्मस्थली

शिक्षा के तात्त्विक विश्लेषण से पता चलता है कि शिक्षक व विद्यार्थी के अर्न्तसम्बन्ध बहुत गहरे हैं। और ये सदैव एक दूसरे के पूरक रहे हैं ऐसे ही शिक्षक व आचार्य की भूमिका कलाविद् श्री सुरेश शर्मा ने निभाई। आप में आपके पिता स्व. श्री नन्दलाल जी शर्मा के अधिकांश गुण समाहित थे जो एक आदर्श शिक्षक रह चुके थे। इन्हीं के गुणों से प्रभावित होकर आपने भी इस क्षैत्र में कदम बढ़ाया। चित्रकार सुरेश शर्मा जी विश्वभारती कला संस्थान शान्ती निकेतन, प. बंगाल से आने के पश्चात सन् 1962 ई. में राजकीय महाविद्यालय, बून्दी में प्राध्यापक के रूप में नियुक्ति मिली। बूंदी में रहते हुए आपने एक अच्छे कला शिक्षक की भूमिका अदा की। आपके भीतर जितनी योग्यता कला शिक्षा की थी, वो सब आपने अपने विद्यार्थियों में बिखेर दी। और आपकी उत्कृष्ट कला शिक्षा के द्वारा कई छात्र आज अपना कार्य कला जगत में निरन्तर कर रहे हैं। आपमें यह गुण अपने पिता एवं कला गुरु स्व. पी.

एन. चोयल से आये। जब तक आप बूंदी राजकीय महाविद्यालय में प्राध्यपक पद पर रहे जब तक महाविद्यालय के चित्रकला विभाग की छात्र चित्रकला प्रदर्शनी में हर वर्ष छात्रों के वार्षिक कार्य को प्रदर्शित करवाते। कला विद्यार्थियों को कला की सभी तकनीकों व माध्यम की जानकरी देते रहे। तथा भारतीय चित्रकला इतिहास व कला संस्कृति की सम्पूर्ण जानकारियाँ भली–भाँति अपने विद्यार्थियों तक पहुँचाई। साथ ही अपने कार्य को भी निरन्तर करते रहे। तत्पश्चात श्री शर्मा सन् 1964 ई. में मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय में सेवारत हुए तथा यहीं से विभागाध्यक्ष पद पर रहते हुए सेवानिवृत भी हुए। इस दौरान आप उदयपुर में रच–बस गये। यहाँ पर आपने अपने कार्य क्षैत्र में इजाफा करते हुए अपनी कला को निरन्तर ऊँचाइयों की ओर ले गये। तथा आप अनुभव सिद्ध परिपक्व स्तर के एक ख्याती प्राप्त शिक्षक, मार्गदर्शक एवं कलाकार रहे हैं। सातवें दशक से प्रारम्भ राजस्थान का आधुनिक कला आन्दोलन अपने उभय भावी स्वरूप में था अतः कला के विद्रोही तेवर कई धाराओं में प्रकट हुए और कला शिक्षा के नए विकल्पों का प्रादुर्भाव किया। शर्मा ने प्रचलित अकादमिक कला शिक्षा द्वारा अवरुद्ध मार्ग पुनः मुक्त करने की पूरी कोशिश की। आपने प्रचलित मृतपायः पारंपरिक और तथाकथित आधुनिक कला के नाम पर किये जा रहे प्रयोगों की जगह सुस्पष्ट दिशा में वैयक्तिक अभिव्यक्ति और विशुद्ध कलावादी दर्शन को महत्त्व दिया। शर्मा ने अपने अध्यापन व कला सृजन द्वारा भारतीय परिदृश्य में राजस्थान की कला का महत्त्वपूर्ण स्थान स्थापित किया। आपने कला के विद्यार्थियों को राजस्थानी कला परम्परा और भारतीय आधुनिकता के आधार पर अच्छी शिक्षा प्रदान की। अपने व्यक्तिक के लिये सदैव संघर्षरत सुरेश शर्मा कला समीक्षक चार्ल्स फाबरी के शब्दों के अनुसार राजस्थान आधुनिक कला के प्रणेता रहे हैं। आपने एक शिक्षक की भूमिका निभाते हुए भी चित्रों की कहानी राजस्थान के युवा कलाकारों के बीच बयां की और वर्तमान समय में भी आपने अपने आस–पास के वातावरण को कलामय बनाया है और अपनी सेवाकाल के तीन दशक पूरे कर सेवानिवृत्त हुए। परन्तु आपने प्राध्यापक के पद पर रहते हुए विभिन्न कला संस्थाओं, विश्वविद्यालयों व महाविद्यालयों में अपने लेखन, रेखांकन एवं शोध को पुष्ट किया है। आपने इस

विषय को सारगर्भित करते हुए आवश्यकतानुसार विद्वानों के विचारों से भी विद्यार्थियों को लाभान्वित किया है।

आपने दो भिन्न दृष्टियों से प्रतिभा सम्पन्न गुणों व विचारों के सहयोग से कला के प्रति विद्यार्थियों के दृष्टिकोण में अत्यधिक व्यापक परिवर्तन किया और भारतीय कला के उत्तम उदाहरणों को बताने में सफल हुए। आपने शिक्षक की भूमिका में अपने कलाविद्यार्थियों व युवा चित्रकारों से अपने विचारों व लेखों के माध्यम से मार्ग प्रशस्त किया है और कहा है कि– "आज कला विद्यार्थियों का सच्चा कार्य यूरोपीय तरीकों और आदर्शों का समावेश और प्रचार–प्रसार करना नहीं है। बल्कि भारतीय परम्परा के टूटे हुए सम्पर्क सूत्रों को वापस एकत्र करना और शक्ति प्रदान बनाना है और राष्ट्रीय संस्कृति के अभिन्न अंग के रूप में भारतीय कला के विचार को मूर्त करना है और यह युग कला की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रहा है कला प्राप्त करने के इच्छुक विद्यार्थी सुरेश शर्मा ने प्राचीन कला पद्धति के अनुसार आधुनिक कला की लहर व्याप्त की। और इसीलिए आपने कला ग्रुप टखमण–28 की आधार शिला रखी।" जिसमें राजस्थान के युवा कलाकारों के संयुक्त प्रयासों से कला विद्यार्थियों के लिए प्रेरणादायक संस्था साबित हुई। अतः आपने शिक्षक व आचार्य की भूमिका में प्रकृति के अनन्त अभिसार, बासन्तिक उन्माद की आँख मिचौनी और सृष्टि की छाया–प्रकाश की इंगित व्यंजना तथा क्षणिक स्पर्श व चापल्य व भीतरी कौतुहल को आत्मबद्ध करके अपने विद्यार्थियों में उंढेल दिया और अपने कलाकर्म के माध्यम से सदैव आन्तरिक शान्ति की खोज को जारी रखा है।[1]

(2) कला के क्षैत्र में दृष्टि –

2.1 समसामयिक कला की सम्भावनाएँ :–

श्री सुरेश शर्मा ने अपनी कला ज्ञान दृष्टि से कला के क्षैत्र में समसामयिक कला की सम्भावनाएँ खोजी है। आपका मानना है कि 20वीं सदी के प्रारम्भ के आधुनिक कला आन्दोलनों ने समसामयिक कला में जो स्वरूप प्रस्तुत किया है उनमें

कला के जटिलतम और सहज रूप दोनों ही दृष्टिगत होते हैं। अभिव्यक्ति में कलात्मक माध्यमों में यह प्रवृत्तियाँ प्रारम्भ से ही हो रही है। प्रागैतिहासिक काल में भी कलाकार इन दोनों प्रवृत्तियों में कार्य करते रहे हैं एक और सहज अभिव्यक्ति है तो दूसरी ओर बौद्धिकतामय युवा प्रतीकवादी रूपाकार। समसामयिक कला ने आधुनिक कला आन्दोलनों में सीमित दायरों से बाहर निकलकर कलाकार स्वयं उन्मुक्त भाव से रचना करने लगा। एक ओर कलाकार की व्यक्तिवादी अभिव्यक्ति ने व्यक्तित्व का विकास कर कला को अनुकृति की सीमाओं से बाहर निकालने का श्रेय प्राप्त किया है तो दूसरी और आधुनिक कला आन्दोलनों के विविध रूपों की छाप व्यक्तिवादी कला के रूपाकारों पर स्पष्ट दृष्टिगत होती है। समसामयिक कला आधुनिक कला आन्दोलनों या वादों से भिन्न है, क्योंकि समसामयिक कला को किसी एक वाद की परिधि में बांधा नहीं जा सकता है। कलाकार अपने मनोनुकुल वादों को चयनित कर, इच्छित रूपाकार निर्मित करता है जिन्हें अनुकृति नहीं कहा जा सकता, वह तो उसकी उन्मुक्तता व कल्पना की उड़ान का परिचायक है। कला अर्न्तमन की अभिव्यक्ति है वह उसके भाव को दर्शाती है। जनसाधारण समसामयिक कला को किसी वादों या

चित्र संख्या – 15 श्री शर्मा बांए से प्रथम अपने अनुभव बांटते हुए

कला आन्दोलनों की सीमा में न बाँध पाने के कारण भी उसे जटिल दिखाई देती है। किन्तु वास्तविकता यह है कि समसामयिक कला का जो रूप हमें इस समय में प्राप्त हुआ है, वो कला को विविधता प्रदान करता है, अभिव्यक्ति और कल्पना को माध्यमों के बन्धनों से भी स्वतंत्र कर दिया। अतः समसामयिक कला गहराई से चिन्तन मनन की अभिव्यक्ति को प्राप्त करती है। समसामयिक कला में सामयिक समाज के जीवन का प्रतिबिम्ब झलकता है। कला के विविध स्वरूप एवं आयाम इसकी समसामयिक जीवन के प्रभाव को ही दर्शाते हैं। आज जिस प्रकार से औद्योगिकरण, विभिन्न समस्याओं का सीधा प्रभाव मानव मन पर पड़ रहा है वह समसामयिक प्रभाव को अपनी कला में दर्शाता है। अतः समसामयिक कला को किसी विशिष्ट कला आन्दोलनों का नाम नहीं दिया जा सकता है। समसामयिक कला के स्वरूप को निखारने के लिए संचार प्रसार के साधनों टी.वी. इत्यादि माध्यमों ने भी अपना प्रमुख भाग अदा किया है। कलाकार यह जानता है कि कौनसा कलाकार किस प्रकार से कलाकृति का निर्माण कर रहा है और कौनसी कृति की क्या विशेषता है समसामयिक कला का विस्तार क्षैत्र इतना अधिक व्यापक एवं अथाह है कि कलाकार अपनी कला का निर्माण कहीं से भी कर सकता है। कहीं से भी अपने प्रतीकों को रख सकता है उसके प्रतीक व्यक्तिगत होते हैं। मेरा अभिप्राय परम्परा और सामयिक कला का विरोध नहीं है परम्परा का अनुसरण व निर्वाह भी समसामयिक मानसिकता का ही प्रभाव है किन्तु समसामयिकता अंधानुकरण व पुनरावृत्ति का विरोध करती है। क्योंकि कलाकार यह जानता है कि कहाँ तक कला है व क्राफ्ट से क्यों भिन्न है। समसामयिक कलाकार समय की परम्परा का निर्वाह करता है न कि अंधानुकरण जहाँ तक सामयिक कला के परिवेश में समसामयिक कलाकार अपनी कला के उद्देश्य के प्रति उतना ही प्रतिबद्ध है जितना की प्राचीन समय में था। किन्तु समसामयिक कलाकार को वह संरक्षण प्राप्त नहीं है जो प्राचीनकाल में प्राप्त था। आज कलाकार को दोहरा संघर्ष करना होता है जीवन यापन संघर्ष के साथ–साथ अपनी पहचान बनाने के लिए संघर्ष निरन्तर बढ़ता जा रहा है वह उन भव्य रूपों का एवं कल्पना को साकार रूप देने में आर्थिक कारणों से सामर्थ्य रहित हो जाता है। इसके साथ ही उसकी कृति व्यक्तिवादी स्वरूप होने से सामूहिक कला निर्माण का अंग नहीं है। उसका मार्ग तो स्वयं को ही चुनना होता है।

जहाँ समसामयिक कला में रचनाशीलता व सृजनशीलता का महत्त्व बढ़ा है, वहीं कलाकारों की आर्थिक परिस्थितियों ने उसे समाज में उच्च स्थान दिलाने के मार्ग में बाधाएँ उत्पन्न भी की है। कलाकार एक विशिष्ट प्राणी होते हुए भी समाज में वह स्थान प्राप्त नहीं करा सका जो कि उसे प्राप्त होना चाहिए था।

2.2 कला में सौन्दर्याभिव्यक्ति –

शर्मा के अनुसार जहाँ तक सौन्दर्य और अभिरूची का पक्ष है। मानव सदैव ही सहज रूप से सौन्दर्य के प्रति आकृष्ट होकर उसका रस्वास्वादन करता रहा है। यह सौन्दर्याभिव्यक्ति व रस्वास्वादन का व्यक्ति विशेष की धरोहर है। उसे बाध्य नहीं किया जा सकता है कि वह समान अनुभूति को प्राप्त हो, फिर भी उसके अर्न्तमन में व्याप्त दैवीय रूप उसे समान रूप से रस्वास्वादन के लिये प्रेरित करते हैं। यही कारण है कि व्यक्ति विशेष का रस्वास्वादन सर्वसामान्यीकृत हो जाता है। अतः कला के समान ही सौन्दर्य के प्रति इस जीवन में उसका प्रभाव क्षैत्र बढ़ा है। अतः कलाकार का पक्ष एकाकी नहीं है वह उसकी पृष्ठ भूमि में विद्यमान रहते है। उसकी प्रेरणा के लिए जनजीवन वातावरणीय प्रभाव प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से योगदान देता रहता है समसामयिक सौंदर्यशास्त्र कला निर्माण में सहायक होती है अतः सौन्दर्यशास्त्र व कला को अलग नहीं किया जा सकता है। कला के विविध माध्यमों ने कला रचना पक्ष को ही आगे बढ़ाया है। चाहे वह कवि, मूर्तिकार, वास्तुकार, चित्रकार ही क्यों न हो। कलाकार के पास संसार से जुड़े रहने का एक मात्र साधन कला है और उसकी रचनाधर्मिता हमें पूर्ण दार्शनिक होने से बचाये रखती है। कलाकार अपने नित नवीन रूपाकारों के सृजन में कार्यरत रहता है। वह मौलिक आकारों के चिन्तन मनन में साधक के समान है। उसकी प्रतिबद्धता और दायित्व उसे सौन्दर्य निर्माण के प्रति सजग बनाए रखती है।

आज के युग में कलाकारों के पास सौन्दर्याभिव्यक्ति, कल्पनाओं, विचारों और अतीत में की गई रचनाओं की अमूल्य धरोहर है। यह धरोहर उसे नवचिन्तन, मनन, रचनाकार्य के लिए प्रेरणा स्त्रोत बन जाती है। उसकी कल्पना की उड़ान के विस्तार को बांधा नहीं जा सकता है। उसके सौन्दर्य का मापदण्ड व्यक्ति विशेष का न

होकर सर्वजनहित हेतु रचना कार्य के लिए सक्रिय हो जाता है। अतः सामयिक कलाकार किसी से बंधा हुआ नहीं है। वह स्वतंत्र सौन्दर्यात्मक अभिव्यक्ति की रचना करता है और वह वर्षों के निरन्तर प्रयास के बाद प्राप्त हुआ है। अतः इसमें निहित सम्भावनाएँ बहुत विस्तारित और विविधता को लिये हुए हैं, कलाकार के पास इस समय में एक ज्ञान का अतुल भंडार है, जो उसे नये–नये रूपाकारों की रचना के लिये प्रेरित करती है, वह अपनी कला का मूल्यांकन स्वयं ही करता है, क्योंकि आज कलाकार स्वयं के अस्तित्व के लिये अधिक संवेदनशील और सजग है। अतः सौंदर्याभिव्यक्ति से कला के सृजन विस्तार की सम्भावनाएँ अधिक बढ़ जाती है।[2]

2.3 कला में शिक्षा का स्थान –

मनुष्य ने आनन्द की प्राप्ति और ज्ञान के लिए जितने उपायों का विकास किया है उनमें भाषा का विशेष स्थान है। साहित्य, दर्शन, विज्ञान और प्राकृति के नाना प्रकार के विषयों की चर्चा भाषा को माध्यम बनाकर ही की जाती है। साहित्य मनुष्य को आनन्द देता है, परन्तु उसकी अभिव्यक्ति का क्षैत्र सीमित होता है। उसकी इस अभाव की पूर्ति करती है, ललित कलाएँ व अन्य कला का साधन। जैसे साहित्य की अभिव्यक्ति की अपनी विशिष्टता है वैसे ही ललित कलाओं की भी। मनुष्य इन्द्रियों द्वारा, मन द्वारा बाह्य जगत की समस्त वस्तुओं का स्थूल ज्ञान एवं उनके प्रति रसानुभूति का अनुभव करता है और उसे ही कला के माध्यम से दूसरों के सामने परिवेशित करता है। शिक्षा के क्षैत्र में कला की चर्चा के कारण मनुष्य की अवधारणा एवं रसानुभूति दोनों उत्कर्ष को प्राप्त करती है, और उसे कलात्मक अभिव्यक्ति पर अधिकार प्राप्त होता है। जिस प्रकार आँख का काम कान द्वारा नहीं हो सकता उसी प्रकार चित्रकला, संगीत या नृत्य की शिक्षा के लिए लिखने–पढ़ने से नहीं हो सकती।

यदि हमारी शिक्षा का उद्देश्य सर्वांगीण विकास हो तो हमारे पाठ्यक्रम में कला का स्थान अन्यत्र पढ़ाई–लिखाई के विषयों के समान होना चाहिए। हमारे देश में विश्वविद्यालयों की और से अब तक जो व्यवस्था की गई है वह नितान्त अपर्याप्त है।

इसका एक कारण सम्भवतः यह है कि हमारे यहाँ अनेक लोगों की मान्यता है कि कला साधना मात्र पेशेवर कलाकारों का काम है, साधारण आदमी को उससे कुछ लेना देना नहीं है। बहुत से पढ़े लिखे लोग तक कला के सम्बन्ध में अज्ञानता के कारण संकोच का अनुभव करते हैं, जनसाधारण की तो बात ही अलग है। वो तो फोटो और चित्र का अन्तर भी नहीं समझ पाते। वे बच्चों की प्लास्टिक की गुड़िया को एक श्रेष्ठ कलाकृति मानकर उसे देखते रहते हैं। सच पूछिए तो उन्हें अच्छा ही लगता है। अधिक उपयोगिता की दुहाई देते हुए आसानी से उपलब्ध मिट्‌टी की कलगी के बदले लौहे का कनस्तर इस्तेमाल करते हैं। ऐसी स्थिति के लिए देश का शिक्षित समाज एवं विश्वविद्यालय उत्तरदायी है। ऊपर से देखने से विद्या के क्षैत्र में देशवासियों की जैसी सांस्कृतिक उन्नती परिलक्षित होती है। रसानुभूति के क्षैत्र में उनकी दीनता वैसी ही बढ़ती दिखलाई पड़ती है। वस्तुतः यह स्थिति कष्टदायक हो उठी है। इससे मुक्त होने का एक ही उपाय है– आज के समाज के बीच कला की शिक्षा का प्रचलन, क्योंकि यह शिक्षित समाज की कला को एक शैक्षिक मूल्यता प्रदान कर सकता है और इसे आदर्श बना सकता है।

चित्र संख्या – 16 अन्टाइटिल्ड

2.4 कला के प्रति भ्रम –

सदियाँ बीत गई, युग बीत गये, मनुष्य का रूप–रंग, चाल–चलन, आचार–विचार, सभी कुछ बदलता रहा है। साथ ही बुद्धि का विपुल विकास भी हुआ। वर्तमान में मनुष्य परमाणु शक्ति के बल पर चन्द्रलोक तक पहुँच गया, परन्तु आज भी चित्र को वस्तु समझने की भूल करता है, यूरोप के विश्वविख्यात कलाकार रुबेन्स ने ऐसे चित्रों का निर्माण किया जिनमें शरीर के अंग, जीवित लहू युक्त मॉस पेशियों से प्रतीत होते हैं और उन्हें छूकर देखने की अनायास इच्छा होती है, भारत में ऐसी कला दृष्टिगोचर नहीं हो सकती, पर राजा रवि वर्मा ने इस ओर प्रयास किया था। हमारे समाज में भी अधिकतर व्यक्ति–चित्र को ही आदर्श रूप मानते हैं।

चित्र संख्या – 17 अन्टाइटिल्ड

श्री सुरेश का मानना है कि– चित्र–चित्र है, वस्तु–वस्तु है दोनों एक नहीं है हाँ वस्तु का चित्रण हो सकता है और होता आया है और हो रहा है और भविष्य में भी होगा। वस्तु चित्रण ही कला है ऐसा अधिकतर लोगों का ख्याल है, परन्तु आज यह भ्रम काफी हद तक टूट चुका है। कला का कार्य केवल वस्तु चित्र ही नहीं है, बल्कि कला

के माध्यम से हम अपनी भावनाओं तथा विचारों की भी अभिव्यक्ति कर सकते हैं, चित्र ऐसा हो जो देखने वाले के मन पर प्रभाव डाले, विचारों में परिवर्तन करे, नये विचार दे या नव सन्देश व्यक्त करे। शर्मा के अनुसार कलाकार तो ऐसे प्रभावों बहुत ही शीघ्रता से ग्रहण करता है और उसी का फल है, आधुनिक भारतीय चित्रकला में स्वतंत्र चित्रण का प्रचलन। एकाएक कला के क्षैत्र में एक नया तूफान उमड़ पड़ा, स्वतंत्र चित्रण का यह तूफान दिनों दिन जोर पकड़ता चला गया। जो भारतीय समकालीन व आधुनिक चित्रकला का यह तूफान लोगों को आज भी भ्रमित कर रहा है।

2.5 कला की उपयोगिता –

संसार की सम्पूर्ण सभ्यताओं का आधार मनुष्य की सुख पाने अभिलाषा है। सुख की खोज में ही मनुष्य इतना आगे बढ़ पाया है इस खोज के लिए मनुष्य तन मन धन तथा अपनी सम्पूर्ण चेतनाओं से निरन्तर रहता है। मनुष्य का कोई भी ऐसा काम नहीं है जिसमें उसके सुख की आशंका न छिपी हो। मनुष्य अभिलाषाओं की एक गठरी है और इन सभी अभिलाषाओं की वह पूर्ति करना चाहता है। एक और जैसे–जैसे अभिलाषाएँ पूर्ण हो जाती है वैसे–वैसे उसे अधिक सुख की प्राप्ति होती जाती है और दूसरी और उसकी गठरी की अभिलाषाएँ बढ़ती जाती है। यही है मनुष्य का नित्य प्रति का कार्य यही है उसका जीवन। मनुष्य की अभिलाषों का न तो कभी अन्त है और न ही उसकी सुख की लालसा खत्म होती है और संसार के अन्य प्राणी इस प्यास को बुझाने वाले है जिसमें हम और आप सम्मिलित है। इसे हम जीवित रहने की कला कह सकते हैं।

कला काम करने की वह शैली है जिसमें हमें सुख या आनन्द मिलता है वैसे तो कला का नाम लेने पर हमें ललित कलाओं जैसे–संगीत कला, चित्रकला, काव्यकला, नृत्यकला इत्यादि का बोध होता है, या हम यों कह सकते हैं कि जीने की कला में अच्छी तरह सफल होना, हमारे जीवन का लक्ष्य है और ये सब कलाएँ इसमें योग देती है। कला के अर्न्तगत संसार के सभी साधन आ जाते हैं, दर्शन, विज्ञान, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, धर्म, शिक्षा, स्वास्थ्य शिक्षा और दूसरी सभी विधाएँ है।

कला की उपयोगिता सुख या आनन्द की प्राप्ति करना है और सभी कलाओं का यही लक्ष्य है। इसलिए कला की उपयोगिता है, जो भी काम करना है उसे नियमित ढंग से ही करने में सुख की प्राप्ति होती है। जिस काम के करने में हमें सुख मिलता है उसी में हमें मनुष्य को सौन्दर्य के दर्शन होते हैं, या यों कह सकते हैं, सुन्दरतापूर्वक कार्य करने से हमें सुख मिलता है। इसलिए यदि किसी भी काम के करने में सुख की इच्छा करते हैं तो उसे सुन्दरतापूर्वक करना चाहिए। कला का ज्ञान हमें प्रत्येक कार्य को सुन्दरतापूर्वक करना सिखाता है। जीवन में यदि हर कार्य को सुन्दरतापूर्वक किया जाए तो सुख की प्राप्ति अवश्य होगी और यही सुख की प्राप्ति जीवन की कला का प्रथम लक्ष्य है और कला की उपयोगिता प्रत्येक मनुष्य के लिए आवश्यक होगी जिससे जीवन स्वर्ग के समान खुशहाल दिखाई देगा। क्योंकि कला मनुष्य के विचारों का दृश्य रूप है वह हमारी कल्पना शक्ति आदर्श प्रियता एवं सृजन शक्ति से युक्त है। यह सृजन शक्ति व्यक्ति में अपनी विशेष मनोभावनाएँ, संवेदनाएँ विचार पद्धति होने के कारण होती है। क्रियाओं एवं प्रतिक्रियाओं के कारण नई–नई सम्भावनाएँ जन्म लेती है और कला का नया रूप सामने उभरकर आता है। कला से अपनी सृजनहारी प्रवृत्तियों की भी सूचना हमें मिलती है और कला की उपयोगिता इन्द्रियों की तृप्ति के लिए भी है अर्थात् कला सहज और संयमित क्रिया है जिससे मनुष्य का मानसिक, बौद्धिक, व्यक्तित्व, सामाजिक, सांस्कृतिक कल्पना शक्ति, स्मृति, निरीक्षण शक्ति, आत्मचिन्तन, स्वतंत्रचिंतन इत्यादि प्रवृत्तियों का विकास होता है और ये सभी प्रवृत्तियाँ मनुष्य जीवन में बहुत उपयोगी है और ये सभी मनुष्य के चरित्र को परिभाषित करते हैं।

(3) साहित्य सृजन –

कलाविद् श्री सुरेश शर्मा अपने चित्रकर्म व कलायात्रा के दौरान रंगों और रेखाओं के अलावा लेखनी से शब्दों को मूर्त रूप नहीं दे पाये। काव्य और कला के सामंजस्य की आनन्द धारा का उद्धेग, सत्यं, शिवं, सुन्दरं के रूप में आपकी साहित्य कला उजागर नहीं हो पाई। शर्मा के अनुसार अपनी लेखनी से रचना धर्मिता को

सम्बल नहीं दे सके। साहित्य व कला की अपनी सीमाएँ होती है पर आप साहित्य कला में अपने शब्दों को एक सूत्र में नहीं पिरों पाए। साहित्य सृजन व चित्रकारी दोनों का संतुलन बनाने में आप प्रयासरत रहे, किन्तु उनका संतुलन नहीं बना सके। शर्मा केवल अपनी तूलिका के ही साधक रहे। आप केवल रेखाओं की गतिशीलता तथा रंगों के सम्मोहन से ही प्रभावित एवं उद्वेलित हुए। आपकी कल्पना शक्ति और साहस का अनुमान आपकी तूलिका की एक-एक गति से लगाया जा सकता है। आपकी तूलिका का प्रत्येक स्पंदन आपकी कृतियों में पढ़ा जा सकता है।

शर्मा की दृष्टि में साहित्य का सम्पर्क हमारे सम्पूर्ण जीवन के शाश्वत मूल्यों पर आधारित, बौद्धिक, सामाजिक, सौंदर्यात्मक तथा आध्यात्मिक जीवन से होना चाहिए, वही साहित्य सार्थक है। जो जीवन से तादात्म्य स्थापित करे, साहित्य का उद्देश्य केवल काव्य रचनाओं के लिखने से नहीं है वरन् संयम, निष्ठा श्रद्धा व भक्ति साधना में एकाग्रचित होना चाहिए तथा अनन्त योग साधना के लिए होना ही सच्चा साहित्य है। शर्मा कर्म करते हुए चित्रों के बीच मोक्ष प्राप्ति के आनन्दमय प्रकाश की उपलब्धि जगत में प्राप्त करना चाहते हैं। आपके अनुसार चित्रकला ही मुक्ति प्राप्ति की सहज जीवंत क्रिया है, जो साहित्य सृजन से भिन्न करता है।

साहित्य सृजन की पराकाष्ठा आपके मन से काफी भिन्न थी। जिसे आपने हमेशा दरकिनार करते हुए चित्रकला व अन्य कलाओं को महत्त्व दिया। साहित्य सृजन व काव्य के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति को आपने कभी प्रस्तुत नहीं किया, बल्कि तूलिका के माध्यम से साहित्य व काव्यगत स्वरूपों को चित्रों व रेखाओं व रंगों के माध्यम से कैनवास पर ही उतारा और इसी से ही आप संतुष्ट हुए।

(4) आधुनिक चित्रकला के प्रति दृष्टिकोण –

आधुनिक युग का प्रारम्भ पन्द्रहवीं सदी में मानववाद युग के जन्म के साथ ही हो गया था। किन्तु 1920 से 1960 ई. तक के समय की अन्तर्राष्ट्रीय शैली को आधुनिक शैली माना गया है जबकि राजस्थान में इसका कालक्रम अब भी जारी है। आधुनिक शैली जिसमें 'आधुनिक' शब्द का अर्थ मार्डर्निस्ट अर्थात् आधुनिक रुझानों

से सम्बन्धित होने का है जो सिर्फ नए उत्पादनों नए कलात्मक कार्यों उनकी सांस्कृतिक जवाब देही और क्षण की धारणा से जुड़ी है।

20वीं सदी के मध्यकाल तक दो तरह की शैलियों और चित्रण माध्यम का वर्चस्व रहा। दोनों ही तरह की शैलियों में कार्य करने वाले कुशल कलाकार हुए और कुछ कलाकार ऐसे भी थे जो दोनों ही शैलियों में और माध्यमों में काम करने में दक्ष थे। तो कुछ एक ही शैली में कार्य करते। बंगाल स्कूल का वर्चस्व खत्म होने के परिणाम स्वरूप भारतीय कलाकारों ने अन्तर्राष्ट्रीय कलाधारा को स्वीकार कर बंगाल स्कूल के कठोर नियमों को एक तरफ रखकर चित्रण शुरू किया। इस नवीन कला धारा की खासियत थी, भारतीय विषय और यूरोपीय आधुनिक शैली का समन्वय। यह प्रभाव राजस्थान में और यहाँ के कलाकारों में भी आया। सन् 1947 ई. के पश्चात् राजस्थान में यह परिवर्तन तेजी से आया। कलाविद् सुरेश शर्मा ने इस काल को ध्यान में रखते हुए आधुनिक कला के प्रति अपने विचार और दृष्टिकोण कला जगत के अभिव्यक्त किये है। आपके विचार में आधुनिक कला, सक्रिय कलाकारों के निजी प्रयासों का कला परिदृश्य के प्रति एक नई ऊर्जा व अपनी स्वतंत्र अभिव्यंजना का तुष्टीकरण उदाहरण है और शर्मा ने आधुनिक चित्रकला के प्रति अपने विचार उल्लेखित किये हैं।

वर्तमान चित्रकला जगत में मनोविज्ञान को समझने के लिए सर्वप्रथम हमें चित्रकार की स्वाभाविक आवश्यकता की पूर्ति पर ध्यान देना चाहिए। प्रत्येक चित्रकार में निर्माण का सहज ज्ञान सबसे अधिक बलवान होता है। चित्रकला की सफलता सहज ज्ञान पर ही आश्रित है। वैसे तो सभी मनुष्यों में यह शक्ति होती है पर चित्रकार के अन्तःकरण में इसका प्रस्फुटन अत्यावश्यक है। ईश्वर को प्रकृति का सृष्टा माना गया है निर्माण का सहज ज्ञान उसमें विद्यमान है तभी तो क्षण-क्षण में उसकी सृष्टि अपना रूप बदलती रहती है और इसलिए कहा गया है कि सृष्टि अगम है। आधुनिक चित्रकार कल्पना में पूर्ण विश्वास रखता है। वह उसके सहारे नये रूपों का निर्माण

करना चाहिए है और वे नये रूप इतने नए हों जो प्रकृति में भी देखने को न मिल सके। इसलिए आधुनिक चित्रकला का रूप सूक्ष्म होता गया और इस सूक्ष्म चित्रकला की कुंजी मनोविज्ञान रहा है। चित्र में क्या बनाया गया है वह इतना महत्त्व नहीं रखता, जितना यह समझना कि चित्र में जो कुछ बना है, वह चित्रकार ने किस मानसिक परिस्थिति में बनाया है।

प्रकृति का रचयिता ईश्वर है परन्तु कला मनुष्य की रचना को कहते हैं जिस प्रकार ईश्वर की प्रकृति रूपी रचना का अन्त नहीं है, उसकी प्रकार मनुष्य की कला का छोर नहीं है प्रकृति कल्पना के परे है और यही कल्पना मनुष्य की कला सीढ़ी मानी जाती है और इसमें अधिकतर विषय धार्मिक, ऐतिहासिक तथा सामाजिक थे। आजकल धर्म का प्रभाव क्षीण होता जा रहा है, क्योंकि धर्म को माध्यम बनाने में अधिक लाभ के स्थान पर सामाजिक चित्रण का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। समाज की दृष्टि में भी सामाजिक चित्रों का महत्त्व अधिक है। समाज के लोग चित्रों में आज की सामाजिक घटनाओं को देखना चाहते हैं, परन्तु आधुनिक चित्रकला इधर कुछ वर्षों से इससे भी विमुख होती दिखाई दे रही है। वह एक नवीन दृष्टिकोण बनाने के प्रयत्न में है, जिसे सूक्ष्मवाद के नाम से जाना जाता है। इस कला का विषय क्या होता है यह साधरण दृष्टि से नहीं समझा जा सकता और यह कहा जा सकता है कि चित्रकला में सूक्ष्मवाद व अमूर्तवाद बड़े वेग से फैल रहा है। आधुनिक कला के अन्तर्गत समाज में विकृति भी प्रवेश कर गयी, प्रधानतया, पूंजीवाद के कारण समाज का सुख तथा वैभव धीरे–धीरे उठकर पूंजीपतियों के तहखाने में जमा हो गया जिससे समाज खोखला तथा कमजोर हो गया व पथ भ्रष्ट होता गया।

आज कलाकार रोटी के विकट प्रश्न को सुलझाने में जी जान से लगा है, पर दिन पर दिन उलझता ही जाता है। आधुनिक कला और प्रधानतया सूक्ष्म कला समाज के सम्मुख एक ऐसा ही रूप है और कला का ऐसा रूप तब तक रहेगा जब तक समाज होश में नहीं आता।

4.1 आधुनिक कला में अनुकृति और पुनः प्रस्तुति –

शर्मा के विचारों में आधुनिक युग में पुनः प्रस्तुति मूलक तत्त्व कला में वस्तुओं की अनुकृति का भाव रहता है। अनुकृति एक शिल्प है जो कारीगरी की कुशलता पर आधारित है। अनुकृति एक शिल्प से दूसरी शिल्प में भी हो सकती है पर पुनः प्रस्तुति का सम्बन्ध प्रकृति अथवा पदार्थों से सरहता है, किसी अन्य कृति से नहीं।

अनुकृति और मौलिकता के सम्बन्ध में भी एक बात स्पष्ट समझ लेनी चाहिए, कि जो कलाकार किसी कृति की अनुकृति करता है तो उस कलाकृति की मौलिकता का ह्रास होता है। आज के युवा चित्रकार इंटरनेट के जरिए किसी न किसी कलाकृति की अनुकृति कर उसमें कुछ भिन्नताएँ उत्पन्न कर पुनः प्रस्तुत कर देते हैं और यही कार्य सम्पूर्ण कला जगत की मौलिक कलाकृतियों के ह्रास का कारण बन जाती है। आधुनिक युग में युवा कलाकारों की यह नादानी उन कलाकारों के लिए बेहद खतरनाक होती जा रही है, जो निरन्तर अपनी कल्पनाओं की उड़ान व स्वपनिल संसार को अपनी तूलिका के माध्यम से कैनवास पर उतारकर या किसी और माध्यम से समाज के समक्ष रखने की कोशिश करते हैं। वो कलाकार अनुकृति और पुनः प्रस्तुति का शिकार हो रहे हैं। यह ज्वलनशील मुद्दा श्री सुरेश शर्मा के मस्तिष्क में निरन्तर हलचल पैदा करता है और आपको उन सभी युवा नादान चित्रकारों व कला जगत के बढ़ते कदम के भविष्य की चिन्ता सताती है। शर्मा के अनुसार सच्ची और उत्कृष्ट कला की रचना उसी समय हो सकती है जब कलाकार के मन, मस्तिष्क और शरीर में सुडौलता रहती है। कलाकार सुखी हो, सम्पन्न विचारों वाला हो, जीवन का मूल्य समझता हो। तब ही उच्च कोटी की कला का निर्माण होगा। अर्थात स्वस्थ व आदर्शवादी कला के निर्माण से ही युवा कलाकारों का भला होगा वरना आज के समय में अनुकरणीय कलाकृति की दुर्दशा व उनका महत्त्व दो कौड़ि का रह जायेगा। कैसे इस तरह के छल कपट से चित्रकार अपने हुनर को छुपाता रहेगा। बल्कि कला की समझ न रखने वाला व्यक्ति भी आज अनुकृतियाँ बनाकर कलाकार बन बैठे है। अतः अनुकृति की पुनः प्रस्तुति समाज व कलाकारों के लिए कला की क्षति है।[3]

4.2 कला की शुद्धता –

सुरेश शर्मा जी के अनुसार आधुनिक युग में आपने अपने चित्रों के माध्यम से कला को इस प्रकार व्याख्यायित किया है कि कलाकार स्वयं यह कभी नहीं कहता है कि मैं यह, वह, आदि जानता हूँ, कला तो शुद्ध रचना होती है अर्थात आपके विचारों में कला शुद्ध रचना होनी चाहिए। कलाकार को निरन्तर कल्पना की उड़ान भरनी चाहिए, जिससे वो एक शुद्ध विचारों को अभिव्यक्त कर सके। क्योंकि कल्पना कला सृष्टि का आधार है, कला की शुद्ध रचना बिना कल्पना के सम्भव नहीं हो सकती। काल्पनिक को हम कोई विशिष्ट शैली नहीं कह सकते परन्तु सुविधा के लिए आधुनिक युग के विभिन्न बहुमुखी चित्रकारों की कृतियों का मूल्यांकन करने हेतु हमें उनके चित्रों को विभिन्न कोटि में रखना ही पड़ता है और उनका नामकरण करने की आवश्यकता पड़ती है। शुद्ध काल्पनिक चित्रकला से तात्पर्य आधुनिक चित्रकला की उन शैलियों से है, जिसमें चित्रकार प्रकृति की वस्तुओं का आँखों देखा वर्णन नहीं करता बल्कि कल्पना के आधार पर एक नये संसार की सृष्टि करता है यह नया संसार कलाकार का अपना संसार होना चाहिए, अर्थात अनुभव, कल्पना तथा रूचि के अनुसार ही शुद्ध रचना होती है।

चित्रकला में उपर्युक्त विचार भी काल्पनिक चित्रों की कोटि में आते हैं। परन्तु आज इस विचार का एक परिमार्जित रूप ही काल्पनिक चित्रकला के नाम से सम्बोधित किया जाता है। काल्पनिक व स्वपनिल शुद्ध चित्रों में केवल प्रकृति के रूपों का परिमार्जन ही नहीं होता, बल्कि कल्पना के आधारपर नये रूपों का निर्माण होना आवश्यक है।

आज चित्रकार यह भी आवश्यक नहीं समझता, कि जो रूप वह बनाये, उनमें प्रकृति के विभिन्न रूपों का सम्मिश्रण हो परन्तु आधुनिक युवा चित्रकार इतना भी नहीं करना चाहता। बल्कि वह इस अभूतपूर्व जीव या वस्तु कल्पना के सहयोग से रूप निर्माण करना चाहता है। शुद्ध रचना करने के लिए चित्रकार को प्रकृति के रूपों के मूलाधार को समझना चाहिए तथा प्रकृति के रहस्य का अध्ययन भली–भाँति करें और

यह समझने का प्रयत्न करें की प्रकृति के रूप उसके अंग नहीं होते, बल्कि उनके आधार पर सूक्ष्म अध्ययन करके शुद्ध रचना की अभिव्यक्ति प्रस्तुत करे और सफलता इस आधुनिक युग में उन्हीं युवा चित्रकारों को मिल सकेगी, जो रचनात्मक कल्पना करने में समर्थ हैं और सहज रूप में इस प्रवृत्ति को आत्मसात करते हैं।

4.3 प्रयोगधर्मिता –

कलाविद् सुरेश शर्मा के अनुसार प्रयोगधर्मिता मानव की सहज क्रियाओं में से एक है। अंगों का संचालन, वस्तुओं अथवा सामग्री का प्रयोग, कार्य करने की विधि आदि में हमें जिन प्रतिक्रियाओं से होकर गुजरना होता है वे सभी प्रयोगाश्रित होती है। इस अवधि में हम जो कुछ भी सीखते हैं वह एक और किसी कार्य को सम्पन्न करने की ठीक–ठीक विधियों अथवा पद्धतियों में कुशलता बनाता है, वहीं दूसरी ओर उनसे सम्बन्धित ज्ञान की वृद्धि भी करता है। बाल्यावस्था में इसे प्रयत्न एवं त्रुटि पद्धति के द्वारा ज्ञानार्जन की श्रेणी में रखा जाता है। प्रयत्न की एक स्थिति वह है जिसमें हम केवल उतनी ही रूचि लें जिससे कि हम दूसरों के समान कार्य कुशल अथवा सूचना–सम्पन्न बन जाएँ। परन्तु हमारा मन और मस्तिष्क केवल इतने से ही सन्तुष्ट नहीं होता। हम किसी विशेष क्षैत्र में दूसरों से आगे निकलने की आकांक्षा रखते हैं। यही जब महत्त्वाकांक्षा बन जाती है तो हम विशेष प्रयत्नशील हो जाते हैं। प्रयत्नशीलता, महत्त्वाकांक्षा अथवा साधना की कोई सीमा नहीं होती है। प्रकृति के रहस्यों का भी कोई अन्त नहीं है। सृष्टि के विस्तार में हम अपनी अल्पतम अथवा यों कहें कि क्षुद्रतम सामर्थ्य को लेकर प्रकृति पर विजय का दंभ भरते हैं, परन्तु तत्काल ही नये रहस्यों का अंत भंडार किसी गुप्त खजाने की भाँति उपस्थित हो जाता है, जिसका द्वार कहने से नहीं खुलता वह त्याग तपस्या और साधना करने वालों को ही यथायोग्य पुरस्कृत करता है। प्रकृति के रहस्यों की एक झलक पा जाने वाला भी निरन्तर आगे बढ़ने का प्रयत्न करता है, ये प्रयत्न ही 'प्रयोग' बन जाता है। प्रयोग इस अर्थ में कि इनसे किसी न किसी प्रकार से कुछ–न–कुछ नयेपन अथवा विचित्रता के

द्वार खुलते हैं। वह नयापन ही प्रयोगकर्ता की आनन्दानुभूति का कारण बनता है इस प्रकार प्रयोगधर्मिता मानव जीवन के सभी क्षेत्रों में सक्रिय व परिलक्षित होती है।

प्रयोगों की पद्धतियाँ जब विधिवत् रूप ले लेती हैं तो परम्परा अथवा रूढ़ि कही जाती है। सामाजिक जीवन के प्रतिदिन के व्यवहार में ये रूढ़ियाँ तथा परम्पराएँ प्रमुख भूमिका का निर्वाह करती है। परन्तु प्रकृति के क्षैत्र तथा सामाजिक जीवन में अनेक परम्पराएँ तथा रूढ़ियाँ शिथिल अथवा अर्थहीन हो जाती है प्रयोगों से प्राचीन परम्पराओं को नव–जीवन मिलता है तथा नयी परम्पराएँ स्थापित होती है। इस प्रकार प्रत्येक युग में, मानव सभ्यता के विकास के प्रत्येक चरण में, परम्परा तथा प्रयोग दोनों चलते रहते हैं। दोनों में द्वन्द्व भी होता है और समझौता भी।

चित्र संख्या – 18 अन्टाइटिल्ड

जीवन के अधिकाधिक क्षैत्रों में कलात्मकता का प्रवेश ही कला–संस्कृति है व सामान्य अर्थ में किसी कार्य को कुशलतापूर्वक सम्पन्न करने की विधि प्रयोग के नाम से जानी जाती है। पर सीमित अर्थ में ललितकलाओं के सन्दर्भ में भी प्रयोगात्मकता

का विचार किया जाता है कलात्मक प्रयोग का क्षैत्र बहुआयामी है। कला–विचार और कलासृजन से लेकर कला रूपों की विभिन्न विधाओं के उपयोग तक उसका विस्तार है। सर्जक के पक्ष में इनका जो क्रम है उसके ठीक विपरित क्रम कला–रसिक के पक्ष में है। कलाकार किसी नये दृष्टिकोण से विचार करता है, उस विचार को वह कलाकृति के माध्यम से दर्शकों तक प्रेषित करता है, दर्शक अथवा कला रसिक उससे सहमत होते हैं तो उसका स्वागत करते हैं। तथा असहमत होने पर विवाद की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। समाज ऐसी कलाकृति का उपयोग नहीं करता अतः समाज की कलासंस्कृति उससे अप्रभावित रहती है। इसका मूल कारण समाज की परम्परावादी सोच है जो नये विचार अथवा प्रयोगों को सहसा स्वीकार नहीं करती। परन्तु आधारभूत सत्य है कि एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में अर्थात पुरानी पीढ़ी से नयी पीढ़ी के विचारों में कुछ न कुछ अन्तर अवश्य आता है। जो लोग पुराने अथवा परम्परावादी विचारों के पक्षधर होते हैं वे भी नयेपन को स्वीकार नहीं करना चाहते। नये तथा पुराने में व्यर्थ की प्रतिस्पर्धा आरम्भ हो जाती है। यह प्रतिस्पर्धा कोई नई बात नहीं है। अपनी रचनाओं को स्थापित करने में सभी को इसका सामना करना पड़ता है और बड़ी विनम्रता से अपना मत प्रस्तुत करना होता है जो कुछ पुराना है वह सब प्रशंसनीय नहीं है तथा जो कुछ नया है वो सब त्याज्य नहीं है। लोग नये की परीक्षा करके तो देखें। जब इस नवीनता को गुण की दृष्टि से देखें तो इसकी विशेषताएँ समझ में आती है। जब इसे दोष समझें तो इसमें कमियाँ दिखाई देने लगती है। आवश्यकता केवल कलाकार के मानसिक रूप से स्वस्थ होने की है। परन्तु मानसिक स्वास्थ्य को सामाजिक दृष्टि से विक्षिप्तता की स्थिति से नहीं जोड़ना चाहिए। वॉन गॉग की कला इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। वॉन गॉग समान प्रयोग इससे पूर्व अथवा पश्चात कोई भी नहीं कर पाया। कला चित्रकार सुरेश शर्मा का विचार है की यदि वे कुछ समय और जीवित रह जाता तो चित्र के ऊपरी हाशिये को छूते हुए या उससे भी आगे निकलते हुए विस्तृत सागरीय दृश्यों की एक अद्भुत झाँकी समाज के सामने रख जाते, जो कला जगत की अमूल्य निधि होती।[4] शर्मा के विचारों में कलाकार के दो पहलू होते हैं– संयम और प्रयत्नशीलता। सम्भवतः प्रयोगधर्मी सर्जक के लिए ये दोनों अनिवार्य

है। दस वर्ष तक संयमपूर्वक एकान्त में प्रयोग करते रहने के उपरान्त ही अपनी उपलब्धि से संतुष्ट होकर ही आपने ज्यामितीय चित्रों का प्रदर्शन किया था। दृश्यमान संसार की आपकी जो यथार्थ अनुभूति थी उसे निश्चित प्रयोगों के आधार पर एक निश्चित सिद्धान्त तक पहुँचाने में आपने जो प्रयत्न किया था उसमें संयम और अपने लक्ष्य के प्रति प्रयत्नशील, दोनों स्पष्ट प्रतिबिम्बित होते हैं। संयम और प्रयत्नशीलनता को हम आधुनिक भाषा अथवा परिभाषा में प्रतिबद्धता, सम्पूर्ण समर्पण अथवा सृजन की उत्तेजना (Thrill of Creation) भी कह सकते हैं।

शर्मा के अनुसार आपके प्रयोगों के पीछे सृजनातमक सोच थी। स्थापित परम्पराओं के दायरे में ही आपने अनुभूतियों को नये प्रयोगों की ओर मोड़ा था और सृजन तथा प्रदर्शन परम्परागत रीतियों से हटकर किया। प्रयोगधर्मिता के पीछे जो सामाजिक, धार्मिक अथवा राजनीतिक कारण होते हैं वे केवल विषयों को ही नहीं, कला की तकनीक को भी प्रभावित करते हैं। सामन्ती समाज–व्यवस्था में कला का जो स्वरूप रहा है उसे क्लासीकल (अभिजात) कहा गया। लोककला इससे पर्याप्त भिन्न रही है। धार्मिक कला सामन्ती समाज में पहुँचती है तो उसका रूप अलग होता है और ग्रामीण समाज में पहुँचने पर लोक कला के समान हो जाती है फिर भी धार्मिक कला की कुछ निजी विशेषताएँ है जैसे बौद्ध कला में शैलीगत सौम्यता है। ईसाई कला में भी सौम्यता से परिपूर्ण रही है। इन कलाओं में कलाकार ने वातावरण तथा परिस्थितियों के अनुसार ही प्रयोग किये हैं। प्रयोगधर्मिता कलाकार की परिस्थितिजन्य परवशता भी है। सामान्यतः कलाकार तथा रसिक कला परम्परागत अथवा पहले से समाज में आ रही सामग्री एवं तकनीक पर ही आश्रित रहते हैं। परन्तु प्रयोगधर्मी कलाकार नयी सामग्री के प्रति सजग रहकर नये प्रयोगों में प्रवृत्त होते हैं। युग परिवर्तन से जब जीवन के प्रति दृष्टिकोण बदलता है तो सम्पूर्ण दृश्यमान जगत को नयी दृष्टि से देखने की आवश्यकता प्रतीत होती है। नवीन दृष्टि में जीवन के नए रंग–ढंग नये आचार–विचार तथा रहन–सहन भी महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं जिनमें युगानुकूल सामग्री भी होती है। जब जीवन के अन्य क्षेत्रों में नवीन सामग्री का प्रयोग हो तो फिर

कलाकार केवल परम्परागत सामग्री तक ही सीमित क्यों रहे। नयी सामग्री का उपयोग करने वाली कला नये समाज के लिए अधिक रूचिकर होगी। अतः कलाकार को अपने युग में प्रचलित नवीन सामग्री के प्रयोग की सम्भावनाओं की तलाश निरन्तर जारी रखनी चाहिए। इससे कला के प्रति परम्परागत दृष्टिकोण के साथ–साथ विषय वस्तु में भी अन्तर आता है।

जब कला सामग्री की बात करते हैं तो माध्यमों की विविधता और कलाकृति के स्थायित्व पर ध्यान जाता है। चित्रों के रंगों की चमक बनाये रखने अथवा बढ़ाने की दृष्टि से अनेक प्रयोग किये गये। टैम्परा तथा जलरंगों की आभा से भिन्न तैल माध्यम में भी चमक के प्रति कलाकार प्रयत्नशील रहे और वार्निशिंग तथ ग्लेजिंग का प्रचलन हुआ। सिरेमिक तथा रंगीन काँच के टुकड़ों को स्वर्णरंजित भित्तियों पर चिपका कर चमक को आकर्षक रूप दिया गया। इससे भी अधिक चमक काँच की खिड़कियों के द्वारा उत्पन्न की गयी जहाँ प्राकृतिक प्रकाश स्वयं माध्यम का एक अभिन्न अंग बना। जिस प्रकार आधुनिक युग में मूर्तियाँ मन्दिरों व भवनों से बाहर निकलकर खुले स्थानों पर लगायी जाने लगी, उसी प्रकार भवनों के आन्तरिक प्रकाशन को छोड़कर कलाकारों ने खुली धूप के प्रकाश पर ध्यान दिया जिससे क्रान्तिकारी आन्दोलनों तथा विभिन्न प्रयोगों को जन्म हुआ।

प्रकाशीय प्रभावों का एक अन्यविधि से नेत्रीय कला में प्रयोग हुआ, जिसमें गति के अंकन के लक्ष्य को मात्र चित्रण से नहीं बल्कि प्रकाश के साथ मिश्रण करके यंत्रों की सहायता से प्रत्यक्ष प्रस्तुत किया गया। लोककला में शुद्ध अथवा मिश्रित कला जैसा कोई वर्गीकरण नहीं है। अभिजात्य कला में इस पर ध्यान दिया गया है। परन्तु आधुनिक कला में इस प्रकार के प्रयोग अधिकाधिक लोकप्रिय होते जा रहे हैं जहाँ मूर्ति, चित्र, ग्राफिक, मोन्टोज, कोलाज आदि का समन्वित प्रयोग होने लगा है। ऐसे प्रयोगों में मिक्स मिडिया तो पुरानी बात होती जा रही है। यही नहीं, चित्र में आकृति के साथ–साथ मिल जुलकर गीत–गाते रहने की परम्परा ने चित्र में काव्य

लेखन तथा समाचार पत्रों की कतरने आदि चिपकाने का रूप ले लिया है। अनपढ़ समाजों की मौखिक क्रिया का शिक्षित समाजों में लिखित रूप मिल रहा है। कलाकृति से तादात्म्य का स्वरूप भी प्रयोगों द्वारा परिवर्तित होता जा रहा है। प्रागैतिहासिक गुफाओं व पूजाग्रहों के अँधेरे स्थानों पर देखी जाने वाली आकृतियाँ भय तथा दूरी का भाव उत्पन्न करती है। शीतल रंगों तथा कोमल रेखाओं आदि के द्वारा विश्रान्ति और तीव्र रंगों तथा कठोर रेखाओं द्वारा हलचल के भाव उत्पन्न करने का प्रयत्न एक परम्परागत विधि रही है। आधुनिक कलाकार ने अपनी मन स्थिति को व्यक्त करने वाली चित्रण विधि में भी दर्शक को संलिप्त करने का प्रयत्न किया है।

आधुनिक कलाकारों ने चौड़ी तथा मोटी तूलिका द्वारा गाढ़े रंगों के स्पर्शों से तूलिका संचालन की पद्धति का दर्शकों को भी मानसिक अनुभव कराने का प्रयत्न किया है। इससे भी आगे बढ़कर कलाकरों ने दर्शकों के समक्ष चित्र रचना करके आरम्भ से अन्त तक की पूरी सृजन प्रक्रिया में इसी प्रकार का अनुभव दर्शकों को कराने का प्रयत्न किया है। इस प्रक्रिया में कलासृष्टा और कला रसिक दोनों ही सृजन के प्रवाह में साथ–साथ छलांग लगाते हैं, तैरते हैं, डूबते हैं तथा अन्त में किनारे तक पहुँच जाते हैं।

अब तक कला को स्थानाश्रित माना जाता था पर अब वह काल अर्थात् गति के क्षैत्र में भी प्रविष्ट हो गयी है नशे की गोलियों के समान इसका एक रूप मनोक्रियात्मक कला में भी देखा जा सकता है और विशेष प्रयोगों का प्रचलन आधुनिक कला के साथ ही हुआ है, घास, रेशे, बाल, रुई, कपड़ा तथा स्पंज का तूलिका के रूप में प्रयोग करने से ही कलाकार संतुष्ट नहीं हुए। बल्कि आज तो मानव शरीर को ही तूलिका बना डाला और सौन्दर्य प्रतियोगिताओं में भाग लेने वाली बालाओं के शरीर पर रंग छिड़क कर भूमि पर बिछे कागजों के रोल पर उन्हें लुढ़काकर अथवा हाथ–पैर फैलाये हुए उनके शरीर को क्रेन से उठाकर धीरे–धीरे कागज पर रखकर या कुछ इंच ऊँचाई से गिराकर रंगे हुए शरीर की छाप कागज पर लेने की

तकनीक प्रयुक्त की जो लिविंग ब्रश के नाम से बहुत चर्चित हुई है। पिछली शताब्दी साठ के दशक में इस माध्यम का एक और प्रयोग सामने आया, कला ने ब्लेड से स्थान–स्थान पर काटकर रक्त रंजित शरीर को अलग–अलग कोणों, मुद्राओं तथा विधियों से बार–बार दीवार पर मारकर दीवार पर रक्त के विशेष चिन्ह बनाये। इस प्रकार की चेष्टाओं से दर्शकों ने इसे खूब सराहा और प्रशंसा की। परन्तु इस प्रकार के प्रयोग कलाकारों की सनक के अतिरिक्त कुछ भी नहीं थे और इसका अधिक अनुकरण भी नहीं हुआ। अतः क्षण–क्षण परिवर्तित होते हुए संसार को प्रयोगधर्मी कलाकर बालकों जैसी सहज दृष्टि से देखता है। ऐसे संसार को जिसके सम्बन्ध में उसे कुछ भी पूर्वानुमान अथवा पूर्वज्ञान नहीं है। ऐसी अवस्था में ही वह उसमें कुछ नवीनता देख पाता है। यह नवीनता परिस्थितियों, कलाकार और समाज के पारम्परिक व्यवहार तथा कल्पना–प्रसूत आविष्कारों से सम्भव होती है।

अतः प्रयोगधर्मिता कला व समाज के हर क्षैत्र में निरन्तर व सदैव चलती रहती है कलाकार तथा कला रसिक समाज, दोनों को मिलकार ही कला–संस्कृति का स्वरूप बढ़ता तथा विकसित होता है। इसमें सृजन, प्रदर्शन और आस्वादन तीनों पक्ष होते हैं। आवश्यकता केवल यह ध्यान रखने की है कि इन तीनों पक्षों से सम्बन्धित प्रयोग औचित्य का सीमोल्लंघन न करे। प्रयोगों की कोई सीमा नहीं बाँधी जा सकती और न ही कल्पना तथा सृजन शक्ति के अजस्त्र स्त्रोत से समृद्ध कलाकारों को बाँधकर रखा जा सकता। अतः कला के अर्न्तसम्बन्ध में कला की रूप सृष्टि में प्रयोगों को सच्चे हृदय से स्वीकार करें।

4.4 कला का कम्प्यूटरीकरण –

कलाविद् सुरेश शर्मा के अनुसार आपके दृष्टिकोण में आज कला में कम्प्यूटरीकृत प्रभाव बढ़ता जा रहा है शर्मा के विचार में कला के क्षैत्र में नवीनतम सामग्री है कम्प्यूटर। आज कम्प्यूटर डिजाइनिंग ने आज कला के क्षैत्र में नई क्रांति उपस्थित की है। चित्रकारों ने भी इस विधा का प्रभावी उपयोग आरम्भ किया है। जिस प्रकार आज

का मानव–जीवन द्रुतगति से दौड़ रहा है इसी प्रकार कला सृजन में भी द्रुतगति आयी है, रेखाओं आकृतियों, रंगों तथा धरातलों में भी इच्छानुसार परिवर्तन, विकृति एवं प्रभाव उत्पन्न करना केवल अंगुलियों के संकेत की क्रीड़ा रह गये हैं। पहले से चित्रित आकृतियों के स्केनिंग के पश्चात उनमें इच्छानुसार मिश्रण तथा परिवर्तन करने में देर नहीं लगती। जल रंग चित्रों में कम्प्यूटर से वाश जैसा प्रभाव उत्पन्न करने में धब्बे पड़ने अथवा हल्के गहरे होने का भय नहीं है। चित्रों में आई खराबी को कम्प्यूटर से पूर्णतः ठीक किया जा सकता है। त्रुटि हो जाने पर उसे मिटाना भी अब कोई समस्या ही नहीं माना जाता, जबकि पहले इस कार्य में कई कागज या केनवास खराब हो जाते थे। आज यंत्र तथा तंत्र का प्रभाव अधिक से अधिक बढ़ता जा रहा है पर केवल तकनीक ही सबकुछ नहीं है, क्योंकि तकनीकी विकास की दिशा को कम्प्यूटर ने अपने हाथ में ले लिया है आज कम्प्यूटर मौलिक कलाओं के लिए खतरा बन गया है तकनीकी दृष्टि से भारत की कला को काफी नुकसान पहुँचा है आज कई व्यवसायिक कलाकार बेरोजगार होते जा रहे हैं क्योंकि रेडियम, प्लेक्स इत्यादि से लोगों को लुभाने वाली सामग्री आसानी से व कम दाम पर तथा कम समय में प्राप्त हो जाती है जिससे कलाकारों की रोजी–रोटी पर अत्यंत प्रभाव पड़ रहा है। जिससे आज की कला में निराशावादिता उत्पन्न हो रही है क्योंकि हमारा समाज अब भी आधुनिकता को पूरी तरह आत्मसात नहीं कर पाया और उसमें उसे निराशा हाथ लगती है किन्तु आज के युवा कलाकारों को युगानुरूप चलते हुए स्वाभाविक रूप से इसी में से भविष्य का मार्ग खोजना चाहिए।

वर्तमान में कम्प्यूटर से होने वाले प्रयोग व कलाकृतियाँ –

आधुनिक कला के क्षेत्र में कम्प्यूटर एक महत्त्वपूर्ण कड़ी साबित हो रहा है, कम्प्यूटर युग में कला का कम्प्यूटरीकरण होना निश्चित ही था, कम्प्यूटर के माध्यमों ने कला और कलाकार का संतुलन कुछ हद तक बिगाड़ा है, परन्तु आज के युगानुसार कलाकार को इसके अनुसार ही चलना पड़ रहा है। वैज्ञानिक युग में हस्तकला को

अचेत करने का कार्य कम्प्यूटर ने ही किया है लेकिन बड़े महानगरों में कम्प्यूटर ने कला को डिजिटल रूप प्रदान कर एक नई औद्योगिक क्रांति में कला का बाजार गर्म किया है फिर चाहे वो ललित कलाएँ हो या एप्लाइड आर्ट या फिर छापा कला। विभिन्न प्रकार की तकनीकों को प्रयोग में लाया जाने लगा। जैसे–फोटॅटिज, मोनोटाइप, मूविंग प्रिन्टस, विडियों टेप, ऐनिमेशन, थ्रीडी इत्यादि, सीधे ही स्थानान्तरित हो जाने वाली वस्तुओं पर इसका प्रयोग कई तरीकों से किया जाने लगा और भिन्न अंशों में तकनीकों को इन्स्टोलेशन के साथ भी समाहित किया गया। इस प्रकार इसमें कई तकनीकें व माध्यम जुड़ते गये और ये कम्प्यूटर में सम्मिलित हुई तो आधुनिक कला की सीमाओं को और भी कम्प्यूटरीकरण शब्द की क्षमताओं को अत्यधिक विस्तार मिला।

कम्प्यूटर ने जो अत्यधिक सम्भावनाओं के द्वार कला के लिए खोले हैं वे कई कलाकारों के स्वभाव के अनुरूप भी है, जिसमें वह उनको बहुत तेजी से कार्य करने और जल्द से जल्द उसके परिणाम तक पहुँचने में मदद करता है। कम्प्यूटर अपनी अनन्त सम्भावनाओं को लेकर उनके सामने है, जिससे कलाकार अपनी कल्पना के और भी करीब पहुँचकर इच्छित परिणाम प्राप्त कर सकता है, जो इससे पहले सम्भव नहीं था। कम्प्यूटर और उसके बाद डिजिटल टेक्नोलोजी ने कला में सम्मिलित होने पर एक और नई तकनीक का विकास हुआ, जिसमें थ्री डायमेन्सनल वस्तुओं की प्रतियाँ डिजिटल पद्धति से कला के क्षैत्र में अपना कदम जमा चुकी है। यह तकनीक कला के क्षैत्र में तीव्र गति से विस्तृत हुई अपनी फैलाव वाली और दूसरे माध्यमों को सहज रूप से अपने में समाहित करने की प्रवृत्ति के कारण कम्प्यूटर ने एक विशेष और महत्त्वपूर्ण आयाम स्थापित किया है, जिसमें शर्मा को एक मौलिक नैसर्गिक कला का दुखद भविष्य नजर आने लगा है।[5]

(1) **ऐनिमेशन –** एनिमेशन कला 21वीं सदी की महत्त्वपूर्ण कला मानी जाने लगी है। इस माध्यम ने पेन्टिंग के अलावा फिल्मों में भी अहम योगदान दिया है। चित्रकारों

को एनिमेशन मूवी में केवल स्केचिंग के लिए अच्छा रोजगार मिल जाता है क्योंकि एनिमेशन कार्य में सर्वप्रथम स्केचिंग कार्य की प्राथमिकता होती है तत्पश्चात आगे का कार्य प्रारम्भ होता है।

(2) **फोटो मिक्सिंग** – कम्प्यूटर कला में फोटो मिक्सिंग का कार्य भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो गया है। किसी भी प्रकार के फोटो को कम्प्यूटर के माध्यम से तोड़–मोड़ के उसमें अनेक प्रकार से भिन्नता लाई जा सकती है।

इसमें अलावा भी : थ्रीडी ग्राफिक कला, ऑप आर्ट, एनग्रेविंग, जैविक प्रिन्ट स्लाइड विधि, विडियो कान्फ्रेसिंग, इन्टरनेट इत्यादि भी कम्प्यूटर कला की देन है।

चित्र संख्या – 19 अन्टाइटिल्ड

सन्दर्भ –

1. A . L. Damami : Suresh Sharma-A Renascent Page No.- 81-83
2. सुरेश शर्मा : समकालीन भारतीय कला की संभावनाऐं, पृ.सं. 29–31
3. अशोक–कला सौंदर्य और समीसा शास्त्र, पृ.सं. 9,10
4. अशोक, कला निबन्ध पृ.सं. 227–228
5. समकालीन कला, जून–सित.–2002, पृ.सं. 42

चतुर्थ अध्याय

चित्रों का तकनीकी विवेचन

(1) विषयात्मक

(2) सृजनात्मक

(3) तकनीकी –रेखा, रंग, आकार एवं कला के नवीन आयाम

(4) कला शैलीगत मौलिकता

चित्रों का तकनीकी विवेचन

अपने प्रकट रूप में कलाकृति एक शिल्प की भाँति है जो तकनीकी कुशलता पर आधारित है, कला तो हर व्यक्ति में विद्यमान होती है, चाहे वह किसी भी क्षेत्र में कार्य करे। ललित कला को चुनने की जहाँ तक बात है तो सुरेश जी आपको बचपन से ही चित्रकला में रूचि रही है। इसके माध्यम से ही उन्हें बड़े कलाकारों से मिलने और बात करने के विभिन्न पहलुओं को जानने समझने का मौका मिला। वैसे तो कला के इस महासागर को समझने में आपको थोड़ा समय अवश्य लगा, परन्तु अलग कला शैली व तकनीक ने आपकी कला को समझने पर विवश कर दिया। जहाँ तक किसी एक माध्यम पर कार्य करने का प्रश्न है तो आपका मानना है कि कलाकार को हर माध्यम का ज्यादा नहीं तो, थोड़ा–थोड़ा ज्ञान सभी का आवश्यक है, श्री शर्मा को अलग–अलग माध्यमों में कार्य करना बहुत अच्छा लगता है चित्रकला के अलावा छापा–कला, टेराकोटा इत्यादि तकनीकों में भी आपने कार्य किया और शर्मा इन दिलचस्प माध्यमों के हमेशा कायल रहे हैं। श्री शर्मा ने कहा भी है कि मुझे अलग–अलग माध्यमों में कार्य करना पसंद है परन्तु एक्रेलिक रंग मुझे विशेषकर पसंद है और इसकी वजह यह है कि इस माध्यम में कार्य को करने के बहुत सारे तरीके है जैसे– रंगों की मोटी व पतली परत लगाना, टैक्स्चर लगाना अलग–अलग टूल्स से, रंगों को पतले वॉश जैसे काम में लेना ये सब आपको बेहद पसंद है और ये इसी माध्यम में सम्भव है। शर्मा के अनुसार– मैं अपने कार्य के जरिये कल्पना का एक ऐसा संसार दिखाने की कोशिश करता हूँ जिसमें चाहे छोटा कलाकार हो या बड़ा कलाकार हर कोई छोटी–छोटी चीजों में अपने लिए खुशियाँ ढूँढ़ता रहता है और आनन्दित होता है।

इसके अलावा आजकल हमारे अन्दर उत्पन्न होने वाले बहुत से भाव जैसे महत्त्वकांक्षा आदि को भी व्यक्त करने की कोशिश करता हूँ इन सबभावों को प्रकृति से ली गई आकृतियों के जरिये व्यक्त करने की कोशिश करता हूँ। प्रकृति से ली गई

आकृतियाँ मेरी कल्पना है। श्री शर्मा अचम्भित संसार में सब कुछ जानने की जिज्ञासा तथा आजकल के माहौल के खौफ से अनकहे लोगों के मन में उत्पन्न होने वाली भावनाओं को कैनवास पर अपनी कला तकनीक के माध्यम से सँवारते है। आपकी कला तकनीक को देखने वाले खुले मन से अन्दर उत्पन्न होने वाले भावों का अहसास कर प्रकृति के इस निराकार मिश्रण में लीन होकर आनन्द प्राप्त करते हैं।

श्री सुरेश शर्मा के चित्र एक ही रंग की रंगतों और उसमें अत्यंत सावधानी से रची गई ज्यामिती का उदाहरण है। आप कैनवास के विशाल स्पेस में खुद अपना अर्थ तलाशती रंगतों के चित्रकार है, जिनके यहाँ निराकार के प्रति तीव्र व्यामोह या पूर्वराग बराबर उपस्थित रहता आया है। विशुद्ध रंगों और रंगतों को स्प्रे के सहारे उत्पन्न की गई उसी एक या कुछ रंगों की रंगतों में छिपा बहुत तरल पर प्रकट ज्यामितिक आग्रह सुरेश जी के चित्रों को अपना एक अलग व्यक्तित्व देता है। यह शुभ है कि भले ही कुछ सुप्रसिद्ध विदेशी चित्रकारों से आपके चित्र साम्य को छोड़ दे तो आपका कार्य राजस्थान में रह रहे आधुनिक चित्रकारों से भिन्न भी है और साहसिक भी। श्री शर्मा ने तेलचित्रों व एक्रेलिक के अलावा मूर्तिशिल्प और ग्राफिक छापे भी बनाए और उनकी कलायात्रा के विकास में इन तीनों माध्यमों में कार्य करने का अनुभव कुछ इस तरह जुड़ा हुआ है कि उसे अलग-अलग करके देखना कठिन है, हांलाकि विगत कुछ वर्षों से तैलचित्र व एक्रेलिक माध्यम से ही आप चित्र बना रहे है और आज आपकी छवि एक मूर्तिकार या ग्राफिक छापेकार के रूप में नहीं बल्कि स्वतंत्र चित्रकार के रूप में ही है। लेकिन उन्होंने आरम्भिक वर्षों में ग्राफिक में जो कार्य किये है वह उनकी इस माध्यम के प्रति कुछ नए अन्वेषण करने की रूचि और रुझान का परिचायक है। श्री शर्मा की कला राजस्थान के दूसरे बहुत सारे समकालीन कलाकारों से अपने अर्थ और प्रभाव में भिन्न है। उनकी यह सृजनात्मक स्वायत्तता ही उनकी सबसे उल्लेखनीय पूंजी है, हांलाकी इन पर अमौलिक होने का यदा कदा जो आरोप लगाया जाता है उसकी वजह यह रही की आपकी रचनाएँ देखते हुए हमें नई अमेरिकन कला धारा के ऐड रैनहर्ड और जोसफ एलबर्स सरीखे कलाकारों के कार्यों की स्मृति आचानक हो

जाती है, यह प्रभाव शायद इसलिए भी इतना पारदर्शी और स्पष्ट है कि वह कुछ समय के लिए अमेरिका में रहे हैं, जाहिर है कि वहाँ की कला प्रवृत्तियों की छाप उन पर गहरी है। उनके चित्रों की याद रखने लायक बात यह है कि उनका अमूर्तन आकारों व विरूपण का अमूर्तन नहीं है बल्कि वह 'निराकार' रचकर भी अवान्तर से एक दूसरे भाव–बोध का दरवाजा हमारे लिए खोलते हैं। आपके चित्रों में संवेदना से भरी रंगते है, जो रंगों के स्प्रे से उत्पन्न सारे फलक पर कुछ इस तरह छाई रहती है, जैसे दिसम्बर माह में उड़ता हुआ कोहरा। वे किसी भी रंग की हो सकती है– नीले–काले, बैंगनी या किसी और गहरे रंग की पर वे सारे कैनवास पर एकछत्र साम्राज्य स्थापित किये रहती है जिनके भीतर एक घुमड़न और मंथन का भाव मौजूद है ऐसा लगता है जैसे देखते ही देखते बादल अपनी आकृति बदल लेते हैं शायद कैनवास की ये रंगते भी उसी प्रक्रिया में है इसमें निरन्तर एक स्पंदन और कंपन है। वे कभी–कभी तो धुएँ की चादर की तरह पूरे फलक पर छा जाना चाहती है।[1]

श्री सुरेश शर्मा कैनवास पर कहीं–कहीं बहुत हल्के और ध्यान से देखने पर ही नज़र आने वाले ज्यामितिक–पैटर्न डालकर हमें रंगतों की एकरसता से बचाना चाहते हैं, पर ये ज्यामितिक चौखाने भी इतने विरल और सांकेतिक है कि चित्र की तरल संवेदना पर बोझ नहीं बनते। इनके कार्य में पृष्ठभूमि और मुख्य भूमि (फोरग्राउण्ड) जैसी कोई अवधारणा है ही नहीं, जो पृष्ठभूमि है वही फलक पर हमारे सामने भी उपस्थित है उसमें ऐसा कोई भेद नहीं की कौन आगे है कौन सी पीछे। ऐसा इसलिए है क्योंकि वह किसी आकार का अमूर्तीकरण नहीं है। शर्मा रंगों के अर्थपूर्ण प्रभावों के सहारे जैसे एक दार्शनिक शून्य से साक्षात्कार करवाना चाहते है इनके कैनवासों के सामने खड़े होकर हमें कई बार यह अपेक्षा होने लगती है कि शायद इस पर कोई बोल्ड रंग घटना घटेगी या हमें रंगतों से कुछ ठोस आकार देखने को मिलेगा पर ऐसा कभी होता नहीं। आपके सारे चित्र हमें मौन साधना में ले जाते हैं यह रंगतों के ग्रेडेशन से बनी खामोशी है, जिस पर कोई रंग–घटना नहीं उभरती, सिर्फ धुंध की तरह उड़ती हुई रंगतें कैनवास पर घुमड़ती रहती है शर्मा की सबसे बड़ी उपलब्धि या साहसकता यही

है कि इन्होंने रंगों को ही मौन व शांत निराकार रूपाकार को तकनीकी रूप प्रदान किया। आपकी इस कला तकनीक यात्रा के पीछे ग्राफिक तकनीक सम्मीलित रही है आपके ग्राफिक छापों में भी अमूर्तन मुद्रा ज्यादा मुखर रही थी। किन्तु धीरे–धीरे क्रमशः आपके कैनवासों पर आमतौर पर दिखाई देने वाली रंग योजनाएँ, आकार और उनकी संवेदनाएँ मुखरित होने लगी। रंगों व रंगतों ने समूचे कैनवास पर रंग छिटकाकर उनके जरिए एक सूक्ष्मतर बोध हमारे भीतर जगाने की पूरी कोशिश की। श्री शर्मा की यह तकनीक सरलीकृत कला को जन्म देती है और यही सरलीकरण अमूर्त कला की पहचान बनने लगी। और एक ऐसा अमूर्तन जो पहली बार में ही इतना ग्राह्य और सामान्य नहीं कि चलते चलाते या केजुअल एप्रोच रखते हुए उसे हम सराह सके। ऐसा करने के लिए हमें उनके चित्र दर्शन के साथ ही बहना होगा, कभी उनके समानान्तर तो कभी उससे बाहर तो कभी उनसे परे। अपनी सारी रचना प्रक्रिया में अस्तित्वादी विचारकों की तरह ही आप दूसरे की उपस्थिति को जरुरी नहीं मानते। क्योंकि आपकी सारी कला तकनीक नितान्त वैयक्तिक और विषयपरक है।

जहाँ तक श्री शर्मा के कार्य में ज्यामितिक संकेतों की मौजूदगी का सवाल है उसका असल अभिप्राय यही है कि ये वर्ग, चौखाने या समानांतर रेखाएँ कैनवास की एकरसता का खण्डन करती है और दूसरा यह भी कि पेन्टिंग के प्रति कलाकार के एक सचेत सम्बन्ध का सूचक है कला रचना एक आकस्मिक घटना नहीं रह जाती, बल्कि यह सृजन वृत्ती को गढ़ने वाली कोशिश होती है। ये रेखाएँ, वर्ग और ज्यामितिक संकेत इतने स्पष्ट और मूर्तमान नहीं कि एकाएक पूरी रचना पर उभर आएँ, बल्कि इनका धुंधलापन और सांकेतिकता एक अलग स्वाद का सम्मोहन हममें जगाती है। जितना हम उनकी उपस्थिति से अलग हटने की कोशिश करते हैं यह विरल पारदर्शी ज्यामिति हमारे भीतर उतना ही कौतूहल उपजाती है शर्मा के इस चित्रण तकनीक को सीधे सपाट तरीके से सराहा पाना कठिन इसलिए है कि उसमें दृश्यात्मकता, खास तौर पर स्थूल रूपाकारों के प्रति आग्रह कहीं हैं ही नहीं। और निराकर शैली के प्रति उनका सचेत व्यामोह ही उन्हें अपनी तरह के अलग मुहावरें का कलाकार बनाता है।

शर्मा के चित्र मनोवेग और अनुभूतियों के ये चित्र उनके कृतित्व से अलग ही अभिव्यक्ति के माध्यम है इतना ही नहीं वे स्वच्छन्दता और फुरसत के उद्‌गार थे। न कोई परम्परा और न ही कोई उत्तरदायित्व उनके रूपरंग का निर्धारण करता है आप विश्राम के क्षणों के उपयुक्त रूपाकार थे और उनकी निष्ठामात्र उस शक्ति के प्रति रही जो उनके सृजन को प्रेरणा देती थी। उनकी अपूर्व दृष्टि समस्त अतीत के रचना संसारों से बटोरी व जोड़ी गयी। श्री शर्मा की कृतियाँ जो अज्ञात के प्रति आपने किसी तरह की आलोचना का भाव नहीं अपनाया और उन्हें विकास की स्वच्छंदता में हस्तक्षेप करने की छूट दी। अपने उन अनुभवों को अभिव्यक्ति देने की आवश्यकता अनुभव करते हुए आपके चित्रों में सिद्धहस्त कृतियों की परिपूर्णता की छाप व विशेषता रूपी दृष्टि रूपरंग की प्रस्तुति है आपने मन के भीतरी निर्देशन को मानते हुए कार्य में हाथ लगाया और मनोवेग एक निराकार रूप में समाहित कर दिया।

श्री शर्मा की रचनाओं की एक उल्लेखनीय विशेषता है– निजता और भिन्नता और आज तक की उनकी रचना श्रृंखलाओं में किसी न किसी तरह की मौलिकता या बात कहने के प्रायः नएपण से मुखातिब होते हैं चाहे विषय के स्तर पर हो या उसकी अभिव्यक्ति को लेकर, यह भिन्नता शर्मा को एक अलग पहचान देती है, शर्मा की इस निजता को जानने के लिए जरुरी है– उनकी रचना प्रक्रिया को समझना, शर्मा लगातार चीजों को अमूर्त स्तरों पर सोचने और विश्लेषित करने की मानसिक प्रक्रिया से जुड़े रहते है मामूली से मामूली नजर आने वाली स्थितियों या अनुभवों को देखने की उनके मन की आँख, दूसरों से बहुत अलग है।[2]

(1) विषयात्मक –

शर्मा ने अपने जीवन के 70 वर्ष कला साधना में व्यतित किये, जिसमें उन्होंने अपनी भावनाओं को संवेदना–सौन्दर्य के रूप में प्रस्तुत किया है, उनकी कुछ अभिव्यक्तियाँ ऐसी भी रही है जिसमें उनकी भावनाओं का प्रतीक मूर्त रूप आँखों के सामने साकार हो उठ्ता है इसी बीच चित्र रचना करते–करते कभी कुछ परिवर्तन करने पर जो कॉट–छाँट हो ताती थी उनमें शर्मा को कुछ अस्पष्ट आकृतियाँ दिखाई देती। जो

अपने को अभिव्यक्त होने के इन्तजार में व्याकुल रहती, अतः आरम्भ में शर्मा अपनी रचनाओं में अलंकरण करके किसी भी आकार में बाँधने का कार्य किया। इनमें कुछ आकृतियाँ रहस्यमय और आश्चर्यजनक रही। भावाभिव्यक्ति की यह अवस्था तत्पर अभिव्यक्ति पर खत्म होती। धीरे–धीरे शर्मा ने स्वतंत्र आकृतियों का चित्रण करने लगे, जिसमें मानवीय एवं विभन्न पशुपक्षियों की आकृतियाँ, दृश्य–चित्रण, भित्ती चित्रण, टेराकोटा की बनाई आकृतियाँ एवं कुछ काल्पनिक चित्रकृतियों के रूप में है।

इस प्रकार शर्मा के चित्रजगत का शुभारम्भ हुआ जो आधुनिक कला की मुख्य विशेषता रही है प्रकृति के प्रति अनुभूती की भावनाएँ ऐसी भी है जिनकी अभिव्यक्ति का स्पष्टीकरण शब्दों की अपेक्षा रंगों एवं रेखाओं में अधिक सुदृढ़ और स्पष्ट हो सकता है, इसलिए रेखांकन से चित्र बनाने की सहज प्रक्रिया के पीछे शर्मा का एक सशक्त कारण यह भी रहा है। जब उन्होंने यह अनुभव किया कि जगत के विभिन्न आकारों में निहित सौन्दर्य की समस्त साकार एवं निराकार भावनाओं को शब्दों द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता तो अपनी भावनाओं को रंगों के माध्यम से विषयगत रूपाकारों में बाँधना आरम्भ कर दिया और यह यात्रा अल्पावधि में अनायास ही तयी हो गयी थी और इसके लिए उन्हें अधिक प्रयत्न की भी आवश्यकता नहीं हुई, क्योंकि मननशील होने के कारण शर्मा की अभिव्यक्ति बहुत सशक्त थी। शर्मा ने अधिकांशतः ऐसी कला की रचना की जो अलौकिक जगत का प्रतिनिधित्व करते हैं आपके चित्रों के विषय रहस्यमयी व्यक्तित्व का प्रस्तुतीकरण कर अपरिचित अमूर्त व्यक्तित्व को मित्र के रूप में प्रस्तुत किया है तो कभी प्रकृति को गुरु में देखा, चित्रों का यही प्रस्तुतीकरण रंगों की परिभाषा चित्ररूपी दृश्यपटल पर बड़े ही सहज, किन्तु गहनता से प्रस्तुत हुआ है।

शर्मा ने प्रकृति के विभिन्न रंगों एवं छटाओं को अपनी तूलिका से बाँधा है प्रकृति में अनेक तत्व ऐसे है जो प्रत्यक्ष नहीं है, किन्तु फिर भी अनुभूतिमय अवश्य है ऐसे तत्वों की अनुभूति कर चित्र में उसकी अभिव्यक्ति करना कलाकार की सृजनशक्ति का परिचायक है। कलाकार जितना अधिक सृजनशील होगा, उतना ही

अधिक प्रकृति के साथ एकाकार होगा तभी चित्र में रस उत्पन्न होता है और उसकी अनुभूति होते ही चित्र सजीव हो उठता है। यही सजीवता कलाकार की चेतना का दर्पण है। प्रकृतिरूपी विषयवस्तु शर्मा की कला जगत का आधार रहा है, शर्मा ने प्रकृति की प्रत्येक सहज वस्तु से भी अपने हृदय को सौन्दर्यपान करवाया है क्योंकि सौंदर्य वस्तु में नहीं वरन् हमारी दृष्टि में होता है और कलाकार की दृष्टि प्रत्येक वस्तु में सदैव सौन्दर्य खोजती रही है, शर्मा की भी कला के लिए यही मान्यता रही है बादलों की अद्भुत आकृतियों से भरा आकाश, हवा के वेग से धरती पर रेत की बनती एवं लोप होती रूपाकृतियाँ, आकाश की ऊँचाइयों को छूते घने वृक्ष एवं उन वृक्षों के पीछे से छनकर आता सूर्य का प्रकाश, एकान्त प्रकृति का कोना, रेत पर पानी के बहाव से बनी सुन्दर लहरदार पंक्तिया जो कभी अनन्त तक जाती और कभी धरती में ही विलीन हो मन में एक अद्भुत एवं चमत्कारिक प्रभाव छोड़ते हैं प्रकृति की इन अनुभूतियों से प्रेरित होकर शर्मा की तूलिका ने अनेक अलौकिक सौन्दर्य से युक्त चित्र रचना को जन्म दिया। शर्मा ने सरल आकारों के पीछे ऐसे अमूर्त एवं गहन भावों को प्रस्तुत किया है जो दिव्य भावनाओं से ओत-प्रोत है और ये भावनायें इस लौकिक जगत से ऊपर उठती हुई प्रतीत होती है, यही तत्व शर्मा की कृतियों को असाधारण बनाते हैं।

शर्मा के चित्रों मे विषय की विविधता एवं सूक्ष्म दर्शन अपना विशेष महत्त्व रखते है विषय की दृष्टि से आपके चित्रों का विभाजन इस प्रकार कर सकते हैं।

(i) काल्पनिक अमूर्त चित्रण

(ii) छापा चित्रण

(iii) टेराकोटा

(iv) म्यूरल व मूर्तिशिल्प

(v) प्राकृतिक दृश्य

(vi) व्यक्ति चित्रण

(vii) तंत्रवादी चित्र

(i) काल्पनिक अमूर्त चित्रण –

चित्रकार श्री सुरेश शर्मा के मनरूपी आकारों के पश्चात् शर्मा ने स्वतंत्र चित्रों की रचना की जो काल्पनिक एवं अमूर्त आकारों के रूप में है शर्मा लगभग दशकों से निरन्तर स्वतंत्र काल्पनिक अमूर्त चित्रण कार्य कर रहे हैं, आपने अनेक विद्याओं में कार्य करने के पश्चात इस विद्या में महारत हासिल की, आपके सभी काल्पनिक चित्रों का विषय अन्टाइटिल्ड ही रहा है, काल्पनिक अमूर्तन शैली के इन चित्रों को उन्होंने विविध माध्यमों में जैसे जलरंग, एक्रेलिक, पेन्सिल, क्रेयोन्स चारकॉल, मिक्समिडिया आदि में निर्मित किया। शर्मा के इन चित्रों में उनका एक्रेलिक व मिक्समिडिया के प्रति विशेष आकर्षण झलकता है सम्भवतः मिश्रण माध्यमों द्वारा वे विषय की नाजुकता और उनके विजन की स्पष्टता को आन्तरिक स्तर पर अभिव्यक्त करने में अधिक सफल रहे। आपके इस प्रकार के विषय रहित अमूर्त चित्रों में सरलकृत रूपाकार, गतिशील रेखाएँ और भावोद्रेक करने वाले टेक्स्चर्स की भरमार है। स्वतंत्र काल्पनिक अमूर्त चित्रण श्री शर्मा की मनोवृति की दशा का परिचायक बन गया है, आपने इस प्रकार के 'अन्टाइटिल्ड' चित्रों की एक लम्बी श्रृंखला बनाई है। चित्र–रचना में शर्मा के रूपाकार कभी अमूर्त कभी ज्यामितीय तो कभी सुनिश्चित आकार के बजाए उनमें रंगों का फैलाव है, शर्मा ने मूर्त और अमूर्त चित्रण के बीच अपनी भावाभिव्यक्ति की। वे जिस विधि और रूप को विचारानुकूल समझते है तदानुसार विषय को अभिव्यक्ति देते हैं इसलिए आधुनिक चित्रकला में चेतन कला का स्थान प्रमुख है। श्री शर्मा कल्पना में पूर्ण विश्वास रखते है। आप इसके सहारे नये निराकार रूपों का निर्माण करना चाहते हैं और ये नये रूप इतने नये हैं जो प्रकृति में भी देखने को न मिल सके। इसलिए आधुनिक चित्रकला का रूप बहुत ही सूक्ष्म व काल्पनिक हो गया है और इस सूक्ष्म चित्रकला की कुंजी मनौविज्ञान रहा है, चित्र में क्या बनाया गया है वह इतने महत्त्व का नहीं है जितना यह समझना कि चित्र में जो कुछ बना है वह चित्रकार ने किस मानसिक परिस्थिति में कल्पना करके बनाया है, ऐसी मानसिक परिस्थिति का ज्यों ही ज्ञान होता, श्री शर्मा को उस चित्र में आनन्द प्राप्त होने लगता, और शर्मा अपनी

कल्पना रूपी सृजनशक्ति को कैनवास पर अभी भी निरन्तर उकेर रहे हैं। आज आप राजस्थान के समकालीन परिदृश्य में अमूर्त चित्रकार के रूप में सर्वोच्च शिखर पा चुके हैं।

सिर्फ रंग ही नहीं रेखाएँ भी और रेखाओं के अलावा टैक्सचर भी आपकी कलाकृतियों की प्राथमिकता है। चित्र के लिए चित्र में, दृष्टि के लिए दृष्टि में, और विचार के लिए विचार संप्रेषण के लिए विषय को चुनते है। विषय के चुनाव की घूट हमेशा कलाकार की व्यक्तिगत शैली के पक्ष में जाती है तथा यह शैली कलाकार की विचार दृष्टि पर निर्भर करती है और किसी भी कला में यही मुख्य चीज होती है, इसी से किसी स्वतंत्र रचना के अवयव संतुलित किये जाते हैं, कॉंटे–छॉंटे तराशे और सजाए जाते हैं। संवेदना के प्रबल दबाव के क्षणों में विचार दृष्टि किसी रचनाकार अथवा

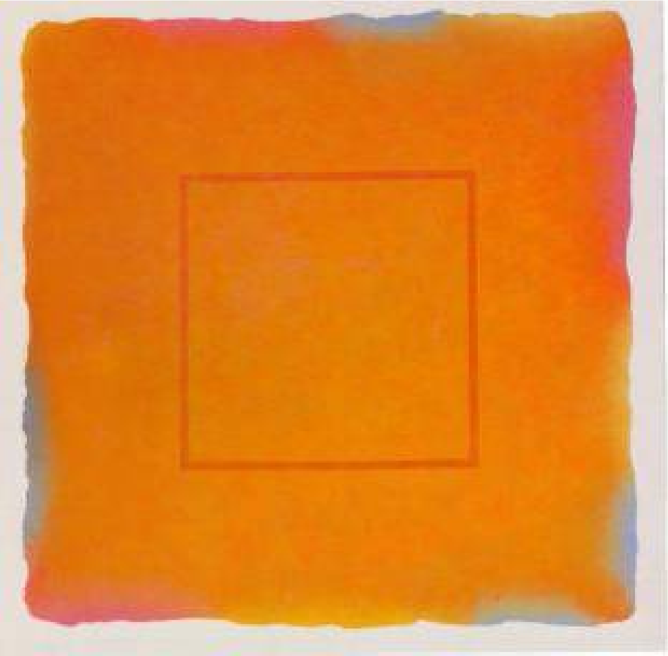

चित्र संख्या – 20 अन्टाइटिल्ड

कलाकार के भीतर किसी पौधे की तरह सायास रोपित अथवा कलम करके नहीं लगाई जा सकती। विचार दृष्टि के बनने में एक स्वतंत्र कल्पना के लगातार बनने की प्रक्रिया भी निहित होती है– शर्मा के घर–परिवार, संस्कार–देशकाल वातावरण और

जीवन के पढ़ाव पर भी यही स्थित लागू की। स्वतंत्र काल्पनिक दृष्टि के अभाव में निरन्तर रचनाएँ उकेरती रहती है श्री शर्मा ने अपनी परिपक्व स्वतंत्र दृष्टि से रचना के रंग कागज व कैनवास पर भरे हैं और जब बात चित्रों को देखने और उसमें निहित विचार दृष्टि को समझने की हो, तब थोड़ी सी जटिलता निश्चित रूप से सामने आती है क्योंकि शर्मा की चित्र विधा थोड़ी सी जटिल है। साहित्य में जिस प्रकार कविता अपनी समस्त तरलता और पारदर्शिता के ग्राह्ययता के स्तर पर थोड़ी जटिल विधा होती है उसी के अनुरूप शर्मा की चित्र विधा भी है। क्योंकि आपके काल्पनिक चित्र अत्यन्त जटिल सोच के परिणाम है। समकालीन कला ने तो निरन्तर नये प्रयोगों के कारण भावक के सामने बहुत सारी कठिनाइयाँ खड़ी की है किन्तु शर्मा के काल्पनिक अमूर्त चित्रण कला को सचमुच अपने कला होने का गौरव भी निश्चित रूप से प्राप्त हुआ है इसलिए आपकी कला देखने दिखाने और घर सजाने की वस्तु नहीं रह गई बल्कि गहन अध्ययन और सूक्ष्म पर्यवेक्षण की कला है और इसी परिदृश्य में शर्मा ने व्यक्त किया है कि मेरे अमूर्त चित्र कला दीर्घाओं में टहलते हुए दीवारों पर टंगे चित्रों के ऊपर सरसरी निगाह दौड़ाते हुए आगे बढ़ जाने भर से कला को नहीं समझा जा सकता, उस पर अच्छी या बुरी राय नहीं बनायी जा सकती। बल्कि उसको देखने के लिए समूची रचना प्रक्रिया को स्पर्श करना होगा, उसमें डूबना होगा दर्शक को अपने आपको उसका हिस्सा बनाना पड़ेगा। और खुद मेरे चित्र भी दर्शक से निष्ठा एवं तन्मयता की अपेक्षा रखते है।[3]

(ii) छापा चित्रण –

श्री शर्मा के आरम्भिक वर्षों में ग्राफिक/छापा चित्रण में विशेषकर रूची रही। इसी रूची को मध्यनजर रखते हुए शर्मा सन् 1968–70 के मध्य उच्च अध्ययन व कला के अर्न्तराष्ट्रीय स्वरूप को जानने हेतु अमेरिका की 'बैकमेन स्कालरशिप' पर ब्रुकलीन म्यूजियम आर्ट स्कूल चले गये, जहाँ आपने प्राद् ग्राफिक इन्स्टीट्यूट से प्रिन्ट मेकिंग (छापा चित्रण) कार्य को बारीकी से सीखा। तथा उसमें कुशल कलाकार के रूप

में उभरकर सामने आये तथा भारत वापस आकार आपने कई प्रिन्ट मेकिंग के कार्य किये। छापा चित्रण में पारंगत होने के पश्चात् शर्मा ने अपने कार्य को कला शिविरों व कला वर्कशॉप में भारतीय युवा छात्र कलाकारों को डिमोस्ट्रेशन भी दिये। श्री शर्मा ने छाप चित्रण की अनेक विधियों में छापा चित्र बनाये। शर्मा एक ऐसी कला रचना पद्धति और चिन्तन से रू–ब–रू हुए जो अब तक की पारम्परिक और शांतिनिकेतन से प्राप्त शिक्षा से भिन्न और चमत्कृत करने वाली थी। इस समय तक आपके विचारों में कला केवल रंग, रेखा, कैनवास, वस्तु और प्रकृति निरूपण तक ही सीमित नहीं है बल्कि कागज पर बनाये श्वेत श्याम चित्रों में भी सौन्दर्य प्राप्त हो सकता है। छापा चित्रों में भी आपने अनेक अन्टाइटिल्ड विषय के चित्र तैयार किये। क्योंकि कला का अर्थ सृजन द्वारा स्वतंत्र भावों संवेगों और विषयों को प्रकट करना तथा उनके अर्न्तनिहित गुम्फित सत्य और सत्ता को सरल और स्वच्छंद रूप से कलाकार की निजी अभिव्यक्ति से मुखर होता है।

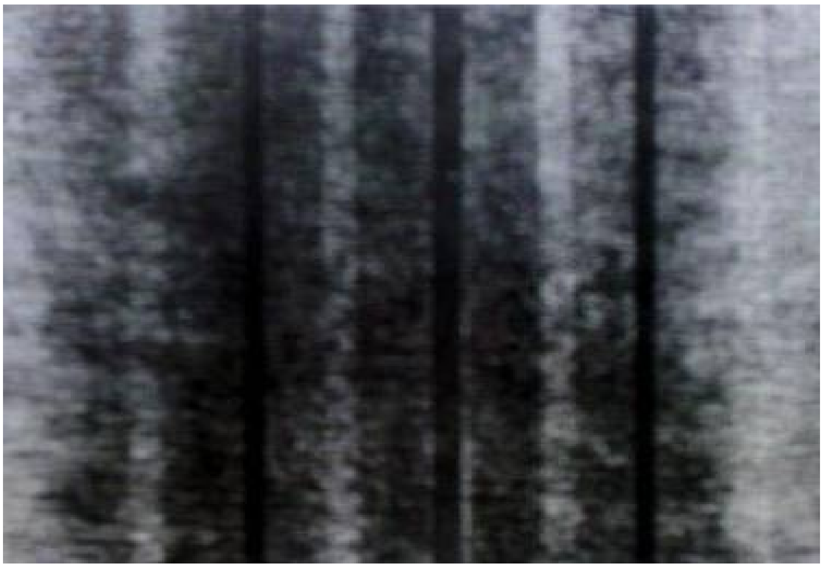

चित्र संख्या – 21 अन्टाइटिल्ड

शर्मा के ग्राफिक छापे बहुधा अमूर्तन की मौजूदगी के जरिये चित्रों को उकेरते है आपके छापा चित्रों में परिचित ज्यामितिक रूप है आयत, वर्ग जो मुख्यतः केन्द्रीय रचना में एक सधी हुई नियोजित दृष्टि के सहारे रचे गये हैं ऐचिंग, एनग्रेविंग, वुडकट

और लिथोग्राफ और दूसरी लोकप्रिय तकनीकों से बेहतरीन कार्य किये है, और छापा चित्रों में भी आकृतियाँ अनुपस्थित रही हैं और एक अलग संवेदना उत्पन्न करके गतिमय होने और निरन्तर किसी परिवर्तन से जुड़े रहने का भाव भी आपके छापा चित्रों में देखा जा सकता है। ग्राफिक माध्यम को अपनी अभिव्यक्ति के लिए चयनित करने के लिए महत्त्वपूर्ण कहा जा सकता है, क्योंकि जब उन्होंने इस माध्यम को ग्रहण किया तब यह इतना लोकप्रिय भी नहीं था। लेकिन छापा कला में विषयात्मक मूल्यों का स्थान भी महत्त्वपूर्ण है छापा कला के मूल्य अभिव्यंजना पद्धतियों के परिष्कार से सम्बन्धित होते हैं जिसमें शर्मा ने अपने छापा चित्रों को सार्वभौमिक किया। अतः शर्मा ने विषयात्मक रूप से छापा चित्रों के बिम्ब समय–समय पर दर्शकों के मन पर उतारने की कोशिश की।

(iii) टेराकोटा –

कलाविद् शर्मा ने चित्रों की दुनियाँ से हटकर कुछ टेराकोटा के कार्य भी किये, जिसके लिए भी उन्हें जाना जाता है, शर्मा ने रंगों व कैनवास से परे इस विद्या में भी बखूबी कार्य किये तथा इस विधा में अनेक विषय पर भाँति–भाँति के शिल्प, खिलौने, बर्तन, सुराइयाँ व घरेलू सजावटी की उत्कृष्ट वस्तुएँ आपने बनाई। शर्मा ने टखमण–28 के संस्थापक के रूप में रहते हुए भी यहाँ पर अनेक टेराकोटा उत्पादों को अनेक प्रकार

चित्र संख्या – 22 टेराकोटा शिल्प

रूपों में ढाला। शर्मा इन वस्तुओं को बनाने के लिए मिट्टी में रेत को छानकर तत्पश्चात मिलाकर उससे कई आकृतियाँ तैयार करते तथा इनको सुखाने के पश्चात इन्हें आग में पकाते जिससे ये अटूट हो जाती है। शुरुआत के दिनों में शर्मा की इस मेहनत व लगन ने आपको राजस्थान के टेराकोटा कला के प्रति काफी आकर्षित किया। राजस्थान के परम्परागत टेराकोटा एक व्यवसाय के रूप में विकसित हुई है तथा पीढ़ी दर पीढ़ी कलाकार अपनी कला का हस्तान्तरण करते रहे हैं इसलिए यह कला अक्षुण बनी रही है और यह टेराकोटा कला शर्मा के जीवन में लोक कला के प्रति आवश्यक अंग के रूप में स्थापित हुआ परन्तु कुछ समय बाद शर्मा के रंगों के सामने इस कला का कद बौना होता गया।

(iv) म्यूरल व मूर्ति शिल्प –

कलाविद् शर्मा ने टेराकोटा कला का स्वाद चखने के पश्चात म्यूरल कला व मूर्तिकला मे भी दो–दो हाथ किये। कला कैसी भी हो या कोई भी माध्यम हो आप उससे अछूते नहीं रहना चाहते थे, इसलिए उदयपुर शहर में रहते हुए आपने म्यूरल बनाने का कार्य भी आपने संयोजित किया। कोई भी म्यूरल आपने बनाया हो उसे हमेशा बड़ी तन्मयता के बनाया है। अधिकांश म्यूरल्स शर्मा ने रेत सीमेंट से तैयार किये है तत्पश्चात् उस पर

चित्र संख्या – 23 दू फिगर मूर्ति शिल्प

पलास्टर से फिनिशिंग कर उसे रंगों से सुशोभित किया है। कई म्यूरल्स आपने खुरदरे भी बनाये है जिन्हें मोटी बजरी के कंकरों की छाप से सुदृढ़ किया है। इसके अलावा शर्मा ने गिट्टी रेत व सीमेंट के माध्यम से मूर्तिशिल्प को भी आकार दिया है जिसमें 'टू फिगर' नामक शिल्प प्रमुखता से शर्मा ने बनाया है इसके अलावा भी शर्मा ने ८० के दशक में मिट्टी के शिल्प तैयार किये ये सभी कला कृतिया शर्मा के अथा कला प्रेम को दर्शाती है तथा शर्मा के अर्न्तमन की प्रस्तुतियाँ देती है जो राजस्थान की कला संस्कृति में अपने आपको जोड़ती है। शर्मा जी की प्रारम्भिक से वर्तमान कला में हम इस प्रकार कई परिवर्तन देख सकते है। यह परिवर्तन विपरित नहीं अपितु आपकी शैलीगत विशेषताओं के अनुरूप ही है, एक क्रम में भी है जो समय के साथ-साथ परिवर्तन, विकास व गति का द्योतक है। यह मानवीय विचारों की तारतम्यता के गुणों को भी दर्शाता है एक सफल रचनाकार जब अपनी कृतियों में वर्तमान या समसामयिक परिदृश्य से प्रभावित होकर जब उन्हें अपनी स्मृति में समावेश करता जाता है तो वे सृजनधर्म में स्वतः ही अवतरित होकर समाज एवं स्वयं का सन्तुष्टि प्रदान करता है ऐसा करके शर्मा ने कला जगत को लाभान्वित किया है।[4]

(v) प्राकृतिक चित्रण –

प्रकृति जो कलाकार के लिए अनादिकाल से रहस्य, रोमांच एवं सर्जन का आदर्श रही है समाज के प्रत्येक वर्ग को प्रभावित किया है एवं धर्म, जीवन एवं अभिव्यक्ति के आदर्श रूप में स्वीकारा है, कलाकार एवं प्रकृति एक दूसरे के पूरक हैं। जिससे कलाकार अपनी अभिव्यक्ति के विविध उपादानों को प्राप्त करता है। प्रकृति के विविध रूपों का सूक्ष्म-स्थूल चित्रण करता रहा है, मूर्त-अमूर्त प्रभावों को फलक पर रंगों के माध्यम से पुनसर्जित करता रहा है और इन्हीं विषयों पर आधारित प्रकृति के विविध पक्ष एवं परिवर्तनशीलता से सदैव शर्मा को ऊर्जा प्राप्त हुई है शर्मा के प्रकृति पर आधारित चित्रात्मक विषयों को आरम्भ से ही देखा जा सकता है। शर्मा ने प्रकृति

को आधार बनाकर उच्च स्तर की कलाकृतियाँ तैयार की है प्रकृति के बदलते स्वरूप व नित्य दिन दिखाई देने वाला आवरण शर्मा के मस्तिष्क पर छाप छोड़ता है और इससे प्रेरणा पाकर आप चिन्तन व मननशील हो जाते है तथा कागज या कैनवास पर चाहे स्थाही हो या रंग या फिर चाहे स्याही हो या रंग या फिर छापा कला से प्रकृति के मूड को उकेरने में निरन्तर प्रयासरत रहते। शर्मा ने आरम्भ में प्रकृति से प्रेरणा पाकर कुछ लैण्डस्केप बनाये और तत्पश्चात अमूर्त चित्रों में शर्मा प्रकृति के निराकार आवरण व सतरंगी रंगों को आज तक कैनवास पर अपना विषय नियुक्त कर रखा है। जिसमें सैकड़ों तरह के पोतों से ज्यामितीय खण्डों में विभाजित करके इसकी समरसता को संयोजित कर अपनी गूढ़ भावनाओं को स्थापित करते हैं। शर्मा चित्रात्मक विषयों को लेकर ज्यादा चिंतित कभी नहीं हुए, क्योंकि सूर्योदय के साथ ही सत्य की खोज में हर क्षण आपको प्रकृति से प्राप्त विषय अपने आस पास मिल ही जाते हैं और शर्मा में यह गुण व आदत बाल्यकाल से ही मौजूद रही है। शर्मा ने इन्हीं सब उपादानों को अपनाया है, और प्रकृति में समायोजित तत्वों को अमूर्त रूपों में अपने चित्र फलक पर प्रस्तुत किया है।

चित्र संख्या – 24 श्री शर्मा लेण्डस्केप चित्र बनाते हुए

(vi) व्यक्ति चित्रण –

कलाविद् सुरेश शर्मा ने अपने छात्र अवस्था के दौरान खूब व्यक्ति चित्र बनाये शर्मा रोज कम से कम 40–50 स्केच करते व्यक्ति चित्रों में वो देवी–देवताओं के स्केच भी काफी मात्रा में किया करते थे। स्कूल समय में आप–अपनी अभ्यास पुस्तिका में स्केच–ही स्केच से भर देते था चॉक या खड़िया से दीवारों पर भी कुछ न कुछ स्केच बनाते। कॉलेज में प्राध्यापक बनने के बाद आपने बहुत समय तक व्यक्ति चित्रण छात्रों को करवाते थे, परन्तु धीरे–धीरे व्यक्ति चित्रों का प्रभाव आपकी नजर में शून्य होता चला गया और आपने आगे चलकर इसे विधा में कार्य करना कम कर दिया और अपनी एक नई पहचान बनाई।

(vii) तन्त्रवादी चित्र –

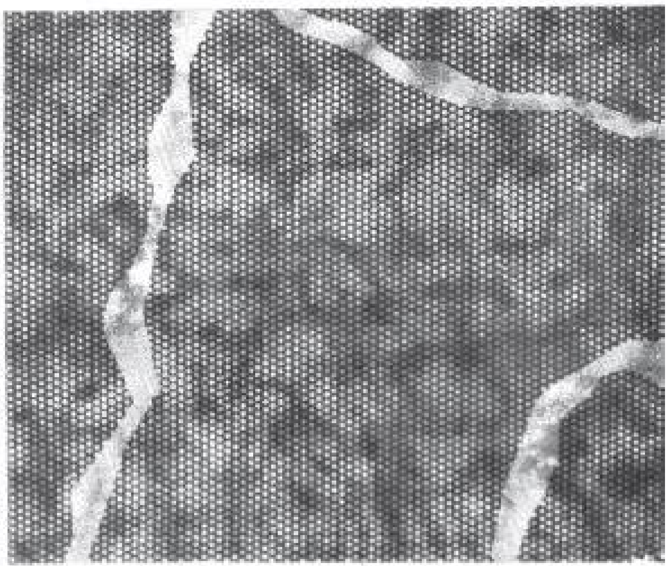

चित्र संख्या – 25 एनग्रेविंग ऑन एल्युमिनियम

प्राचीन भारत में सिद्धी की विद्या का नाम तन्त्र था। तान्त्रिक साधना में सहायता के लिए जो आकृतियाँ चित्रित की जाती थी उन्हें आधुनिक युग के आलोचकों ने तान्त्रिक कला कहा है इसे वस्तु निरपेक्ष कला का ही एक रूप समझा जाता है तांत्रिक कला को अमूर्त कला के विकास का अगला चरण माना जाता है जिन चित्रकारों ने भी आकृतिमूलक वर्गों तथा वृत्तों व चौखानों का अंकन किया है उन्हें

तांत्रिक कला का नजदीकी समझा जाता रहा है और चित्रकार सुरेश शर्मा के ऊपर भी इस तरह का लांछन लगा। बहुत से कला समीक्षकों व विचारकों ने शर्मा की कला को तंत्रवादी कहा है क्योंकि आपकी कला में ऐसी गम्भीरता व दर्शन का आभास होता है। आपके चित्रों में विचारों की उच्च भाव-भूमि है। जब चित्रों में विचारों की उच्च भाव-भूमि है। जब चित्रों पर दृष्टि डालते हैं तो एक मस्तिष्क पर जादूनुमा प्रभाव पड़ता है। मानो आध्यात्मिक आभा हो। जैसे सृष्टि के उन रहस्यों की व्याख्या का प्रयत्न किया गया हो, जिनके लिए पहले तन्त्रों में ज्यामितीय प्रतीकों का प्रयोग हुआ हो। हालांकि शर्मा ने तांत्रिक विचारधारा से इन चित्रों का निर्माण नहीं किया क्योंकि इससे वो कोसों दूर है परन्तु देखने वालों को समझ में क्या आता है ये उन्होंने भी न कभी सोचा नहीं। और शर्मा के इन चित्रों को तंत्रवाद के समकक्ष रख दिया।

(2) सृजनात्मक -

कलाविद् श्री सुरेश शर्मा के चित्रों के तकनीकी विवेचन के अन्तर्गत सृजनात्मक तत्व, स्मृति बिम्ब (Memory images) होते हैं। किन्तु ये प्राथमिक बिम्बों की भांति स्पष्ट अथवा विवरणात्मक नहीं होते हैं, सामान्य तौर पर सृजनात्मक गुण आपकी कला में वस्तुबोध के तुरन्त बाद की स्मृति में आते हैं, अलग-अलग स्मरणों के साथ एकत्रित कर संयोजन करने से सृजनात्मकता उत्पन्न होती है, और शर्मा ने चित्रों में इसी प्रकार के तथ्यों का प्रयोग करके कला सृष्टि की रचना की। वास्तव में शर्मा ने सृष्टि के वातावरण रूपी परिदृश्य के कलात्मक बिम्बों का सबसे ज्यादा प्रयोग किया और उनकी कल्पनाशक्ति इतनी प्रखर है कि वे स्मृति के अन्तिम छोर तक स्पष्ट रूप से सोच सकते हैं।

शर्मा की सृजनात्मक कल्पनाशक्ति ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से उनके मस्तिष्क में अनेक प्रकार के संवेदन का एक मानस चित्र बनाती है, जिसमें रंग, उष्मा स्पर्श, गति इत्यादि गुण होते है। इन कलात्मक बिम्बों में सृजनात्मकता के साथ-साथ कुछ अन्य विशेषताएँ भी है जिनसे शर्मा के सृजनात्मक तथ्यों को कई प्रकार से विभाजित किया गया है।

(i) पिक्टोग्राफिक (प्रतिबिम्बात्म) छवि –

शर्मा की कला कृतियों में स्मृति के आधार पर या भावों का यथातथ्य वर्णन अथवा अंकन प्रतिबिम्बात्मक है।

(ii) प्रतिभासिक छवि –

शर्मा की कलाकृतियों की सृजनात्मक छवि स्पष्ट होती है और उनके ग्रहण करने योग्य सृजनात्मक गुण उनके चित्रों की प्रतिभासिक उपस्थिति दर्शाती है। जिसमें दृष्टा को मानसिक साक्षात्कार से सामना करना पड़ता है।

(iii) मनोभावात्मक छवि –

शर्मा के चित्रों की सृजनात्मकता में गूढ़ गाम्भीर्य सूक्ष्म व्यंजना छिपी होती है इनके चित्रों में वस्तुओं के बाह्‌य सादृश्य आवश्यक नहीं होते है। ये नूतन, सरल, सहज तथा पूर्ण होते हैं और ये चित्र शर्मा के मनोभावात्मक दृश्य के प्रमाण होते हैं।

शर्मा को कला सृष्टि आस्वादन के लिए सृजनात्मक गुणों की आवश्यकता होती है, किन्तु आप विषयवस्तु के चयन करने हेतु पूर्व संवेदनाओं को जागृत करते हैं, उन्हें प्रस्तुत करने हेतु, विभिन्न मानसिक मनोभावात्मक व तथ्यात्मक साधनों की खोज करके प्रभावपूर्ण संयोजन को रूपायिक करते हैं इन सबमें आप कल्पनाशक्ति का सहयोग लेते हैं और दर्शक भी सृजनकारी कल्पना से ही कृति के सौन्दर्य का अनुभव करता है। चूँकि शर्मा की कला में बुद्धितत्व का योग है, इसी से आपकी कला की स्थिति इन्द्रियानुभव तथा बुद्धि के बीच में मानी गयी है और कलाकृतियों की सृजनाकारी रचना कल्पना के संयुक्त सहयोग से बनती है, तथा भावों की अलौकिक स्थिति आदि अनेक प्रकार के उत्पन्न करने वाली क्रिया अथवा शक्ति सभी अर्थों में सृजनात्मकता के सर्वाधिक निकट है।

सृजनात्मक बिम्बों की विशेषता–

शर्मा जिन सृजनात्मक बिम्बों का प्रयोग करते हैं जिसकी तीन विशेषताएँ प्रमुख रूप से है।

(i) ताजगी –

अब तक जिस चित्रण बिम्ब का साक्षात्कार न किया गया उसे उपस्थित अनुभूति में उपस्थित करना। इससे उनकी सृजन छवि मौलिकता उत्पन्न होती है, सामग्री अथवा दृष्टिकोण की नवीनता से भी कलाकृति में ताजगी नजर आती है। इस प्रकार सृजनात्मक बिम्ब एक ऐसा दर्पण है जो किसी नवीन दृष्टिकोण से सत्य की झाँकी उपस्थित करता है।

(ii) सघनता –

सृजनात्मक छवि में गति अथवा एकता अधिक से अधिक केन्द्रित करने से सघनता आती है, अर्थात कम से कम स्थान में अधिकतम संयोजन के तत्व समावेश किये जाए। इसके कारण कृति के सभी अंग परस्पर गुंथे हुए दृष्टिगत होते हैं।

(iii) उत्तेजनात्मक क्षमता –

शर्मा के चित्रों में उत्तेजना उत्पन्न करने की क्षमता अथवा शक्ति निहित है, यदि कोई बिम्ब कलागत आवेग के प्रति आपने मन में कोई प्रतिचार उत्पन्न करते हैं तो यह क्षमता आन्तरिक सौन्दर्य की विशेषता का परिचायक होती है। स्पष्टता उत्तेजित क्षमता का सगुण है अर्थात इसका अर्थ प्रस्तुतीकरण और उत्तेजित रूप में औचित्यपूर्ण सम्बन्ध सम्मिलित होता है ये सभी तीनों गुण शर्मा की सृजनात्मक विचारधारा की विशेषताएँ है।

आपकी सृजनात्मक कलाकृतियों का प्रमुख कार्य एक रूप से संप्रेषण का रूप मानी जाती है। जिस भाव की अनुभूति शर्मा के मन में उत्पन्न होती है, उसे दूसरों तक पहुँचाना और सम्मिलित करना आपकी छवियों की प्राथमिकता है यह अनुभूति अभिव्यंजना के गुणों द्वारा व्यक्त होती है और इस गुण का प्रभाव ग्रहण सभी कलाकृतियों में एक समान होता है। तभी अमूर्त रूपी सृजनात्मक पक्ष में सम्प्रेक्षण हो पाता है। इस प्रकार शर्मा की कला में समान अनुभूति जगाने का विचार कला सम्प्रेषण का कार्य करती है और यही सामग्री सृजनात्मक रचना प्रक्रिया का अभिन्न अंग है।[5]

(3) तकनीकी –रेखा, रंग, आकार एवं कला के नवीन आयाम –

किसी भी व्यक्ति व कलाकार का व्यक्तिगत तरीके से कार्य करने का तरीका उसकी शैली या तकनीक बन जाती है। किसी औजार या तूलिका से किये गये नये और विशेष कार्य को तकनीक की संज्ञा दी जाती है इसी के अनुरूप शर्मा की व्यक्तिगत कार्यशैली व तकनीक राजस्थान ही नहीं वरन् पूरे भारतवर्ष में सबसे अलग सबसे भिन्न व रोमांचित करने वाली है जो देखने वालों के मन मस्तिष्क को झझकोर कर रख देती है। शर्मा की कला तकनीक के कई मायने है, जिनमें विभिन्नताओं का समावेश व रंगों और रेखाओं का संयोजन अतुलनीय है।

शर्मा की दृष्टि सदैव प्रकृति की अमूर्तता में अनन्तता, रहस्यात्मकता का प्रकाश खोजती रही है और उसी की परिणति चित्रों में विभिन्नता उत्पन्न करती है। निर्माण की प्रक्रिया के उच्चतम शिखर तक हर कोई चित्रकार उस तह तक नहीं जा पाता जहाँ उसको अनेक संयोजित मोतियों की माला गुंथने का मौका मिले बल्कि एक ही धारा में विभिन्नताएँ स्थापित कर उसे संजोना तकनीकी का पर्याय बन जाता है और ऐसी ही धारा शर्मा ने अपनी कला तकनीक में हासिल की। उनके युवा चित्रकारों को अपनी ओर खींचता है। शर्मा की कला तकनीक उस नृतक की तरह है जो अपनी विभिन्न मुद्राओं से दर्शकों का मन मोह लेता है और दर्शक शांतचित्त होकर नृतक की मुद्राओं को जानने, परखने की कोशिश करते हैं, परन्तु ऐसे कार्य के सीखने के लिए उन्हें उस नृतक के समानान्तर कई बार जुड़ना पड़ता है। इसी तरह शर्मा के रंग और टैक्सचर के अंदाज को जानना हो तो शर्मा को बारीकी व ईमानदारी से कार्य करते देखना पड़ेगा, तथा मन मस्तिष्क को स्थूल रखने की जरुरत पड़ेगी। शर्मा का स्प्रेगन की सहायता से रंगों का छिड़काव व बारी–बारीसे विभिन्न रंगों की परते लगाना आकर्षक व मनोहारी है।

कैनवास पर रंगों की कई परतें लगाने के तत्पश्चात विभिन्नता लिए हुए सूक्ष्म पोत तथा उसके बाद उन्हें ज्यामितीय व गोलाकार आकार में विभाजित करके पारदर्शी

रंगों की वाश पद्धतिनुमा परत बड़े ही कुशलतापूर्वक व एकाग्रचित्तता का कार्य शर्मा जी करते हैं। कलाकृति के अन्तिम पड़ाव में वॉशनुमा परत उनके द्वारा लगाये पोत की बनावट को स्थाई करती है जिसे देखने वाले आँखों से देखकर महसूस कर सकते हैं उनके द्वारा लगाये गये पोत ओस की बूंदों जैसे है तो कई बदलते वातावरण की धुंधली आभा जैसे। ये सभी शर्मा की कला तकनीक को परिभाषित करते हैं।

रेखा –

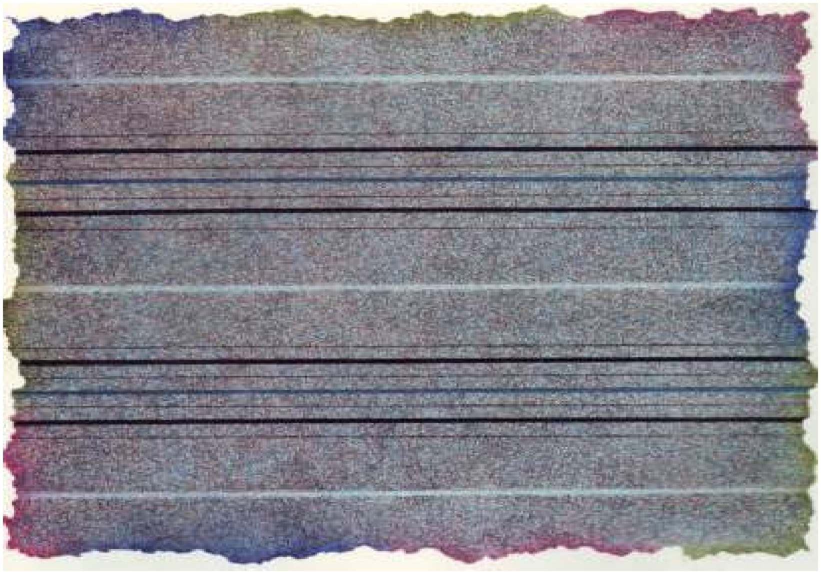

चित्र संख्या – 26 एनग्रेविंग ऑन एल्युमिनियम

रेखाएँ अपने आप में एक चारित्रिक विशेषता रखती है। पूर्वी देशों की कला प्रायः रेखा प्रदान ही रही है, आधुनिक कला के अर्न्तगत भी इनका प्रयोग निश्चय ही हुआ है और कला के संदर्भ में अनेक प्रकार की रेखाएँ अस्तित्व में आयी है और जहाँ रेखा न खींची जाने पर भी दो रंगों के मध्य रेखीय प्रभाव आ ही जाता है। शर्मा के चित्रों में रेखाओं का प्रयोग बहुत कम मात्रा में हुआ है। उनका कहना है कि 'मेरे रंग ही रेखा है' शर्मा ने अपने अनाकृतिमूलक प्रयोगवादी चित्रों में रेखाओं द्वारा पोत का प्रभाव भी दिखाया है। उनके चित्रों में मोटी व पतली रेखाओं को ज्यामितीय ढंग से चित्रों के मध्य व आस–पास के क्षेत्र को छोड़कर गोलाकार आकृतियों व चौखानों के

रूप में काम में लिया गया है, कहीं–कहीं रेखाओं के घटते क्रम से चौखाने तैयार किये है या फिर अनेक चित्रों में हल्की मोटी रेखाएँ खिड़की की सलाखें जैसी प्रतीत होती है कई चित्रों में अलग–अलग रंगों को एक दूसरे के नजदीक लगाकर या एक दूसरे के ऊपर रंगों की परत लगाकर रेखाओं जैसा आभास करवाया है, जिन्हें काल्पनिक रेखा की संज्ञा दी जाती है।

ये रेखाएँ कहीं सीधी खड़ी है तो कहीं क्षितिज के समानान्तर दिखाई गई है, जो महत्त्वाकांक्षा, दृढ़ता, अभिजात्य स्थिरता मानसिक शांति, मौन इत्यादि भाव दर्शाती है, पोत के रूप में जो रेखाएँ काम में ली गई है वो एक संघर्ष, क्षणिकता, अनन्तता को परिभाषित करती है। इस तरह से रेखाओं को उन्होंने निपुणता से उकेरा तथा रेखाओं के वैशिष्ट्य को उजागर कर वस्तु निरपेक्ष कला की व्यंजना मुखरित करने की पूरी कोशिश की है।

रंग –

किसी भी कलाकृति में रंग या वर्ण का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। मनुष्य के जीवन में रंगों का होना महत्त्व रखता है। शर्मा की अत्यधिक कलाकृतियाँ रंग प्रदान है और रंग ही शर्मा के चित्रों की आत्मा है। जिस प्रकार से एक मनुष्य का शरीर आत्मा के बिना, एक फूल खुशबू के बिना अधूरा रहता है उसी तरह शर्मा की कलाकृतियों में रंग आत्मा की तरह ही है।

शर्मा की कलाकृतियों में प्रमुख रूप से लाइट ब्ल्यू, ओरेंज, इंडियन रेड, ग्रे, ग्रीन, वाटर ग्रीन, ब्लेक व धूसर रंगों का समावेश है तथा कुछ मिश्रित धूसर रंगों के धब्बों से भी विभिन्न तानें उत्पन्न की हुई है। यह सभी रंग शर्मा के पसंदीदा रंगों में से है। इन्हें वो ज्यादा से ज्यादा काम में लेते हैं तथा शर्मा ने इन सबके बाद आजकल अपनी कलाकृतियों परपल, वाइलेट, येलो, येलोऑकर इत्यादि रंगों का गोलाकार आकृतियों के साथ संयोजन किया है जिसमें शर्मा ने एक्रेलिक रंग, ड्राई पेस्टल, तथा रंगीन पेन, स्याही इत्यादि का प्रयोगात्मक कार्य किया है।

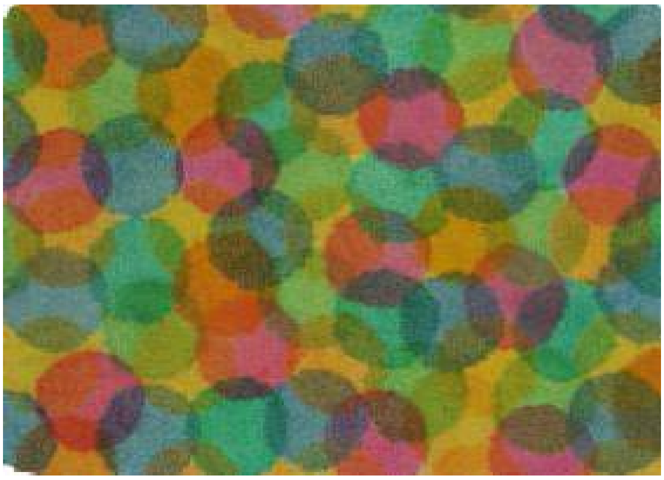

चित्र संख्या – 27 अन्टाइटिल्ड

मिक्स मिडिया (मिश्रित रंगांकन पद्धति) तो शर्मा की आदत में शुमार है। जो उनकी पहचान में सहायक बनी है।

शर्मा की रंग योजना पद्धति को गुणों व विशेषता के आधार पर तीन भागों में विभाजित किया है। जिसमें पहला–उनके रंगों की निजता दूसरा–रंगों की तीव्रता व सौम्यता तथा तीसरा–उनके रंगों का व्यवहारिक मिश्रण, हल्कापन व गहरापन तथा रंगों द्वारा पोत का प्रभाव इत्यादि। शर्मा ने खण्डों में विभाजित वर्णक्रम की वृत्ताकार व चौखानों के प्रयोग जिसके परस्पर विरूद्ध खण्डों में विभिन्न रंगतों का वर्णक्रम रूपायित किया है और रंगों के आरोहों को धुंधले व चमकदार तीव्रता के साथ स्थापित किया है। जो उनकी मनोवैज्ञानिक दृष्टि व सृजनात्मक दृष्टि का परिचायक है।[6]

आकार –

कलाकार व देखने वाले की भावनाओं एवं प्रकाश इत्यादि चंचल बाह्य तत्वों को छोड़कर रचना तत्वों पर आधारित वस्तु की बाह्य आकृति व बनावट तथा दर्शक के मस्तिष्क व मन पर पड़ने वाला बिम्ब आकार होता है। और आकार का सौन्दर्यगत प्रभाव ही रूप कहलाता है। किन्तु शर्मा के चित्रकर्म के सम्पूर्ण समय में केवल

आरम्भिक दौर के चित्र ही आकारगत रहे हैं। जिसमें उन्होंने मूर्तियाँ, लैण्ड स्केप, म्यूरल। टेराकोटा के खिलौने व घरेलू सजावटी वस्तुएँ, स्केच इत्यादि बनाये। लेकिन लगभग दो तीन दशकों से शर्मा निराकार अमूर्त चित्र बनाते हुए अपने हुनर को निरन्तर प्रयोगशीलता के आधार संयोजित कर रहे हैं।

शर्मा के अनुसार उनके रंग ही उनकी कलाकृतियों के असली नायक है। उनके आकारों में सपाटपन, तीखापन व समानुपात की झलक है। जो कि आधुनिक कला में नया टेण्ड (प्रचलन) बन गया है।

कला के नवीन आयाम –

कलाविद् श्री सुरेश शर्मा ने किसी एक माध्यम में कैद होकर कार्य नहीं किया, वो कला के नवीन आयामों का प्रयोग करने में हिचकिचाते नहीं है। उन्होंने स्याही, जलरंग, तैलरंग, पेस्टल, रसायन व ग्राफिक, छाया। चित्रांकन मूर्तियाँ, म्यूरल इत्यादि कई माध्यम व तकनीकों में अपने कार्य को नये–नये आयाम दिये हैं। छापाकला पद्धति में तो उन्होंने विदेश जाकर शिक्षा ग्रहण की और लिथोग्राफि, वुडकट, एनग्रेविंग, लीनोकट इत्यादि में महारत हासिल की। जो भारतीय युवा कलाकारों के लिए उपयोगी साबित हुआ।

इस पूरे कला के दौर में वह चित्र सतह की विभिन्न रंगान्वितियों से छाया प्रकाश के अंधेरे–उजारे में दमकते हुए वृद्धावस्था में भी कैनवास को अकेला नहीं छोड़ते। तथा रचनाओं के कथ्य को धारदार बनाये रखने का आग्रह बरकरार है, वही नये–नये तरीकों व आयामों की बारीक संवेदना से निरन्तर जुड़े हुए हैं।

(4) कला शैलीगत मौलिकता –

किसी भी कलाकार की कला शैली की श्रेष्ठता किन–किन मानदण्डों पर खरी उतरती है अर्थात ऐसे बिन्दु जिन सभी पर कलाकार की कलाकृतियाँ उत्तम मानी जाए और कला सृजन की श्रेष्ठता में रचनात्मक वैविध्य की विशेषता हो, न की घिसि–पिटी

प्रणाली, ऐसी कला शैली को शैलीगत मौलिकता के नाम से पहचाना जाता है और यह गुण शर्मा की कला शैली में विद्यमान है, जबकि आधुनिक कलाबोध में शैलीगत मौलिकता की समस्या से कई कलाकार जूझ रहे हैं।

कला परम्परा की धरोहर को आगे बढ़ाने के लिए शर्मा ने कला रचना की आधारभूत कल्पना में क्रान्तिकारी परिवर्तन किये और प्रचलित सभी प्रतिबन्धों को नकार कर स्वतंत्र अभिव्यक्ति को सर्वोत्कृष्ट माना। शर्मा ने नवीन निराकार रूप, निजी शैली, अनटाइटिल्ड विषयों की विविधता कल्पना के स्वच्छंद परिप्रेक्ष्य तले चित्रों का मौलिक सृजन करने की चेष्टा की। शर्मा ने तर्क संगत अभिव्यक्ति की एक विशिष्ट शैली को अपनाया जिसे अपने तरीके से सजग कलावृत्ति में बदल दिया। और अपनी कला शैली से प्रचलित कला परिपाटी व परम्परागत समूचे आदर्शों, प्रचलित मान्यताओं से अलग हटकर नये और तरीकों से चौंकाने वाली कला के नये आयाम स्थापित किये। प्रारम्भ में शर्मा ने यथार्थवादी चित्रण किया, परन्तु धीरे-धीरे वह अरुप व मानसिक प्रवृत्तियों पर आधारित चित्रों की ओर बढ़ गए। वर्तमान समय में सुरेश शर्मा एक ऐसे कलाकार है जिनकी तकनीक, विषयानुगत विचार व प्रयोग तीनों व्यक्तिगत है। कला शैलीगत रूपों की संवेदनाएँ उनको सबसे भिन्न व उच्च पायदान पर खड़ा करती है। शर्मा की कला में रंग, रूप, रेखाएँ, पोत इत्यादि को बनाने की तकनीक ये सभी पहलू विशिष्ट हैं। जिस संघर्षमय दौर में बहुत से प्रतिभाशाली एवं साहसी कलाकार इस कला जगत में अवतरित हुए जिन्होंने भारतीय कलागत मूल्यों के साथ जुड़कर मौलिक कलाकृतियों का सृजन किया शर्मा उसी दौर की एक कड़ी है। जो उम्र भर कैनवास से वार्तालाप करके अपनी भावनाओं को बताने के लिए उसे समाज के समक्ष प्रस्तुत करते रहे।

♦♦♦♦♦

सन्दर्भ -

1. हेमन्त शेष, कला दीर्घा-अप्रेल 2003 पृ.सं.-14
2. विद्यासागर उपाध्याय-आकृति जु.सि. 1995, पृ.सं.-18,19
3. A . L. Damami : Suresh Sharma-A Renascent Page No.- 82-85
4. ए.एल. दमामी : राज. की आधुनिक कला एवं कलाविद्, पृ.सं. 81-83
5. अशोक-कला सौंदर्य और समीक्षा शास्त्र, पृ.सं.-72-74
6. रीता प्रताप-भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, पृ.सं.-431

पंचम अध्याय

सुरेश शर्मा की कला का

समीक्षात्मक अध्ययन एवं विश्लेषण

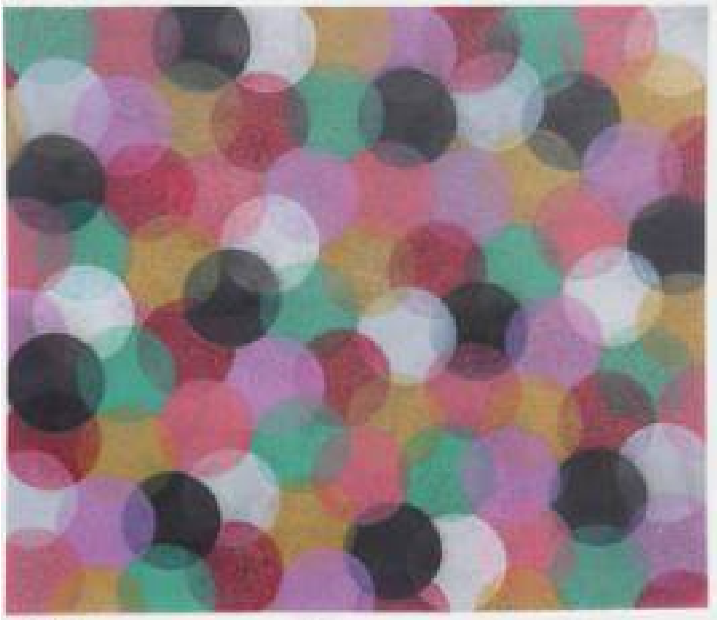

सुरेश शर्मा की कला का
समीक्षात्मक अध्ययन एवं विश्लेषण

राजस्थान के अमूर्त चित्रकारों में कल्पनाशील और अन्वेषणात्मक–प्रवृत्ति के चित्रकार व कलाविद् श्री सुरेश शर्मा एक ऐसा नाम है, जिन्होंने अपनी खोजपूर्ण दृष्टि से कला के क्षैत्र में देश और काल के परिप्रेक्ष्य के द्वारा असाधारण अभिव्यक्ति दी है। शर्मा कला जगत में अपने सृजन द्वारा शीर्ष स्थान बनाने के लिए एक दीर्घ कला यात्रा से गुजरे है। वर्तमान में वे अनुभव सिद्ध परिपक्व स्तर के एक ख्याति प्राप्त शिक्षक, मार्गदर्शक और कलाकार है। सुरेश शर्मा का शैशव उस दौर से गुजरा जब भारतीय कला और विशेषतः राजस्थान की कला संक्रमण काल से गुजर रही थी, इस समय राष्ट्रीय आजादी की गूंज देश के कोने–कोने से प्रति ध्वनित हो रही थी। आजादी का संघर्ष अपने चरम पर था। युवा अपने प्रत्येक कर्म और लक्ष्य की साधना में स्वतंत्रता की चेतना से जागृत थे। ऐसे में युवा सुरेश शर्मा भी एक कलाकार के रूप में परिपाटियों से मुक्त स्वतंत्र अभिव्यक्ति का सपना साकार करना चाहते थे। स्कूल–कॉलेज की पढ़ाई समाप्त करने के पश्चात कला की उच्च शिक्षा हेतु वे शान्ति निकेतन में अध्ययन करने गये जहाँ उन्होंने महान कलाकारों की देखरेख में उचित मार्गदर्शन मिला। शान्ति निकेतन में अध्ययन के दौरान उनके चित्रों की गहराईयों में विश्व प्रसिद्ध कोटा–बून्दी कलमों का भी प्रभाव था। चित्र रचना का ताना–बाना स्थानीय नैसर्गिक वातावरण और सांस्कृतिक धरोहर का उनके अवचेतन मन पर गहरा असर था।

सुरेश शर्मा ने चित्र रचना से यह तात्पर्य समझा की कलाकार अपनी कला के द्वारा विषयों के नए अर्थों को भाषायी स्तर पर नए मुहावरों तथा वैश्विक सन्दर्भों में उद्घाटित करता है। यद्यपि यह उनके युवा कलाकार की निर्मिति का काल था, किन्तु होनहार कलाकार के विकास का चरण आरम्भ हो गया था। इसी समय भारतीय

आधुनिक कला का परिदृश्य नया मोड़ ले रहा था। जागरूक कलाकार उन किरणों को तलाश रहा था जो वैयक्तिक अभिव्यक्ति को प्रकाश दे सके। सुरेश शर्मा का संघर्ष प्रचलित शैलियों, अभिप्रायों, तकनीकों के बीच अन्वेषणात्मक और प्रयोगवादी अभिव्यक्ति को स्थापित करने के लिए था। छठे दशक तक कलाकर शर्मा विभिन्न प्रचलित शैलियों, तकनीकों सिद्धान्तों और मुहावरों से भली–भाँति अवगत हो चुके थे, किन्तु जिज्ञासु और खोजी, गैर परम्परावादी स्वभाव ने उन्हें यहीं तक सीमित नहीं रखा। वे कला के उन गवाक्षों को उजागर करना चाहते थे जो अब तक अनजाने और अदृश्य रहे थे।

छठे दशक के अन्तिम वर्षों में वह समय आ ही गया जब उन्हें अमेरिका में कला अध्ययन के नए आयामों को जानने हेतु ब्रुकलीन संग्रहालय द्वारा दो वर्षों के लिए बैकमेन मेमोरियल छात्रवृत्ति प्रदान की गई। इन्हीं वर्षों में अमेरिका प्रवास के अनन्तर वे कला के शुद्धतावादी आन्दोलन से अत्यधिक प्रभावित हुए।

न्यूयार्क स्कूल में उन्हें ग्राफिक सेन्टर से कला की सूक्ष्म व गहराई को समझने का अवसर मिला और शर्मा के समक्ष अब और भी नए और व्यापक अर्थों का खुलासा हुआ वे एक अलग किस्म की ऐसी कला रचना पद्धति और चिन्तन से अवगत हुए। जिसमें कला का अर्थ सृजन द्वारा स्वतंत्र भावों, संवेगों और विषयों को प्रकट करना तथा उनके अन्तर्निहित गुम्फित सत्य और सत्ता को सरल और स्वच्छंद रूप से कलाकार की निजी रचना से मुखातिब करना था। भारत लौटने पर शर्मा ने पाया की राजस्थान में कला का पारम्परिक स्वरूप लुप्त हो चुका था और आधुनिकतावादी स्वर तेजी से ध्वनित हो रहा था। किन्तु अस्पष्ट और विशृंखलित ढंग से, अनिश्चित और दिशाविहीन। यह तथ्य तत्कालीन भारतीय संदर्भ में भी दृष्टिगोचर होता है।

सातवें दशक से प्रारम्भ राजस्थान का आधुनिक कला आन्दोलन अपने उभयभावी स्वरूप में था। अतः कला के विद्रोही तेवर कई धाराओं में प्रकट हुए और सौंदर्य के नए विकल्पों का प्रादुर्भाव हुआ। सुरेश शर्मा ने प्रचलित अकादमिक कला

शिक्षा द्वारा अवरुद्ध मार्ग पुनः मुक्त कर दिये। उन्होंने प्रकृति मृतप्रायः पारम्परिक और तथाकथित आधुनिक कला के नाम पर किये जा रहे प्रयोगों की जगह सुस्पष्ट दिशा में वैयक्तिक अभिव्यक्ति और विशुद्ध कलावादी दर्शन को महत्त्व दिया। शर्मा ने अपने कला सृजन द्वारा भारतीय परिदृश्य में राजस्थान की कला का महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया। उनकी कला की पृष्ठभूमि में जहाँ राजस्थानी कला परम्परा और भारतीय आधुनिकता के आधार है वहीं उसमें युद्धेत्तर विश्वकला का पूर्ण प्रभाव भी है, अपनी व्यक्तिक पहचान के लिए सदैव संघर्षरत सुरेश शर्मा राजस्थान में आधुनिक कला के कलाकारों में अमूर्तवादी चित्रकार व प्रयोगवादी कलाकारों की पंक्ति में अग्रणी है। सुरेश शर्मा की कला गागर में सागर के समान है अपने मनतव्यों की स्पष्ट अभिव्यक्ति हेतु उन्होंने निजी कला भाषा और तकनीक को इजाद किया तथा कला के गौरव धन्धे से दूर सूफी दृष्टि के सात्मिक सर्जक है। उनका चित्र रचने का अपना ढंग है, वे कैनवास के फलक को कई परतों में तैयार करते हैं और सौष्ठवपूर्ण फलक तैयार हो जाने पर बिना किसी प्राथमिक रेखांकन और डिजाइन के वे फलक को विकसित करते हैं धीरे–धीरे एक के बाद एक भीतरी परतों को तैयार करते हैं। तत्पश्चात रंगों के भीतर से रंग झांकने लगते हैं। रंग की आँच और उसका चरित्र शर्मा के लिए महत्त्वपूर्ण विषय है, इसलिए उन्हें रंग–रसायन शास्त्री (Colour Chemist) भी कहा गया है। उनकी चित्र संरचनाएँ विस्तृत और सपाट होती है और बिना किसी जटिल योजना के वे चित्र फलक को मोटी और पतली खड़ी व आड़ी पट्टियों से विभाजित करते हैं। उनके चित्रों में आयत या वर्ग भी उनकी सपाट पृष्ठभूमि में देखे जा सकते है।[1]

श्री शर्मा का कथन है कि कलाकार जो कुछ चित्रित करता है, उसमें उसका जीवन दर्शन प्रतिक्रियाएँ प्रभाव, अनुभव आदि समाहित होते हैं। इस प्रकार व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति ही कलाभिव्यक्ति है। कलाकार भौतिक रूप का नहीं वरन् विचारों का संवाहक होता है, तथा अपनी कलासृष्टि द्वारा वह समाज को विचार ही देता है।

“सुरेश शर्मा के चित्रों में समीक्षात्मक व विश्लेषणात्मक निम्न बिन्दु उल्लेखित है, ये बिन्दु शर्मा की कला में संभावित रूप से विद्यमान है।”

(1) गणितीय गोल्डन सर्कल का प्रभाव –

चित्र संख्या – 28 अन्टाइटिल्ड

शर्मा के चित्र ज्यामितीय संरचना के द्योतक है अर्थात् शर्मा गणितीय गोल्डन सर्कल के नियमों की पालना करते हैं, जहाँ एकता व रोचकता दोनों ही तत्व समान्वित हो। स्वर्णिम विभाजन सिद्धान्त के माध्यम से कला रचना को इस प्रकार विभाजित कर शर्मा उसमें मधुर सम्बन्ध व एकता स्थापित करते हैं। अर्थात चित्रभूमि को अनेक ज्यामितीयकाल खण्डों में विभक्त कर रंग व पोत के माध्यम से संयोजित करने का साहस शर्मा ने किया, उनकी इस चित्राकाश की समालोचना भी हुई परन्तु उन्होंने इसकी बिल्कुल परवाह न तो की और न ही उससे क्षुब्ध होकर परित्याग किया। बल्कि यह बिन्दु ही उनकी कला में तुरुप का इक्का साबित हुआ और इस हेतु उनकी पहचान भी करवाई, जिसके लिए उन्हें जाना जाता है। जिनके द्वारा वे ज्यामिती और सौन्दर्य के परस्पर सम्बन्धों को खोजते हैं अन्तराल विभाजन की पद्धति को सबसे श्रेष्ठ विभाजन माना गया है।

(2) कला आनन्द के लिए –

सुरेश शर्मा राजस्थान के अन्य अर्मूत चित्रकारों की तुलना में पूर्णतया आकृति निरपेक्ष कलाकार है, उन्होंने आभासी आदि भौतिक ज्यामिती का अन्वेषण किया है,

'कला कलाकार के लिए और कला आनन्द के लिए है' विचार के पक्षधर है, उनका मानना है कि चित्रों का आनन्द साधारण समाज नहीं ले पाता परन्तु कलाकार इससे बहुत आनन्द पाता है और आनन्दमय हो जाता है, लोग शिकायत करते हैं कि उनके चित्र समझ नहीं आते, उस पर वो चुप ही रहते हैं और इसकी चिन्ता नहीं करते कि उनके चित्र लोगों को पसन्द आये या नहीं। ऐसी स्थिति में लोग कला–कलाकार के लिए ही है ऐसा समझने लगते हैं, इससे शर्मा संतुष्ट भी है उनके अनुसार उनकी कला व किसी भी आधुनिक चित्रकार की कला उन्हें बेहद आनन्द प्रदान करती है, जिससे उनकी सोच साकार होती है।

शर्मा की कला में संस्कृति स्वातन्त्र्य और मौलिक अमूर्तन का सामंजस्य है। वे अपनी कल्पना शक्ति, संवेदनात्मक ऊर्जा से रंगों और फलक को विचार में परिवर्तित कर देते हैं। यह प्रयोग उनकी विशिष्ट कला उपलब्धि है। उन्होंने आरम्भ से ही चमत्कृत करने वाली रचनात्मकता से कला जगत में अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है। शर्मा की कला में वे सभी तथ्य विद्यमान है जो ऐतिहासिक परिस्थितियाँ प्रगतीगामी विचारधारा वैश्विक परिवेश और अवांगार्द स्वरूप को प्रकट करते हैं। इसलिए उनकी कला अर्थ की खोज है।[2]

(3) प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता का स्वरूप –

प्रकृति शर्मा के चित्रों में भारतीय परम्परा उद्दीपन के रूप में रही है, इसे चित्रकला की दृष्टि से पृष्ठभमि का अंकन कह सकते हैं। शुद्ध प्रकृति विन्यास का आभास शर्मा की कला में विद्यमान है भारतीय कलाकार जहाँ प्रकृति पर मानवीय भावनाओं का आरोप करता रहा है, वहीं शर्मा का प्रकृति के प्रति संवेदनशील रहना कला अभिव्यक्ति की विजय का अंकन है। आपने अपने चित्रों में प्रकृति की मनोहारी छटा को सूक्ष्म व अभिव्यंजनावादी स्वरूप में चित्रित करके आनन्द और उल्लास को व्यक्त किया है। कला के क्षेत्र शर्मा ने अपने जीवन का प्रकृति से एक भावात्मक सम्बन्ध स्थापित किया है, किन्तु शर्मा ने सही दिशा में विश्लेषणों का उपयोग करके प्रकृति के अंशकों अपने अमूर्त चित्रों में सूत्रबद्ध किया है, जो आपकी कला को स्थायी

आधार प्रदान करते हैं शर्मा के प्रकृतिमय चित्रों में प्रकाश का प्रयोग नवीनता के साथ चित्रित है उनमें एक विशेष प्रकार की आभा दिखाई देती है, एक चित्र में दो रंगों का समायोजन कर गहरे नीले रंग के पोत लगाकर अपने भावों को चित्रित किया। चित्रों में पत्तियों का आभास कराने के लिए गहरे नीले रंग के धब्बों का प्रयोग किया। इस प्रकार एक ही चित्र में प्रकाश व अन्धकार का विपरित प्रभाव दर्शाना शर्मा की अपनी मौलिक विशेषता रही है। तथा दांयी व बांयी और आकाश व पृथ्वी की क्षितिज रेखाओं के लिए मोटी रेखाओं व रंगों के अन्तर से यथा दर्शन का प्रभाव उत्पन्न किया। जिससे उनके चित्रों में दृष्टि दूर तक चली जाती है इस प्रकार शर्मा चित्रों में अनन्तता का आभास करवाते हैं व प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता का स्वरूप निहित करते हैं।[3]

(4) कला में अयथार्थ –

कोई भी चित्र कृति कविता के समान ही है, इस सिद्धान्त को व्यापक रूप में देखने पर शर्मा की चित्र कल्पना किसी सीमित सीमा में बँधी नहीं है। उनकी सोच सम्भव तथा यथार्थ को भी पार कर जाती है। शर्मा ने प्रतिमा तथा अनुकृति में भी भेद माना है। उन्होंने साक्षात वस्तुओं से प्रतिमा का कोई सम्बन्ध कुछ हद तक नहीं माना, बल्कि शर्मा ने ऐसी अयथार्थ वस्तुएँ भी अंकित की है। जिनका सृष्टि में कोई अस्तित्व नहीं है और राजस्थान का सम्पूर्ण कला जगत इसका प्रमाण है। शर्मा ने अयथार्थ आकृतियाँ कल्पित करने का भरपूर प्रयत्न किया है रहस्यात्मक साधनाओं तथा सूक्ष्म अनुभूतियों को प्रस्तुत करने की दृष्टि से भी अयथार्थ आकृतियाँ चित्रित की है। उनकी कल्पना की स्वच्छंद क्रीड़ा तथा मौज ने अचेतन की गहराईयों को अनुमानित ग्रन्थियों तथा अन्य मानसिक विकृतियों को मौलिक रूप में कल्पित किया है और इस प्रकार अयथार्थ कला का भण्डार समृद्ध किया है रूप शब्द के पीछे यथार्थ पर आधारित रूपों की परम्परा बनाने में मुग्ध रहे हैं। शर्मा ने रंगों व टेक्स्चरों के माध्यम से कलाकृति में बारीकी को दिखाना चाहा है। वास्तव में वस्तु से उनका साम्य बहुत कम हुआ। मूर्त–अमूर्त रूप का एक समन्वय उन्होंने टेराकोटा कला में भी दिखाने का प्रयास

किया था। शर्मा ने कला के बाह्य स्वरूप व आन्तरिक स्वरुप में आन्तरिक स्वरूप को जो प्राथमिकता दी उसे निरन्तर रेखाओं व रंगों से विभूषित करते रहे हैं।

(5) अलौकिक अनूभूति का अंकन –

इस मानवीय भौतिक एवं लौकिक जगत से परे एक अनन्त सर्वसत्ता विद्यमान है, जिसे कोई भी देख नहीं सकता वरन् हृदय से अनुभव कर सकते हैं, छू नहीं सकते बस कल्पना कर सकते हैं अर्थात् ऐसा जगत जो एन्द्रिय ज्ञान पर आधारित नहीं है। वरन् आत्मीय ज्ञान पर आधारित है, अन्तःकरण की अनुभूति यथार्थ न होने से जिसे कोई वस्तु नहीं माना जा सकता है इस प्रकार के अलौकिक जगत से हृदय को जो आनंद मिलता है जो अनुभूति होती है, वह अलौकिक अनुभूति है, जिसे इन्द्रिय ज्ञान से परे आत्मा की एक सहज विशुद्ध क्रिया कहा जा सकता है एक ऐसा जगत जो कि सामान्य दृष्टि से आगे एक चेतना का अनुभव है, वह चेतना जो कलाकार को गतिशील तो बनाती है परन्तु उसके अभाव में कलाकार के द्वारा अपनी कला के लिए इस भौतिक जगत में किये गये प्रयास निरर्थक सिद्ध होते है शर्मा का इस प्रकार का अनुभव गहरे चिन्तन का परिणाम है। शर्मा का अपना मौलिक योगदान रहा है, शर्मा की कल्पना प्रायः अदृश्य जगत में विचरण करती है, और उन्होंने अपनी कला में अलौकिक जगत के अमूर्त सौन्दर्य की अनुभूति को साकार रूप प्रदान किया। उन्होंने अपने चित्रों में अमूर्तता व अनन्तता को मुक्त रूप से बाँधकर सहज व श्रेष्ठ रचना को जन्म दिया और अदृश्य अनन्त को निराकार कला की परिणिती में बाँधा है।

(6) मनोवैज्ञानिक प्रभाव –

सुरेश शर्मा के कलाकृतियों का जो एक मानसिक प्रभाव दृष्टा के अक्षपटल पर पड़ता है, उससे दर्शक में एक असीम सुख का अनुराग पैदा होता है। चित्तवृत्ति में एक तरंग पैदा होती है। वैसे तो सभी रंग देखने वाले को एक आनंदमय सुख देते हैं परन्तु शर्मा क द्वारा रंगों को अत्यन्त पवित्रता के साथ शुद्धता से काम में लिया गया है। आपके मुख्य पसंदीदा रंगों में नारंगी, नीला, हल्का नीला, काला सलेटी, हरा, भूरा इत्यादि है। आपके द्वारा लिये गये नारंगी रंग से एक हल्की गर्मी का अहसास होता

है, जो बहुत उष्ण और तीक्ष्ण नहीं होती, परन्तु सहने लायक होती है। यह रंग शर्मा के चित्रों में बलवर्धन करता है, इससे जीवन तथा शक्ति संचार होता है। मध्यम श्रेणी का नारंगी रंग सांसारिकता की ओर घसीटता है, आपके द्वारा लगाये गये हरे रंग से शीतलता, स्फूर्ती तथा पुर्नजीवन की ज्योति जगाता है, बलवर्धक व नवशक्ति का संचार होता है, आपने हरे रंग को इस प्रकार विभूषित किया है, जिससे न तो मन में घबराहट होती है और न ही सुस्ती आती है, यह रंग मन की चंचलता और बैचेनी को दूर करने में सहायता प्रदान करता है। इस रंग के द्वारा मन को स्वच्छ रखने में मदद मिलती है हर कलाकार का यह रंग पसंदीदा रंग होता ही है। आपके चित्रों में नीला रंग मन को पारलौकिकता की ओर ले जाता है। यह भी स्वच्छता व शीतलता का द्योतक है, यह रंग शर्मा की कला को चुम्बकीय प्रभाव देता है, जिससे दृष्टा चित्रों की ओर खींचता है और उसमें खो जाता है, क्योंकि यह मन के अन्धकार को दूर करता है शान्ति अहिंसा कल्पना तथा गूढ़ तत्त्वों के निर्देशन की गवेषणात्मक शक्ति प्रदान करता है, यह रंग दर्शक व कलाकार को एकाग्रता, विचारशीलता अभिनव कल्पना व मौलिक रचना की ओर प्रेरित करता है तथा हल्के नीले रंग का प्रभाव इसके विपरित प्रभाव डालता है। सैंकड़ों प्रकार के पोत एवं रंगों की तान भी शर्मा के चित्रों में रंगों के समानान्तर मानसिक प्रभाव छोड़ते हैं। यह पोत शर्मा के चित्रों में विवेक की प्रवृत्ति,

चित्र संख्या – 29 अन्टाइटिल्ड कागज पर स्याही चित्रण

रहस्योद्‌घाटन स्पर्श ज्ञान करवाते हैं। शर्मा ने चित्रों में मनोवैज्ञानिक प्रभाव छोड़ने के लिए पोतों को कई प्रकार से सृजित किया है। शर्मा के चित्रों में मनोवैज्ञानिक अध्ययन और प्रयोग से उनका मनोभावात्मक प्रभाव दर्शाया है। उन्होंने रंगों का इस्तेमाल विवेकपूर्वक किया है और अपने भावों को जोरदार तरीके से प्रभावशील बनाया है रंगों के इस मनोवैज्ञानिक प्रभाव से उनकी कृतियाँ सदैव स्मरणीय व रोचक रहेगी।[4]

(7) पोत का समावेश –

चित्र संख्या – 30 अन्टाइटिल्ड

पोत का चित्रकला के तत्त्वों–रेखा, रूप, रंग आदि के समान ही महत्त्वपूर्ण स्थान है, आधुनिक कलाकार कला रचना में पोत का सृजनात्मक प्रयोग अधिकाधिक करने लगा है प्राचीन समय की कलाओं में समतल सतहें अच्छी मानी जाती थी परन्तु आज की स्थिति भिन्न है। कलाओं में विभिन्न प्रकार के पोत का प्रयोग किया जाने लगा है, जिससे कलाकृति में रूचि उत्पन्न होती है विभिन्नता लाने के लिए, चाक्षुक प्रभाव उत्पन्न करने के लिए चित्रों में कई प्रकार के अलग–अलग पोतों का प्रयोग किया जा रहा है। आधुनिक कलाकार पोत के महत्त्व को जिस प्रकार समझ रहे है उन्होंने अपनी रचनाओं को और अधिक सौन्दर्यात्मक गुण प्रदान करने के लिए पोत की विविधताओं को अपनाया है और इसी का अनुसरण चित्रकार सुरेश शर्मा वर्षों से करते आये हैं आपके चित्रों में पोत ऑक्सीजन का कार्य करते हैं। बिना पोत के शर्मा के चित्र शायद नीरसता उत्पन्न करने लगेंगे। इसलिए शर्मा ने विभिन्न प्रकार के पोत अपने चित्रों में लगाये जिनकों देखकर देखने वाले चकित हो जाए और सोचने पर मजबूर हो जाए की, ये पोत कैसे इजात किये होंगे और यही पोत आपकी कला को ऊँचाइयाँ व उत्कृष्टता प्रदान करते हैं और ज्यों–ज्यों शर्मा की कला प्रवीणता में

इजाफा हुआ व है वैसे–वैसे शर्मा के पोत भी परिपक्व होते गये। इसलिए शर्मा को पोत की तकनीक के मामले में राजस्थान की आधुनिक कला में कोई कलाकार चुनौती नहीं दे पाया। शर्मा ने उनके चित्रों में पोत अनुभूति को व्यक्त करने के लिए विभिन्न स्पर्श–संवेदना सूचक शब्दों को प्रयुक्त किया है तथा उन पोतों का अपने चित्रों में प्रयोग भी किया है जैसे– खुरदरा पोत, चिकना पोत, सघन पोत उलझन युक्त पोत, फूल–पत्ती का आभासयुक्त पोत इत्यादि। यह सभी पोत स्पर्श संवेदना को तुरन्त जन्म देते हैं तथा चित्र में रंगों की एकरसता को भंगकर उसे अधिक रोचक बनाते हैं।

(8) बौद्धिक उत्तेजना –

कलाविद् सुरेश शर्मा के चित्र बौद्धिक उत्तेजना भी पैदा करते हैं और धीरे–धीरे दर्शक को ध्यानरस्त मुद्रा में तल्लीन करते हैं अर्थात शर्मा की कला दर्शक को मंत्र मुग्ध करके उसकी प्रज्ञा को जगाने की चेष्टा करती है, जिससे दृष्टा के भीतर उथल–पुथल मच जाती हैं और उनके चित्रों में निहित सार तत्त्वों को व्यक्त करके तृजनात्मकता तथा मानवीय स्पंदन को जड़ और चेतन में तिरोहित कर देता है। आधुनिक वीक्षा शास्त्रियों ने बौद्धिक उत्तेजना को ऐसा गुण माना है जिसके द्वारा वैक्षिक अनुभव होता है और यह गुण शर्मा की अमूर्त कला में अन्तर्निष्ठ होता है। क्योंकि बुद्धि जब स्वतंत्र कल्पना में प्रवृत्त होती है तो यह सहज ज्ञान अथवा अनुमान के व्यापार में संलग्न होती है। बुद्धि कल्पना को प्रभावित करती है और कल्पना बुद्धि को और इनको मन की विचार शक्ति नियंत्रित करती है और इसी प्रकार शर्मा की कला से कलाकार व दर्शक के बौद्धिक तत्त्वों की कशमश शुरू हो जाती है।

(9) सार्थक संयोजन –

श्री शर्मा के चित्रों में अमूर्त कला रूपों का सार्थक संयोजन है, शैली की वैयक्तिक और रंग लालित्य उनके चित्रों की विशेषता है, उनकी कला का वैशिष्ट्य उनकी सृजनात्मक जिज्ञासा और सृजनात्मक समाधान में निहित है मूलतः सौन्दर्य बोध से अनुप्राणित आनन्द ही उनके सम्पूर्ण रचना संचार का आधार है शर्मा की कला लोकप्रिय मुहावरे, ट्रेण्डस और धारणाओं की जगह बौद्धिक दृष्टि से प्रेरित है वह

देशकाल और संस्कृति के विशेष बन्धनों से मुक्त है। चित्र रचनाओं में शर्मा स्पेश विभाजन द्वारा जीवन के रहस्यों की ओर संकेत कर निराकार अमूर्त आकृतियों का सार्थक कम्पोजिशन तैयार करते हैं।

(10) मिश्रित माध्यम –

आज के युग में तकनीक ही शैली है उसी में नवीनता लाना कलाकार का मुख्य उद्देश्य बन गया है, इस नवीनता के लिए वह किसी एक माध्यम में बँधकर नहीं चलता वरन् अपनी इच्छानुसार विविध माध्यमों का प्रयोग करता है और यही चित्रकार सुरेश शर्मा ने किया उन्होंने भी इसी तरह के माध्यमों को बखूबी अपनाया है वो शुरु से ही राजस्थान में प्रयोगवादी छवि के संस्थापक रहे हैं, वो अपना कलाकृतियों में नवीन माध्यमों के साथ–साथ नयी–नयी प्रविधियों को आजमाते रहे हैं और नये सभी बाह्य बंधनों को त्याग कर उन्होंने एक ही चित्र में अनेक माध्यमों से अलग–अलग रंगों को जैसे–ऐक्रेलिक, तैलरंग, जलरंग, स्याही रंग, रंगीन पेन, पेस्टल रंग इत्यादि को प्रयुक्त किया। क्योंकि शर्मा के इस मिश्रित माध्यम का प्रभाव अन्यों से भिन्न एक नवीनता उत्पन्न करता है, जो उनकी प्रयोगवादी सोच को दर्शाती है, तैल रंगों को उन्होंने साधारण कैनवास पर प्रयोग किया तो उसका प्रभाव भिन्न प्रकार से नजर आया। इसी तरह उन्होंने अन्य माध्यमों को भी एक दूसरे के साथ प्रयोग कर मिश्रित माध्यमों की खोज जारी रखी। शर्मा ने मिश्रित माध्यम का प्रयोग पोत हेतु भी किया है इसी में उन्होंने ब्रोकन कलर पद्धति को भी काम में लिया है, इस माध्यम में उन्होंने तूलिका संघात किया है जिसमें उन्होंने तूलिका से रंग के धब्बों को पास–पास लगाकर चाक्षुक मिश्रण किया है भावों और संवेगों की प्रमुखता के कारण उन्होंने कलात्मक प्रयोगों को निरन्तर अग्रसर किया है जिसके अर्न्तगत कहीं कोमल तूलिका संघातों, कहीं गाढ़े रंगों को स्पैटुला से लगाकर, कहीं रंगों को सपाट छोड़कर तथा रंगों द्वारा किये गए प्रत्येक प्रयोग की एप्रोच में अन्तर रखा है वास्तव में शर्मा ने खींची हुई लकीर पर चलने की अपेक्षा एक नयी लकीर खींचने की चेष्टा की और वो भी अलग ढंग से अलग रंगों से और शायद एक कलाकार का समय के साथ यही उद्देश्य होना भी चाहिए।[5]

(11) शर्मा के चित्रों की रूप भाषा –

श्री शर्मा से ज्यादा इसे और कौन नापसंद करता की उनके चित्रों और रेखांकन के शिल्प की एक शाब्दिक व्याख्या की जाए। शब्दों में न व्यक्त हो पाने वाले मनोवेगों और अनुभूतियों के ये चित्र उनके कृतित्व की अभिव्यक्ति के माध्यम थे। इतना ही नहीं, वे स्वच्छन्दता और फुरसत के उद्‌गार थे। न कोई परम्परा और न ही कोई उत्तरदायित्व उनके रूप रंग का निर्धारण करता है सब के सब रंगचित्र एक ऐसे हाथ के कार्य है, जिन्होंने कलागत अनुशासन से सर्वथा सम्बन्ध रखा। उनकी कला रूप भाषा में निर्मल जल की भाँति शुद्धता थी। राजस्थानी लघु चित्रकला के गढ़ में होते हुए भी उनकी अमूर्त दृष्टि के समक्ष अतीत के रचना संसारों से बटोरी व जोड़ी गई सारहीन कला शर्मा के रूप चित्रों की रूप भाषा थी। पर इन कलाकृतियों की बात दूसरी है जो अज्ञात होते हुए भी शर्मा से अलौकिक रूप से सम्बन्धित है। इन कलाकृतियों के प्रति उन्होंने किसी तरह की आलोचना का भाव नहीं अपनाया और उन्हें अपने विकास की स्वच्छंदता में हस्तक्षेप करने की छूट दी। अपने उन अनुभवों को अभिव्यक्ति देने की आवश्यकता अनुभव करते हुए मुक्त प्रवाही रूप भाषा को प्रयुक्त में लेते हैं। उनके चित्रों में सिद्धहस्त कृतियों की परिपूर्णता उनके चित्रों की विशेषता का अंग है, यह प्रभाव स्वयं चित्रों की रूपभाषा में ही एक प्रकार की कारूणिकता उत्पन्न करता है। अपने काम की समस्त माँगे पूरी कर जब शर्मा कार्य की तन्मयता से बाहर आते हैं तो कार्य की प्रासंगिकता पर निश्चय ही सोचते हैं। इसके कारण स्वरूप मनोवेगों की अनिवार्यता ने उनके हाथों की शक्ति सीमाओं पर अधिकार कर लिया है, इसके चलते शर्मा रचना प्रक्रिया की लय और तर्कसंगति के अनुकूल काम करने को निरन्तर मग्न रहते हैं इस पूरी प्रक्रिया में वह दिशानिर्देशित होकर कार्य करते।

उन्होंने इस भीतरी निर्देशन को मानते हुए कार्य किया, मनोवेग को एक रूपाकार में बदला और एक कलाकृति का रूप दे दिया। इस प्रकार एक बार चित्र बन जाने पर शर्मा उसे चकित होकर देखते हैं रचना में अगर कोई पूर्णता का अभाव लगता तो उसे पूर्ण करने में फिर जुट जाते हैं।

यदि उपर्युक्त बातों को शर्मा की चाक्षुक रचना के बाह्य–प्रसंग मान लें तो भी रूप–भाषा इन प्रसंगों द्वारा अतिक्रमित और परिवद्धित होने के बावजूद उनकी खुद की है। शर्मा का सर्वाधिक प्रभावशाली और मौलिक काम रूपभाषा की दो इकाइयों रंग और पोत पर निर्भर है। उनके चित्रों में ये रंग भरे जाने के बाद एक ऐसे प्रदीप्त निकाय की सृष्टि करते हैं जो मानो अपनी तात्त्विकता के गहरेपन से उभरा हो, उनके समीपवर्ती रंग के कार्य में हल्के व गाढ़े ब्रुशघातों से ऐसा ही कुछ प्रभाव उत्पन्न होता है। गहराई व वातावरण की अर्थ आहटें देने वाले रंग व पोत शर्मा के चित्रों के प्रमुख उपादान है। गतिशील एवं निश्चित गहरी रंग–विस्तृति के संतुलन के तौर पर उन्होंने आकृति को आंतरिक अभिकल्पना के सूक्ष्म सुन्दर अंकन से अनुप्रमाणित किया है कई रंग चित्रों में पोत व पृष्ठ भूमि को एक ही तरह से निरुपित किया गया है और इस तरह से शर्मा की कला रूप भाषा का त्वरित पर क्रमिक विकास हुआ। इस विकास एवं आरोह के एक–एक चरण को मापा और स्थिर नहीं किया जा सकता है। यह सृजनात्मक ऊर्जा इतने तीव्र आवेगात्मक विस्फोट के साथ अवतरित हुई कि उसने स्वयं कलाविद् सुरेश शर्मा को चकित एवं स्तंभित कर दिया। कला रूपभाषा व कला साधना की यह अवधि उन्हें परमपिता से अतिरिक्त जीवन के रूप में प्राप्त हुई है इस काल में उन्होंने राजस्थान की आधुनिक कला को अनेकानेक अमूल्य निधियाँ प्रदान की। उनके जीवन की गत्यात्मक लय अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँच गई। इस अवधि में उन्होंने जो लगभग 6 दशक तक कला सृजन किया वो भारतीय आधुनिक कला के कला इतिहास में अतुलनीय है शर्मा के चित्रों की रूप भाषा व संरचना, सपुंजन संयोजन एवं साधनों की विविधता की दृष्टि से वे अपूर्व है।

(12) सूक्ष्म तंत्रवाद का प्रभाव –

शर्मा के कलाकर्म के विस्तार में तंत्र सम्बन्धी चित्रों की रचना का अंश भी दिखाई पड़ता है, उनके चित्र परम्परागत तंत्रकला का अन्धानुकरण नहीं है उन्होंने एक नई एक दृष्टि, नवीन रंग बोध एवं एक नवीन चित्र भाषा के साथ प्रस्तुत किया है उनके चित्रों में केन्द्र परिधि एवं शक्ति विषयक, आकार तथा तंत्र का दार्शनिक दृष्टिकोण

उपस्थित रहा है, वहीं संरचनाओं में ज्यामिती भी मौजूद है किन्तु रंग योजना को भावबोध से सम्पन्न बनाने का प्रयास किया है। शर्मा ने अपने स्वभाववश कला में नवीन प्रयोग हेतु चित्रक्रम किया उन चित्रों में तंत्र जैसे भाव नजर आने से आपके चित्रों को तांत्रिक सम्बन्ध सृजन की संज्ञा दी गई। शर्मा की कलादृष्टि उन सारभूत अनुभूतियों, अनुभवों, भावों और संवेगों को दर्शाने में प्रयुक्त हुई जो बाह्य रूप से किसी आकार में दिखाई नहीं देती। उनकी अनाकृति मूलक कृतियाँ निर्वेयक्तिक है जो उनका रोमांचक अरुपण आत्मपरक भावनाओं से घिरा हुआ है।

विद्या वैविध्य के समुच्य श्री सुरेश शर्मा ने राजस्थान की आधुनिक कला को राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित करने तथा कला की नवीन धाराओं से राज्य के नवोदित कलाकारों को परिचित करवाने में अपने चित्रकर्म से महत्त्वपूर्ण कार्य किया। राजस्थान में वे एक प्रयोगवादी कलाकार, अमूर्तवादी कलाकार, शिल्पकार, ग्राफिक कलाकार व लोकवादी कलाकार के रूप में विख्यात हुए हैं। स्वच्छंद प्रकृति के कारण आपने जीवन भर कला के माध्यम से प्रकृति की देवतुल्य आराधना की।

♦♦♦♦♦

सन्दर्भ -

1. एल.एल. वर्मा – सुरेश शर्मा रा.ल.क.अ., जयपुर
2. ए.एल. दमामी : राजस्थान की आधुनिक कला एवं कलाविद्, पृ.सं.–80–83
3. रीता प्रताप–भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, पृ.सं.–431–432
4. अशोक–कला सौंदर्य और समीक्षा शास्त्र, पृ.सं.–19–20
5. A . L. Damami : Suresh Sharma-A Renascent Page No.- 87-89

उपसंहार

भारतीय कला के क्षैत्र में योगदान

युग युगीन राजस्थान अपनी गौरवमयी परम्पराओं के कारण सुविख्यात रहा है। यहाँ की संस्कृति में इसके जीवन का वह स्वरूप है, जिसमें निष्ठा और विश्वास की परम्परा, आचरण, व्यवहार, रहन–सहन, रीति–रिवाज, खान–पान और आमोद–प्रमोद का समवेत प्रतिबिम्ब है इसकी सांस्कृतिक धारा में ऐसा प्रवाह है जो मोड़ पाकर पुनः निर्मित होकर, नवीनता से हाथ मिलाकर चलने के उपरान्त भी अपनी प्रमुख धारा में पुरातन है। राजस्थान के इस सांस्कृतिक वैभव को यहाँ की परम्परा के प्रति गहन निष्ठा और मोह रखने वाले चित्रकारों में अत्यन्त मनोवेग और कला के स्थूल सत्य को चित्रांकित किया है।

राजस्थान की कला परम्परा को निरन्तरता प्रदान करने में यहाँ के समसामयिक कलाकारों ने अपनी अहम् भूमिका निभायी है। पुरा और नवीन संस्कृति के सुमेल से नवचेतना जागृत हुई कला का यह विकास दो संस्कृतियों के सम्पर्क को आत्मसात करता हुआ प्रस्तुत हो रहा है। राजस्थान की पूर्व कला शैलियों के साथ कला के नवीन तथ्यों स्वातंत्र्योत्तर नव प्रयोगों और संयोजन की विशिष्टता और आधुनिकता का सामन्जस्य उत्पन्न करके आधुनिक कलाकारों ने अपनी कलाकृतियों को समसामयिक चित्रण–शैली के रूप में प्रतिष्ठापित किया है ऐसे चित्रकारों में श्री सुरेश शर्मा अग्रणी है।

प्रत्येक कलात्मक सृजन अमूर्त निराकार को मूर्त साकार स्वरूप प्रदान करने की प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया के सम्पन्न होने के क्रम में जब कलाकार अपने दहराकाश में प्रवेश करता है तब उसकी चेतना का सम्पर्क अतिचेतन ब्रह्मा से होता है, और तब एक स्फूर्लिंग उत्पन्न होता है। वह स्फूर्लिंग का जो स्वरूप–आकार कलाकार की

चेतना में बनता है, वहीं कलाकृति के रूप में ढलकर मूर्त रूप ग्रहण करता है। इसलिए कला साधना को व्यक्ति की स्वाधीनता, विशुद्धता और अनन्तपूर्णता की खोज स्वीकारा गया है। आधुनिक कला आन्दोलन की सम्पूर्ण पृष्ठभूमि में राजस्थान के चित्रकारों के योगदान की चर्चा की जाये तो यह कहा जा सकता है, कि विश्व युद्ध के बाद परिवर्तन की जो लहर पैदा हुई, उसके साथ–साथ भले–ही आधुनिक चित्रकला की यात्रा राजस्थान में प्रारम्भ नहीं हुई हो, परन्तु स्वतंत्रता के बाद भारतीय चित्रकला की गरमाहट यहाँ भी उत्पन्न हुई।

भारतीय कला के पुनःरुत्थान युग में प्रयोगधर्मिता व विदेशी प्रभाव 1960 के उत्तरार्द्ध व 1970 के दशक में सघन रूप से व्यापक फलक पर देखा गया है। बुनियादी कला रूपों की नवीन अभिव्यक्ति हेतु राजस्थान के चित्रकार भी प्रयोगधर्मी आन्दोलनों से अछूते नहीं रहे। यहाँ के प्रयोग सिर्फ सहयोग और सामंजस्य तक सीमित नहीं रहे वरन् यहाँ कलाकार निजी शैली की तलाश में अनवरत अन्वेषणरत रहे हैं। राजस्थान में बौद्धिक सम्पदा का कभी अभाव नहीं रहा। दर्शन–चिन्तन, कला, संगीत की अनूठी आन–बान वाला यह प्रान्त जीवन को अपनी समग्रता में देखने, समझने और रचने में सतत् सृजनशील रहा है अमूर्तन कला की एक लम्बी परम्परा रही है और विभिन्न शैलियों में अमूर्तन भली–भाँति देखा जा सकता है राजस्थान में इस सदी के सांतवें दशक के उत्तरार्द्ध से ज्यामितिक अमूर्तन का प्रादुर्भाव हुआ। राजस्थान का चित्रकार प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष कला संस्थानों में शिक्षण–प्रशिक्षण, नुमाइशों में भागीदारी, वैचारिक आदान–प्रदान तथा जानकारी के विविध माध्यमों के कारण राजस्थान के अमूर्त चित्रण का फलक विस्तार पाने लगा। प्रमुख रूप से जिन कलाकारों ने अमूर्तन को ही अपनी कला अभिव्यक्ति की शैली बनाया इनमें पी. मंसाराम, श्री सुरेश शर्मा, ज्योती स्वरुप मोहन शर्मा, लक्ष्मीलाल वर्मा, राधावल्लभ गौत्तम, दिलीप सिंह चौहान, प्रेमचंद गोस्वामी, शब्बीर हशन काज़ी, ए.एल. दमामी, भवानी शंकर शर्मा, विद्यासागर उपाध्याय इत्यादि रहे हैं। जिनकी कला राष्ट्रीय

अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर पहचान बनी। राजस्थान में अमूर्तन प्रयोग का आरम्भ ज्यामितिक चित्रण से होता है। अधिकांश चित्रकार ज्यामितिक विभाजन–रेखाओं, कोणों द्वारा और आकृतियों को मोटे रूप में अलग–अलग तरीकों से निरूपित किया गया। राज्य के उन कलाकारों में जिनका नाम श्रद्धा से लिया जाता है उसमें श्री सुरेश शर्मा का अपना विशिष्ट स्थान है।

कलाविद् सुरेश शर्मा की गणना भारत के अग्रणी आधुनिक एवं रचनात्मक चित्रकार के रूप में है। शर्मा ने तत्कालीन कला के नियमों परम्परागत कला शैलियों से पृथक अपना मौलिक एवं नवीन सृजन कार्य किया। उन्होंने अपनी कलाकृतियों में किसी प्रकार के औपचारिक कला नियमों से नितांत असम्पृक्त कार्य नहीं किया। बल्कि नवीनता से मौलिक इन्द्रिय ज्ञान से परे उत्कृष्टता उत्पन्न करने का भरसक प्रयत्न किया है वस्तु के यथार्थ रूप से पृथक होकर उसके आन्तरिक रूपगुण की ओर आकृष्ट हुए और अपनी निजता का परिभाषित का आधुनिक युग में एक अटूट कड़ी बने।

निजी ढंग से चित्रण करने का स्वातंत्र्य परम्परा आधुनिकता की रूपजन्य अनुभूति का समुचित व इतना परिणामकारी सममिश्रण सुरेश शर्मा की कला के अलावा राजस्थान के और कलाकारों में देखने को कम ही मिलता है। अमूर्त आकारों के चित्रों की निर्मिति की ओर ध्यान लगाकार अपने व्यक्तित्व व रूची के अनुकूल परिस्थिति व विचारों की सूक्ष्म अभिव्यक्ति की गुंजाइश अपने मनोभावों के माध्यम से उजागर की। राजस्थान ही नहीं बल्कि पूरे भारतवर्ष में अल्पसंख्यक कलाकारों के बीच अमूर्तता को अपनाया और इस क्रान्ति के आदर्श परिणामों के प्रति विचारों को निर्धारित किया।

अतीत से वर्तमान तक का एक लम्बा इतिहास आपकी समानान्तरता का साक्षी रहा है, विचारों की अभिवृद्धि के साथ–साथ सृजनात्मक अभिव्यक्ति के माध्यमों की खोज व विकास निरन्तर करते रहे। और विश्वव्यापी कला प्रतिभा के

कारण ही अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर कला का अभिन्न योगदान अतुलनीय रहा है। शर्मा की कलाभावनाओं के दो प्रमुख उद्देश्य रहे हैं, पहला–अतीत को जीवित बनाये और दूसरा काल्पनिक भावों को संरक्षण प्रदान करना। अमूर्त चित्रकला के प्रसार के साथ ही उसकी दुर्बोधता के आवरण को हटाकर उसके गूढ़ सौन्दर्य का रस ग्रहण करने की भारतीय कला प्रेमियों व कलाकारों की पिपासा शर्मा के कलाकर्म के मार्गदर्शन से मिलती है। कई कला प्रेमियों की धारणा है कि आधुनिक कलाकार केवल कला के लिए कला को ध्येय मानकर स्वान्त सुखायः चित्रण करता है व उसे सामाजिक परिस्थिति या मानव जीवन से सम्बन्धित विषयों से कोई लेना देना नहीं होता। किन्तु यह मत कितना भ्रांतिपूर्ण है यह शर्मा के कलाकर्म के अध्ययन से सिद्ध होगा। वे मानते हैं कि जीवन के अंग प्रत्यंग में विशुद्ध सौन्दर्य का अर्न्तभाव होने से कला का स्वतंत्र रूप से अस्तित्व रहेगा व जीवन स्वयंमेव सुन्दर व कलापूर्ण बनेगा। क्योंकि आनन्दमय और सृजनकारी कोश के अभाव में किसी भी कला कुसुम में माधुर्य उत्पन्न नहीं हो सकता। शर्मा का चित्रजगत अनायास ही बिना किसी प्रयत्न व सोच विचार के रचित नहीं हुआ बल्कि अपने कार्य में इतने डूबे हुए रहे कि उनका चित्र जगत भी उनकी सृजनात्मक व कल्पनात्मक छवि से अछूता न रह सका। शर्मा ने अपने चिन्तन को व्यक्त करने का प्रयत्न तो किया ही है, बल्कि यह उनका स्वभाव भी था।

समसामयिक भारतीय आधुनिक चित्रकला के सृजन में जिन चित्रकारों ने इस आधुनिकता का वरण किया है उन्होंने इसे आकारों के विकृतिकरण में, तकनीकी माध्यमों के प्रयोगों में सायास ही ग्रहण किया है और वह मन की संवेदनाओं के साथ एकाकार हुए। वास्तव में प्रकृति स्वयं तो ईश्वर की कृति है लेकिन चित्रकार द्वारा नवसृजन से प्रकृति एक कृति बन जाती है।

शर्मा की कला यात्रा को प्रारम्भ से ही प्रोत्साहन मिलता आया है। राजस्थान के अधिकांश कलाकार जहाँ अपनी सफलता का शोर मचाते हैं वहीं शर्मा ने हमेशा इस प्रवृत्ति को अपने पास से दूर ही रखा जो भी कार्य किया वो उनकी योग्यता के

साथ खूब फैला और राजस्थान के कलाकारों को इसका एक फायदा यह हुआ कि आपकी उपस्थिति में उदयपुर में टखमण-28 नाम का एक ग्रुप व मंच तैयार किया जहाँ कलाकारों को अपना हुनर तराशने का मौका मिला। आज भारत के विभिन्न कला संस्थानों, कला संगठ्नों, टखमण-28 अपना एक अस्तित्व रखता है यहीं से कई कलाकार निकले जो भारतवर्ष में अपनी आजीविका के लिए कार्यरत हैं इन सब के पीछे शर्मा का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

वहीं शर्मा को छापा कला में भी महारत हासिल है इसके लिए भी शर्मा ने देश के युवा चित्रकारों के लिए राज्य के कई हिस्सों कलामहाविद्यालयों व कलादीर्घाओं में छापाकला की कार्यशालाएँ संचालित कर छापाकला की बारिकियाँ छात्रों को बताई। शर्मा की कला के दो मुख्य पहलू हैं- कला की भावनाएँ व दूसरी उन भावनाओं को जानकारों व जिज्ञासु लोगों के बीच बिखेरना। इन्हीं मान्यताओं के साथ वे उनका लक्ष्य आत्मज्ञान को प्रचारित करना है। शर्मा का योगदान कला जगत में कलाशिक्षक, चित्रकार व कलावेत्ता के रूप में महत्त्वपूर्ण रहा है। वे केन्द्रिय ललित कला अकादमी, राजस्थान ललित कला अकादमी इत्यादि के भी सदस्य रहे हैं और सदस्य रहते हुए कला के क्षैत्र में नये-नये दायित्वों का निर्वहन किया। आपके योगदान को मध्यनजर रखते हुए आपको कला क्षैत्र में विभिन्न पुरस्कारों से नवाज़ा गया जिनमें राजस्थान ललित कला अकादमी द्वारा कलाविद् की उपाधि विशेष है।

समय-समय पर आपने कला के माध्यम, शैलियों, तत्त्वों व धारा प्रवाह नामकरण का परिचय युवा पीढ़ी के समक्ष रखा। एक ओर जैसे-जैसे कला सृजन होता रहा वैसे-वैसे-कलानिधि की विशेषताओं का उद्बोध भी आप करते रहे। आपके अनुसार, कलासृजक, कलारसिकों व कला समीक्षकों को नूतनता के प्रति आस्था रखने वालों के वर्ग में होना चाहिए अन्यथा स्वतंत्र विचारों की कला का मार्ग अवरुद्ध हो जायेगा। क्योंकि कला का मर्म समझने व कला सृजन के साथ-साथ उसकी धारा

को प्रवाहित करने में कलाकार का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। इस प्रकार के विचार रखते हुए शर्मा ने अपनी कला का उद्देश्य और साध्य जन–जन तक सम्प्रेषण द्वारा सुदृढ़ बनाया।

शर्मा चाहते हैं कि राजस्थान ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण भारत के कलाकारों को कला की उचित शिक्षा व समझ का लाभ प्राप्त हो। किसी भी देश की कला और कलाकार तभी मजबूत और विकसित बन सकते हैं जब विभिन्न कलाओं के प्रति कलाकारों और कलारसिकों में सोहार्द कायम हो। तथा वफादारी व ईमानदारी से कलाकृतियों को तैयार कर उत्कृष्टता प्रदान करें। शर्मा कला की ताकत और नैतिकता में विश्वास रखते हैं तथा निराकार का भी कोई आकार तो है इस तरह के विचारों को शर्मा जी अपने जीवन में उतारते हुए कलाकर्म करते रहते हैं।

उनके इस निराकार के पीछे कुछ यात्राएँ ग्राफिक और ऐक्रेलिक की बनाई कृतियाँ भी मुखर हुई है। अपनी सारी रचना प्रक्रिया में अस्तित्ववादी विचारकों की तरह ही वह भी एकरसता से बचते रहे हैं।

इस शोध प्रबन्ध के आरम्भ में विषय प्रवेश के अर्न्तगत भारतीय चित्र परम्परा के विकास क्रम में राजस्थान में अमूर्तवाद की व्याख्या की गई है। जिसमें राजस्थान के अमूर्तवादी कलाकारों के कार्य को व्याख्यायित करते हुए भारतीय कला के क्षैत्र में श्री सुरेश शर्मा जी के कार्य पर प्रकाश डाला गया है।

प्रथम अध्याय के अर्न्तगत भारतीय आधुनिक कला एवं राजस्थान से सम्बन्धित कला कर्म को परिभाषित किया व राजस्थान की समसामयिक कला धारा में अमूर्तवाद पर शोध कार्य को सींचा गया है।

द्वितीय अध्याय में मैंने श्री शर्मा के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के सम्बन्ध को ध्यान में रखते हुए जीवन परिचय दिया है। जिसमें शर्मा के सादगीपूर्ण जीवन, स्पष्टवादिता,

सहृदयविनयशीलता समय की पाबन्दी, सकारात्मक दृष्टिकोण, दार्शनिक दृष्टिकोण मिट्टी से जुड़ाव, भावुकता एवं संकल्पशीलता, आध्यात्मिक एवं धार्मिक प्रवृति, कला संरक्षक इत्यादि को बताने का प्रयास किया है तथा कृतित्व में आपके चित्रों से निश्चल सौन्दर्य की अनुभूति होती है।

शर्मा का जीवन परिचय बहुमुखी प्रतिभा के रस से भरा हुआ है जिसके मधुर स्वाद ने समस्त कला प्रेमियों को अपनी मिठास से ओत-प्रोत कर दिया। शर्मा की शिक्षा कोटा व कोटा ग्रामीण क्षैत्र में हुई तथा कला की उच्च शिक्षा शान्ति निकेतन व विदेश में प्राप्त कर अपने परिवार व गुरुओं का नाम रोशन किया। आपका चित्रण कार्य अत्यन्त तकनीकों भरा रहा है आप एक प्रयोवादी कलाकार के रूप में प्रसिद्ध हुए तथा सृजन करने की प्रक्रिया, कला शिक्षण तथा चिन्तन ने उनके व्यक्तित्व तथा सृजन की स्वतंत्र चेतना के विकास में महत्त्वपूर्ण प्रेरक बीज बोए। शर्मा अमूर्त कला के क्षैत्र में राजस्थान के अग्रणी कलाकार स्थापित हुए तथा कई उपलब्धियाँ जिसमें स्कॉलरशिप, फैलोशिप पुरस्कार, सम्मान, प्रदर्शनियाँ, कॉन्फ्रेन्स व सदस्यता इत्यादि शर्मा की प्रमुख उपलब्धियाँ रही है।

तृतीय अध्याय के अर्न्तगत शर्मा ने विविध क्षैत्रों में सृजनात्मक भूमिका निभायी। कला का कोई सा भी क्षैत्र हो उसमें शर्मा ने बड़ी तल्लीनता से कार्य किया और पूरी ईमानदारी के साथ अपने कार्य को मुकाम तक पहुँचाया। शर्मा का अलग-अलग क्षैत्रों में सृजनात्मक कार्य उच्च कोटी का होने के साथ ही उत्कृष्टता लिये हुए है। शर्मा ने भारतीय संदर्भ में सृजनात्मक प्रवृत्ति को एक सुनिश्चित परम्परा माना है, जिसका आधार सर्वव्यापी निष्ठा है। जिसमें शिक्षक एवं आचार्य के रूप में भूमिका महत्त्वपूर्ण रही। कला के क्षैत्र में दृष्टि जिसके पहलू में समसामयिक कला की सम्भावनाएँ खोजी है कला में सौन्दर्याभिव्यक्ति, कला में शिक्षा का स्थान, कला के प्रति श्रम, कला की उपयोगिता इत्यादि को परिभाषित किया। शर्मा साहित्य सृजन को मूर्त रूप नहीं दे

पाये अर्थात काव्य और कला के सामंजस्य की आनन्द धारा का उद्धेग, सत्यम्, शिवम् सुन्दरम् के रूप में साहित्य कला उजागर नहीं हो पाई। शर्मा की आधुनिक कला के प्रति दृष्टिकोण के अन्तर्गत अनुकृति और पुनः प्रस्तुति, कला की शुद्धता, प्रयोग धर्मिता कला का कम्प्यूटरीकरण इत्यादि पहलूओं को प्रमुख मानते हुए आधुनिक कला की महत्त्वपूर्ण कड़ी बताया है।

चतुर्थ अध्याय में श्री सुरेश शर्मा की कला व चित्रों का तकनिकी विवेचन लिया है। शर्मा को अलग–अलग माध्यमों व तकनीक से कार्य करना बहुत पसंद है शर्मा इन दिलचस्प माध्यमों व तकनीकों के कायल रहे हैं। जिसमें रंगों की मोटी परत व पतली परत लगाना, टैक्स्चर की अधिकता, रंगों के पतले वॉश इत्यादि प्रमुख रहे हैं। शर्मा के तकनिकी विवेचन को विषयात्मक, सृजनात्मक व रंग, रेखा पोत इत्यादि बिन्दुओं पर गौर करने की चेष्टा की और इन बिन्दुओं पर दृष्टि डालना आवश्यक भी था। इसी सन्दर्भ में कला शैलीगत मौलिकता व रूपों की संवेदनाएँ उन्हें भिन्न व उच्च पायदान पर खड़ा करती है।

पंचम अध्याय में कलाविद् सुरेश शर्मा जी की कला का समीक्षात्मक अध्ययन व विश्लेषण को लिया है जिसमें शर्मा की कला धरोहर के हर पहलू व बिन्दु पर प्रकाश डाला गया है अर्थात गहन समीक्षा द्वारा एक खोज पूर्ण दृष्टि के परिप्रेक्ष्य को स्थान दिया गया है।

जिसमें शर्मा के चित्रों में समीक्षात्मकता व विश्लेषणात्मकता को विभिन्न बिन्दुओं द्वारा बताया गया है जिसमें गणितीय गोल्डन सर्कल का प्रभाव, कला आनन्द के लिए प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता का स्वरुप, कला में अयथार्थता, अलौकिक अनुभूति का अंकन, मनोवैज्ञानिक प्रभाव, विभिन्न पोतों को समावेश, बौद्धिक उत्तेजना, सार्थक संयोजन, मिश्रित माध्यम, चित्रों की रूप भाषा, सूक्ष्म

तंत्रवाद का प्रभाव इन तथ्यों पर शर्मा के कला कर्म की समीक्षा व विश्लेषण किया गया है तत्पश्चात उपसंहार व चित्र सूची इत्यादि को संयोजित करने का प्रयास किया।

शर्मा के सम्पूर्ण कला कर्म के अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि शर्मा के कार्य में समय के बदलते स्वरूप के साथ नवीनता आती गयी जिसके कारण शर्मा की कला बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय है। शर्मा ने देशकाल में समसामयिक चित्रण व निराकार आकृति की प्राण प्रतिष्ठा की तथा मनोवृत्तियों के चित्रण में देश व काल की सीमाओं का अतिक्रमण न करते हुए युगजीवन के सत्य का उद्घाटन किया जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण शर्मा की विपुल कलाकृतियाँ है। भारतीय कला के क्षैत्र में श्री शर्मा का अतुलनीय योगदान साबित हुआ है।

आधुनिक कला आज बहुसंख्य लोगों के लिए नयी तरह की कला का अर्थ दुरूह होता जा रहा है। यह वास्तव में संप्रेषण की एक आम समस्या है जो कलाकार और दर्शकों के बीच पैदा हो गयी है कलाकार और आम आदमी के परिप्रेक्ष्य बिल्कुल अलग हो गए है जबकि संप्रेषण की संभावना के लिए एक उभयनिष्ठ समुदाय का होना जरुरी है, खासकर चेतना के स्तर पर जिसमें कलाकार और आम आदमी के बीच एक हद तक भावों की समरसता स्थापित हो। शर्मा उन बहुत थोड़े चित्रकारों में से एक है जिनकी पहचान इसी माध्यम पर निर्भर करती है। समकालीन भारतीय आधुनिक कला पर सरसरी नजर फैलाते सुरेश शर्मा का अफसोस रचनाकार की स्वतंत्रता में कमी या अधिकता पर नहीं है बल्कि उसे अनुभव करने व पोषित करने की कमी पर है। उन्हें उस अद्धितीयता की खोज पर दुःख होता है जिसे पाने के लिए रचनाकार व्याकुल व पीड़ित नज़र आते हैं। हर कोई चित्रभाषा को एक बारगी तो तोड़ मोड़कर नये सिरे से नया पाना चाहता है और इसकी गिरफ्त में जड़ से उखड़ जाता है। शर्मा ने प्रचलित अकादमिक कला शिक्षा द्वारा अवरुद्ध मार्ग मुक्त कर दिये।

उन्होंने प्रचलित मृतपायः पारम्परिक और तथा कथित आधुनिक कला के नाम पर किए जा रहे प्रयोगों की जगह सुस्पष्ट दिशा में वैयक्तिक अभिव्यक्ति और विशुद्ध कलावादी दर्शन को महत्त्व दिया। शर्मा ने अपने कला सृजन द्वारा भारतीय परिदृश्य में राजस्थान की कला का महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया। छठे दशक तक कलाकार सुरेश शर्मा विभिन्न प्रचलित शैलियों, तकनीकों, सिद्धान्तों और मुहावरों से भली–भांति अवगत हो चुके थे किन्तु उनके जिज्ञासु और खोजी गैर परम्परावादी स्वभाव ने उन्हें यहीं तक सीमित नहीं रखा। और अपने मन्तव्यों की स्पष्ट अभिव्यक्ति हेतु उन्होंने निजी कला भाषा और तकनीक को इजाद किया तथा कला दूर दृष्टि के सात्विक सर्जक उभर कर भारतीय कला क्षैत्र में अपनी पहचान बनाई। तथा श्री शर्मा के चित्रों में प्रकृति का सौन्दर्य व विकसित परिप्रेक्ष्य अमूर्त विचारों के सम्पर्क में अधिक प्राणवान बना है।

♦ ♦ ♦ ♦ ♦

चित्र सूची

चित्र संख्या – 1 अन्टाइटिल्ड

चित्र संख्या – 2 अन्टाइटिल्ड

चित्र संख्या – 3 अन्टाइटिल्ड

चित्र संख्या – 4 कलाविद् सुरेश शर्मा का व्यक्तिचित्र

चित्र संख्या – 5 टेराकोटा शिल्प बनाते हुए

चित्र संख्या – 6 अन्टाइटिल्ड

चित्र संख्या – 7 सुरेश शर्मा का प्रौढ़ अवस्था का चित्र

चित्र संख्या – 8 रामपुरा स्थित मिडिल स्कूल जहाँ सुरेश शर्मा ने प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण की

चित्र संख्या – 9 हर्बर्ट कॉलेज, कोटा

चित्र संख्या – 10 अन्टाइटिल्ड

चित्र संख्या – 11 सुरेश शर्मा रत्न सदस्यता ग्रहण करते हुए

चित्र संख्या – 12 श्री शर्मा कार्यशाला में पेन्टिंग के गुर सिखाते हुए

चित्र संख्या – 13 अन्टाइटिल्ड

चित्र संख्या – 14 मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, श्री शर्मा की कर्मस्थली

चित्र संख्या – 15 श्री शर्मा बांए से प्रथम अपने अनुभव बांटते हुए

चित्र संख्या – 16 अन्टाइटिल्ड

चित्र संख्या – 17 अन्टाइटिल्ड

चित्र संख्या – 18 अन्टाइटिल्ड

चित्र संख्या – 19 अन्टाइटिल्ड

चित्र संख्या – 20 अन्टाइटिल्ड

चित्र संख्या – 21 अन्टाइटिल्ड

चित्र संख्या – 22 टेराकोटा शिल्प

चित्र संख्या – 23 टू फिगर मूर्ति शिल्प

चित्र संख्या – 24 श्री शर्मा लेण्डस्केप चित्र बनाते हुए

चित्र संख्या – 25 एनग्रेविंग ऑन एल्युमिनियम

चित्र संख्या – 26 एनग्रेविंग ऑन एल्युमिनियम

चित्र संख्या – 27 अन्टाइटिल्ड

चित्र संख्या – 28 अन्टाइटिल्ड

चित्र संख्या – 29 अन्टाइटिल्ड कागज पर स्याही चित्रण

चित्र संख्या – 30 अन्टाइटिल्ड

चित्र संख्या – 30 अन्टाइटिल्ड

सन्दर्भ ग्रन्थ (हिन्दी)

क्र.सं.	नाम	पुस्तक का नाम	सन्
1.	अग्रवाल, गिर्राज किशोर	शिल्प दर्शन	2006
		आधुनिक भारतीय चित्रकला	2001
		कला और कलम	2002
		आधुनिक चित्रकला	1975
2.	अशोक	कला निबन्ध–1971	
		कला सौन्दर्य एवं समीक्षाशास्त्र	1999
		पश्चिम की कला	2002
3.	अग्रवाल, वासुदेवशरण	भारतीय कला	1996
4.	डॉ. अर्चना	टैगोर का काव्यात्मक चित्रजगत	2009
5.	अग्रवाल, आर.ए.	भारतीय चित्रकला का विवेचन	1986
		किशनगढ़ चित्र शैली	2007
		भारतीय चित्रकला का विकास	1979
6.	अब्दुल्ला, एम.	सजावटी कला का इतिहास	1970
7.	ओझा, गो.ही.	राजपूताने का इतिहास	1978
8.	आर्य, विनोद कुमार	भारतीय चित्रकला का इतिहास	2002
9.	उपाध्याय, विद्यासागर	भारतीय चित्रकला की कहानी	1993
10.	कुमार स्वामी, आनन्द गगेन्द्रनाथ टैगोर	चित्रकला के अग्रदूत	1967
11.	कुमार, दिनेश	चित्रविधि उत्तर भारतीय	1981
12.	कोशे, स्कार्या अ.	भारत के नगर	1984
13.	कौल, मनोहर	ट्रेन्डस इन इन्डियन पेन्टिंग	
14.	गहलोत, जगदीश	भारत के राजवंशो का इतिहास	1980
15.	गर्ग, कमला	यशोधर चरित्त सचित्र पाण्डुलिपियाँ	1991
16.	गुप्त, रमेशचंद्र	कला इतिहास के आयाम	1991
17.	गुप्त जगदीश	प्रागैतिहासिक भारतीय चित्रकला	1969
18.	गुर्टू, शची रानी	कला के प्रणेता, धनराज भगत	1953
19.	गैरोला, वाचस्पति	भारतीय चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास	1985
20.	गोस्वामी, प्रेमचंद	राजस्थान–संस्कृति एवं साहित्य	2003
21.	घोष, अमलानन्द	जैन कला और स्थापत्य, खण्ड–3	1975

22.	चतुर्वेदी, ममता	रामगोपाल विजयवर्गीय एक शताब्दी की कला यात्रा	2005
23.	चून्द्रावत, लक्ष्मीचंद	राजस्थान की लोकगाथा	1966
24.	जोशी, शेखर चन्द्र	चित्रकला एवं लोककला के विविध आयाम	2009
25.	जौहरी सत्यदेव	अलंकार रीति और वक्रोक्ति	1973
26.	जौहरी, ऋतु	भारतीय कला समीक्षा	2013
27.	ठाकोर, ज्योती चन्द्रेश, वासुदेव बलवंतराय	कला दर्शन	2005
28.	ठाकुर अवनीन्द्रनाथ	भारत शिल्प के षढांग	1958
29.	तिवारी, आर.पी.	भारतीय चित्रकला और उसके मूल तत्व	1973
30.	दमामी, ए.एल.	राज. की आधुनिक कला एवं कलाविद्	
31.	दत्ता, स्निग्धा	रा.वि. साँखलकर	2010
32.	दास, रायकृष्ण	भारत की चित्रकला	1974
33.	द्विवेदी, प्रेमशंकर	गीतगोविन्द साहित्य एवं कलात्मक अनुशीलन	1988
34.	नाढ़लाल, झूथालाल	ढूंढार संस्कृति और परम्परा	1971
35.	नाथ, शैलेन्द्र	भारतीय चित्रकला पद्धति	1940
36.	नीरज, जयसिंह	राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा	1996
		राजस्थानी चित्रकला	2008
37.	पाण्डेय, संध्या	भारतीय पुनर्जागरण एवं चित्रकार	1997
38.	प्रताप, राम	कला विलास	1966
39.	बसु, नन्दलाल	रूपावली	1949
		शिल्प कला	1952
		भारतीय कला का सिंहावलोकन	1955
40.	भटनागर नैन	बंगाल की चित्रकला का अध्ययन	1976
41.	भटनागर, वी.एस.	सवाई जयसिंह	1947
42.	भार्गव सरोज	सौन्दर्य बोध एवं ललित कलाएँ	1995

43.	भानावात कहानी	साँझी कला	2007
44.	भारद्वाज, विनोद कुमार	समकालीन कला, एक अंतरंग अध्ययन	1982
45.	भारती, मीनाक्षी	ललित कला के आधारभूत स्तम्भ	2008
46.	भाऊ समर्थ	चित्रकला और समाज	1988
47.	मनोहर लाल	प्राइमर ऑफ आर्ट, कला एवं अध्ययन	1955
48.	मालवीय, बद्रीनाथ	श्री विष्णु धर्मोतर में चित्रकला	1960
49.	माथुर, अर्पिता	भारत की तस्वीर	1997
50.	मावड़ी, एम.एस.	भारत की प्रमुख चित्र शैलियाँ	1989
51.	माथुर, बेला और जयसिंह नीरज	अलवर की चित्रांकन परम्परा	
52.	मुकर्जी राधाकमल	भारतीय चित्रकला पद्धति	1940
53.	मेहता लज्जाराम	पराक्रमी हाड़ाराव	1915
54.	मेहता नानामल चिमनलाल	भारतीय चित्रकला	1933
55.	र.वि. साँखलकर	आधुनिक चित्रकला का इतिहास	1984,
		कला के अन्तः दर्शन	2004
56.	रामबली	ललित विस्तर एक समीक्षात्मक अध्ययन	1995
57.	राघव, रांगेय	प्राचीन भारतीय परम्परा और इतिहास	
58.	राम कुमार	रंग पात्रा	1978
59.	रामनाथ	मध्यकालीन भारतीय कलाएँ एवं उनका क्रमिक विकास	1973
60.	रामनिवास	राजस्थानी मॉडणा	1969
61.	रीता प्रताप	भारतीय चित्रकला व मूर्तिकला का इतिहास	2004
62.	वशिष्ठ, आर.के.	मेवाड़ की चित्रण परम्परा	1984
63.	वैद्य, किशोरी लाल	पहाड़ी चित्रकला	1969
64.	वर्मा, अविनाश बहादुर	भारतीय चित्रकला का इतिहास	1980
65.	शर्मा, गोपीनाथ	राजस्थान का इतिहास	1995

66.	शर्मा सुरेन्द्र	राजस्थानी रागमाला चित्र परम्परा	1990
67.	शर्मा, लोकेशचन्द्र	भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास	1970
68.	शर्मा, नीरज	राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा	1989
69.	शर्मा, हरद्धारीलाल	कला दर्शन	1988
70.	शर्मा नुपुर, प्रकाश विरेश्वर	कला दर्शन	2005
71.	शुक्ल रामचंद्र	आधुनिक चित्रकला	
		कला और आधुनिक प्रवृत्तियाँ	1963
		कला का दर्शन	1964
		चित्रकला का रसास्वादन	
72.	सहल, कन्हैयालाल	राजस्थान की कला	1960
73.	सरन, सुधा	कला सिद्धान्त और परम्परा	1987
74.	सिंह, शिवकरण	कला सृजन प्रक्रिया	1951
75.	सिंह, रघुवीर	पूर्वी आधुनिक राजस्थान	1990
76.	सोनी, महेशचन्द्र	युगयुगीन भारतीय कला	1995
77.	सिंह, पृथ्वी	हमारा राजस्थान	1950
78.	सिंह सुखवीर	राजस्थान का संक्षिप्त इतिहास	1969

पत्र-पत्रिकाऐं

1.	अवन्तिका	काव्यालोचनांक, पटना
2.	अज्ञेय	कल्पना
3.	आकृति	ल.क.अ., जयपुर
4.	कला दीर्घा	लखनऊ
5.	कला प्रयोजन	उदयपुर
6.	कला निधि	काशी
7.	कला सरोवर	त्रैमासिक
8.	कला के तथ्य	पटना
9.	कला सरोवर	त्रैमासिक, वाराणसी
10.	कल्याण	गोरखपुर
11.	मार्ग	कलकत्ता
12.	रूपम	कलकत्ता
13.	राजस्थान भारती	बीकानेर, राजस्थान
14.	ललित कला	सीरिज ऑफ कन्टेम्परारी आर्ट मोनोग्राफ ल.क.अ. नई दिल्ली
15.	वार्षिकी	रा.ल.क.अ. जयपुर
16.	विजय बल्लभ	मुम्बई
17.	अग्रवाल, डी.सी.	भारतीय भित्ति चित्रकला की परम्परा, आकृति,पृष्ठ 13
18.	अग्रवाल, वासुदवे	राजस्थान की शोध-पत्रिका, खण्ड दो, अंक-एक, 1971
19.	कुमार, अहस्कर	जगदिशरोमणि का वैभव, नवभारत टाइम्स, 24 जून, 1984
20.	गुप्ता, मोहन लाल	राजस्थान के भित्ति चित्र, जोधपुर, 1967
21.	धमोरा, सवाई सिंह	कछवाहे तब और अब, राष्ट्रदूत पत्रिका-1984
22.	जैसवाल, राम	पर्वतीय ऑयल में कला (बसौली कलम), आकृति-24, जुलाई, 1971
23.	दरयानी, सुभद्रा	मध्यकालीन जयपुर की चित्रकला, मधु-भारती-24 अंक-1976 वर्ष

24.	नीरज, जयसिंह	राजस्थान चित्रकला वैभव, राष्ट्रदूत अंक–3, 1986
25.	पौद्दार, आनंदीलाल	पुष्पी ग्रंथ – अंक–2 वर्ष, 2
26.	फज़ल, अब्दुल	अकबरनामा, जिल्द तीन –1887
27.	भारती, मीनाक्षी	पुरातन से नूतनता की ओर, आकृति, मई, 1992
28.	मुनि, जिनविनय जी	राजस्थान हस्तलिखित ग्रंथ–सूची भाग–1, 1940
29.	रामावतार एवं चन्द्रा एच.	राजस्थान चित्रकला आकृति, अंक–8, 1966
30.	बसु, नन्दलाल	रूपावली, विश्व भारती ग्रन्थालय, 1949
31.	शर्मा, गोपीनाथ	चित्रकला और राजस्थानी शोध पत्रिका, खण्ड–11
32.	सत्य प्रकाश	राजस्थानी चित्रकला, नये खोजों के आधार पर, आकृति, 1967
33.	सहल, कन्हैया लाल	राजस्थान की कला और मधु भारती, वर्ष–1960
34.	होत चन्द्र	भित्ति चित्रों का संरक्षण, ए.सी. 25, 1 जनवरी–मार्च, 1974

Bibliography

1.	Archer, W.G.	India Painting Introduction and Notes	1960
2.	Ananad, M.R.	Modern Moverments of art in India L.K.A.	1962
3.	Ashraf, K.M.	Life and condition of the people of Hindustan.	
4.	Barr, A.H.	Masters of Modern art NY	1954
5.	Banrin	A. History of art	1958
6.	Bevlien Marjario Blliotl	Design Through Discovery.	
7	Bean, Jacob	17th Century Itailian Drawing in the Metropolitan	1979
8.	Bhattacharya, S.K.	The Story of Indian art Dehli	1966
9.	Bhavani Enakshi	Decorative Design and Craftmanship of India	1969
		Indian Folk & Tribal art	1974
10.	Brown Percy	Indian Painting under Mugal	1924
		The Heritage of India, Culcutta	1930
		Indian Painting	1947
11.	Brooks	History of Mewar	
12.	Butcher, S.H.	Aristotles theory of poetry and fine art	
13.	Cauldwel, Christopher	Illusion and Reality-1937	
14.	Chaghatal	History of Decorative art	1970
15.	Chaitanya, Krishana	History of Indian painting the mural tradition	1976
16.	Colnaghi	Painting from Mugal India	1979
17.	Coomaraswamy; Anand	Modern School of Indian Painting, Indian art and Industry, Bomby	1922

18.	Collingwood, R.G.	The Principles od art	1938
19.	Deneck, M.M.	Indian art	1967
20.	Dewey John	Art as Experience	1934
21.	Directory, Artist	Lalit Kala Akadmi, New Dehli	1981
22.	E. Fry	Cubism, London	1966
23.	Edwards, B.	Pattern and design with Dynamic Symmetry	1969
24.	Focillon, H.	The life of forms in art	1958
25.	Frederick, Hartt	A Art History of Painting	
26.	Garica, Pericot	Prehistoric & Primitive art	1969
27.	Ganguli, O.C.	Indian art and Heritage	1957
28.	Garrett	Visual Desig	1967
29.	Ghosh, A.	Ajanta Murals,	1967
30.	Ghose & Rey	Ajanta & Ellora	1968
31.	Glubok, Shrley	Art of India	1969
32.	Gombrich, E.H.	The story of art	1956
33.	Graves, Maitlend	Art of colour & Design	1951
34.	Grohmann, W.	Painters of the Bauhavs	1962
35.	Handa, O.C.	Pahvi Folk art	1975
		Family Crosts for symbolic design	1963
36.	Harriet & Vetta	Art in Every day life	1940
37.	Havell, E.B.	A Handbook of Indian art	1920
38.	Hornng	Hand bok of Design & Dives	1946
39.	Hospers	Introductory Readings in Aesthetics	1969
40.	J. Canaday	Mainstrems of Modern art	1959
41.	Jain, Ajmera & Jawahar Lal	Jaipur Album on all about, Jaipur	1935
42.	Jain, Jyolindra	Painting myths of creation	
43.	Jamila, Brij Bhushan	The world of Indian meniature	1979
44.	Janson, H.W.	History of art	1977

45.	Jasleen	Indian folk art & crafts	1970
46.	Kapoor, Geeta	Contemporary Indian Artist	1978
47.	Kandinsky, W.	Concerning the spiritual in art	1959
48.	Khandelwal, Karl	Wall painting from Amber	1974
49.	Kishori & Om Chand	Pahari Chitra Kala	1969
50.	Kiran & Fisher	Design Continuum	1966
51.	Kirby David	Dictonery of Contemmporary thought	1984
52.	Klee	The Philosophy of Modern art	1948
53.	Kramrisch; Stella	The art of India	1955
54.	Kumar Ram	Rajasthan Phad Painting	1977
55.	Lawis Bernard	Islam & Arab World	1976
56.	Malhason & Beny	Rajasthan	1984
57.	Mansfield Edgar	Modern Design in book binding	1966
58.	Maria, C.R.	Life ar Count in Rajasthan	1985
59.	Mcdonald, J.	Pablo Picasso	1993
60.	Mc Fee & Degge	Art Culture & Environment	1977
61.	Morris, I.H.	Geometrical Drawing for art	1950
62.	Mookerjee Ajit	Modern art in India	
63.	Mulkraj, Anand	Ajanta	1971
64.	Myers, B.S.	Expressionism	1963
65.	Nath, Birendra	Nalanda Murals	1985
66.	Nath, R.	Colour Decoration in Mughal Architecture	1990
67.	Neeraj, Jai Singh	Splendors of Rajasthani, Painting	1991
68.	Nesbitt, Alexander	The Handed Decorative File paper	1964
69.	O, Brien, James	Design of accident	1968
70.	Pal, Bhisham	Historic Rajasthan	1974
71.	P. George Bicktord	Indian art	1975

72.	Pande, Ram	Painting as a source of Rajasthan History	1985
73.	Passchal, Gregory	Harpan Civilieation	1982
74.	Pellegrini, A.O.	New Tendencies in art	1966
75.	Rai, Krishan das	Mughal Miniatures	1932
76.	Rawson, Philip	*Creative Designs	1987
		* Primitive Aerotic art	1973
		* Indian art	1961
77.	Ritchie, A.C.	Germen art of the 20 century	1969
78.	Saxena, Banarasi Prasad	A Comprehensive History of India Vol.10	
79.	Saxena, J.	Art of Rajasthan	1979
80.	Seupher, M.	Abstract Painting	1961
81.	Singh, Madan Jeet	Cave Painting of Ajanta	1965
82.	Singh, Ramjee	Jain Concept of Ommi Science	1974
83.	Sivramamurti & Bussagli	5000 yr of the art of India	1970
84.	Shukla, Y.K.	Wall Painting of Rajasthan	1980
85.	Sen, Geli	Painting from Akbarname	1984
86.	Swami, Bharabahu	Kalpasutram	1940
87.	Suman; Hanra	Miniature Painting	1990
88.	William, Hardy	Encyclopedia of Decorative style	1988
89.	Wilenski, R.H.	Modern French Painter	1954
90.	Worringer, W.	Abstraction and Empathy	1953

Journals

1.	Agarwal, R.C.	Foreign Influence on early Art of Rajasthan, Precession; 2 Jaipur	1960
2.	Anand, M.R.	The Techniqves of Presco Painting Marg, X-2 March	1957
3.	Barun, W. Narms	Some Early Rajasthan Painting	1948
4.	Chandra, P.	An Outline of early-Rajasthan Painting marg	March 1958
5.	Chauhan; K.	The Mural Tradition Marg Vol.34 N-2, Bombay	
6.	Das, A.K.	One some Jaipur Drawing of Ordinary, People, Akriti,	April 1989
7.	Dever Satish, Das Gupta Nath, S.N.	Manage to Jaipur Marg, Bombay	1977
8.	Hot, Chand	Conservation of wall. Painting of Amber Palace searcher	1972-73
9.	Goeat, Z.H.J.	Decoration Murals from Champaner Bombay Uni.-Xn-2	1980
10.	Handu, O.C.	Roopa Lekha; Vol. 43	1974
11.	Kang, K.	Album of wall. Paintin, Jaipur marg	1977
12.	Kaumudi	A Mughal Miniature with Rare Motif Roop Lekha	1951
13.	Param Sivan	S. Indian wall Painting, Modern	1940-41
14.	Parman, B.M.S.	Murals of South East Rajasthan Sodath	1985
15.	Sanerji Advis	A. Ragini set from Amber Ropp Lekha, 51, New Dehli	
16.	Satya Prakash -	Amber Ancient Capital of Jaipur	1948

17. Evening Times of India-1976
18. Indian Opinion
19. Indian Express-1980
20. Mid-day-1986
21. National Herald-1968
22. Roop Lekha-1961
23. Shrinkhala-Kanpur
24. The Hindustan Times
25. The Hindu-1980
26. The States man-1977

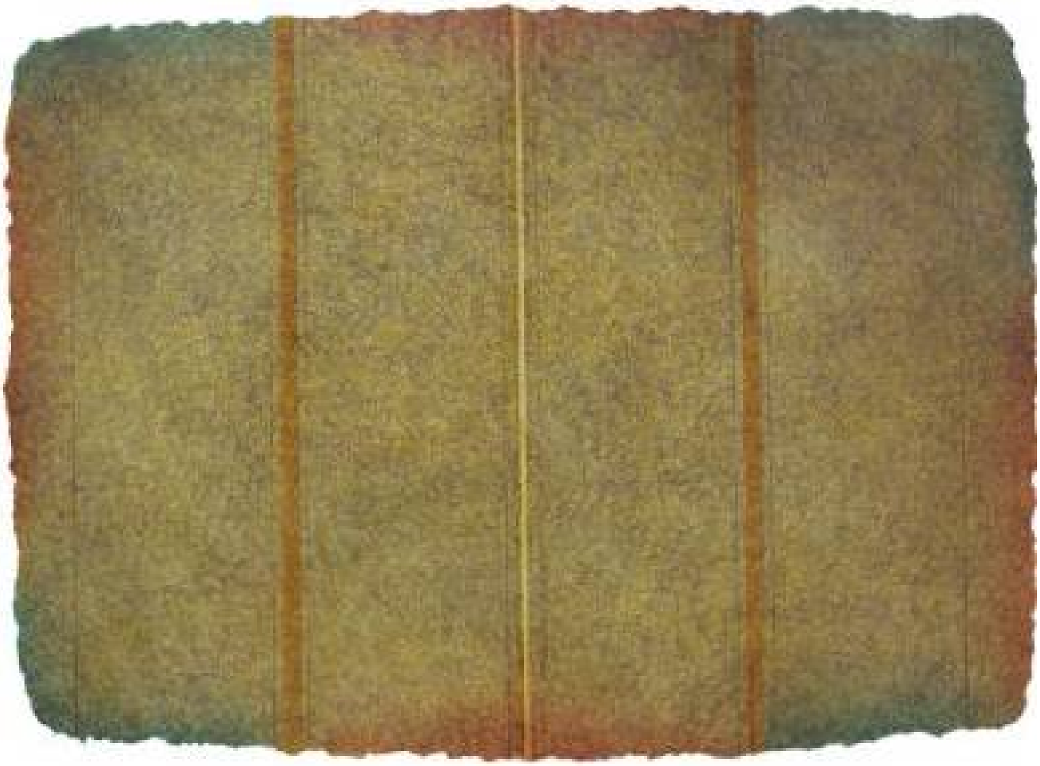

चित्र 1 अन्टाइटिल्ड

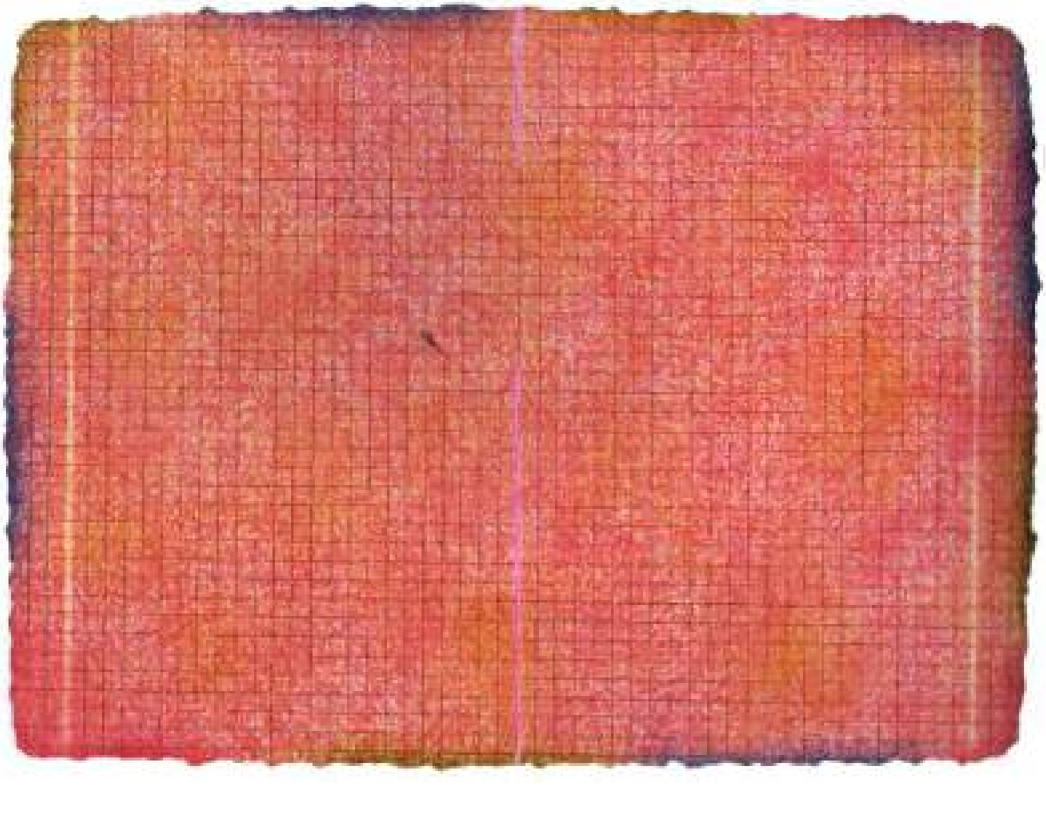

चित्र 2 अन्टाइटिल्ड

चित्र 3 अन्टाइटिल्ड

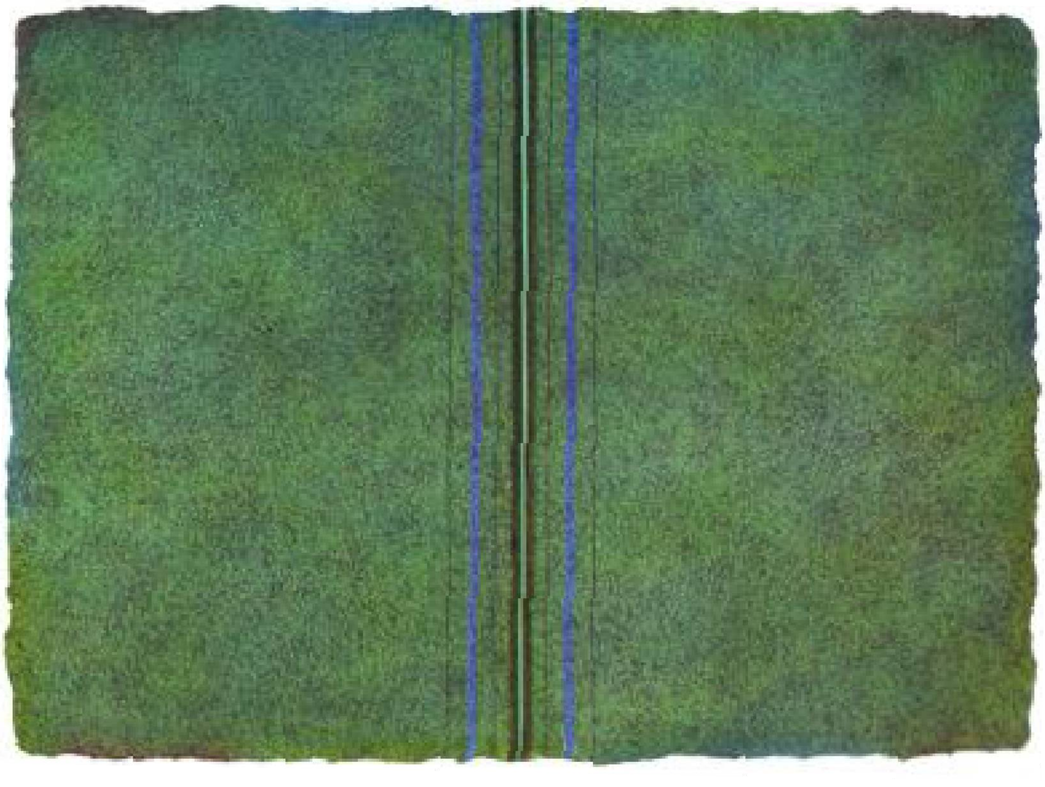

चित्र 4 अन्टाइटिल्ड

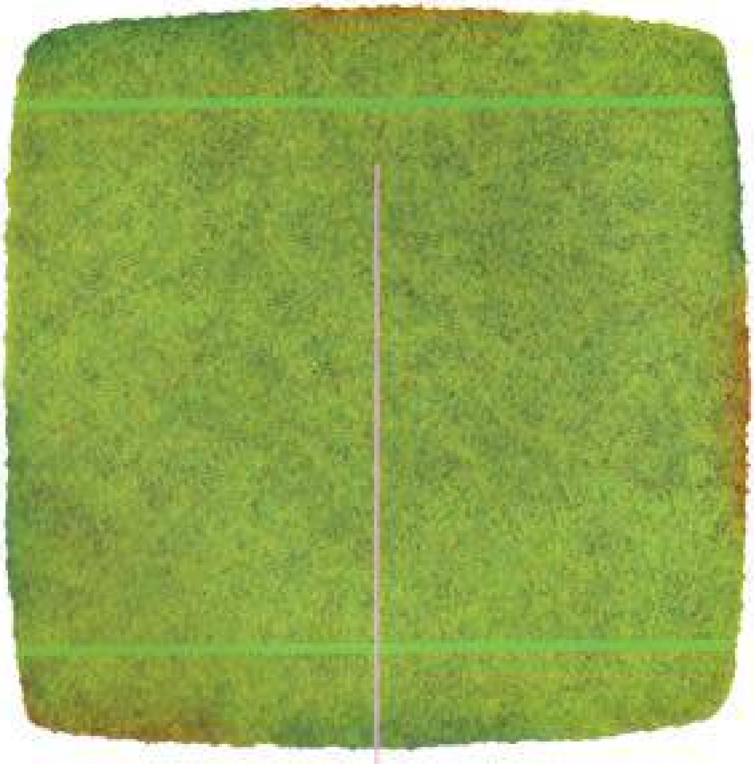

चित्र 5 अन्टाइटिल्ड

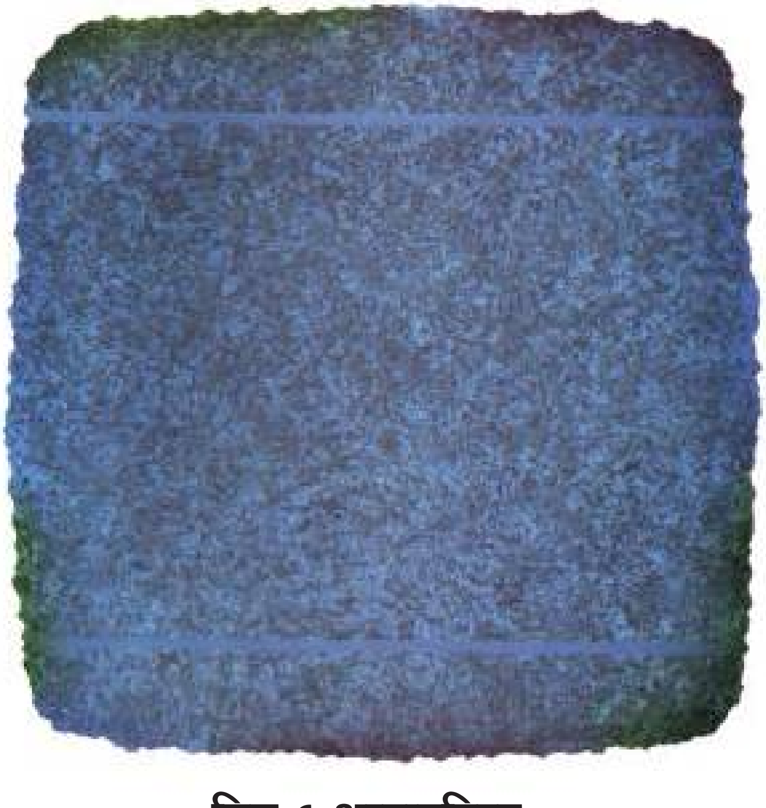

चित्र 6 अन्टाइटिल्ड

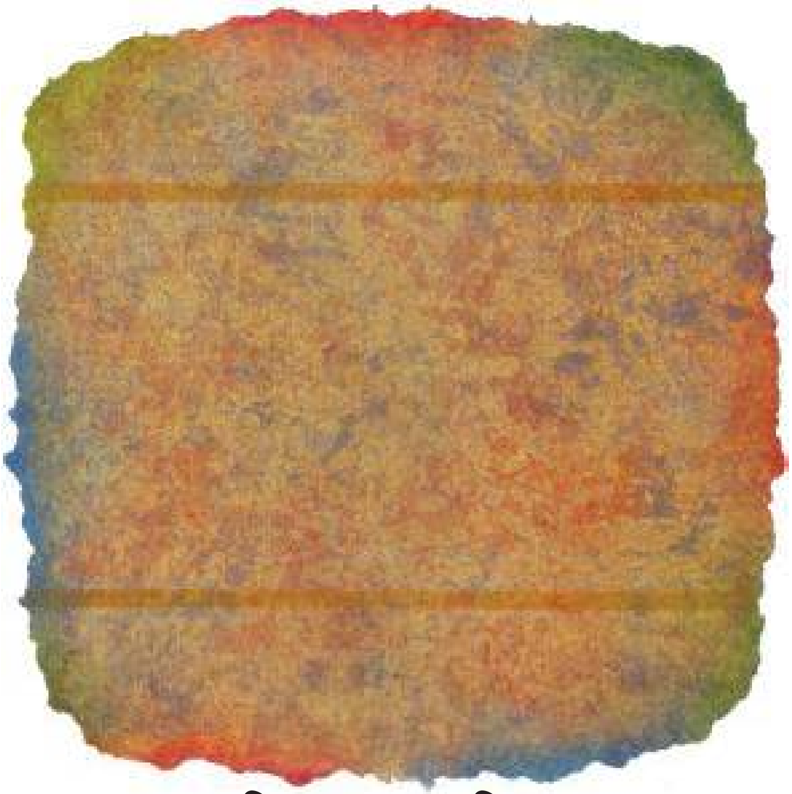

चित्र 7 अन्टाइटिल्ड

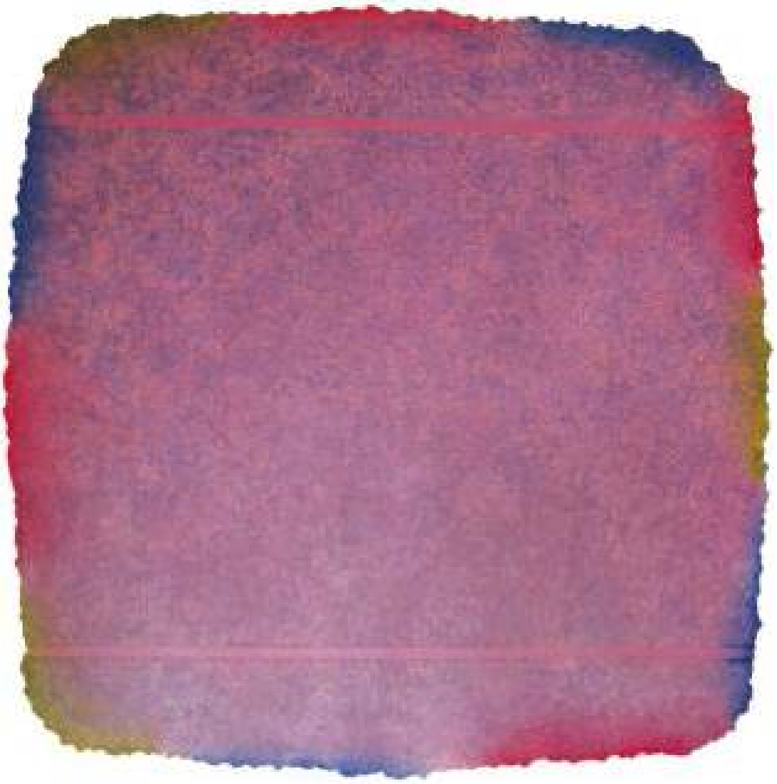

चित्र 8 अन्टाइटिल्ड

चित्र 9 अन्टाइटिल्ड

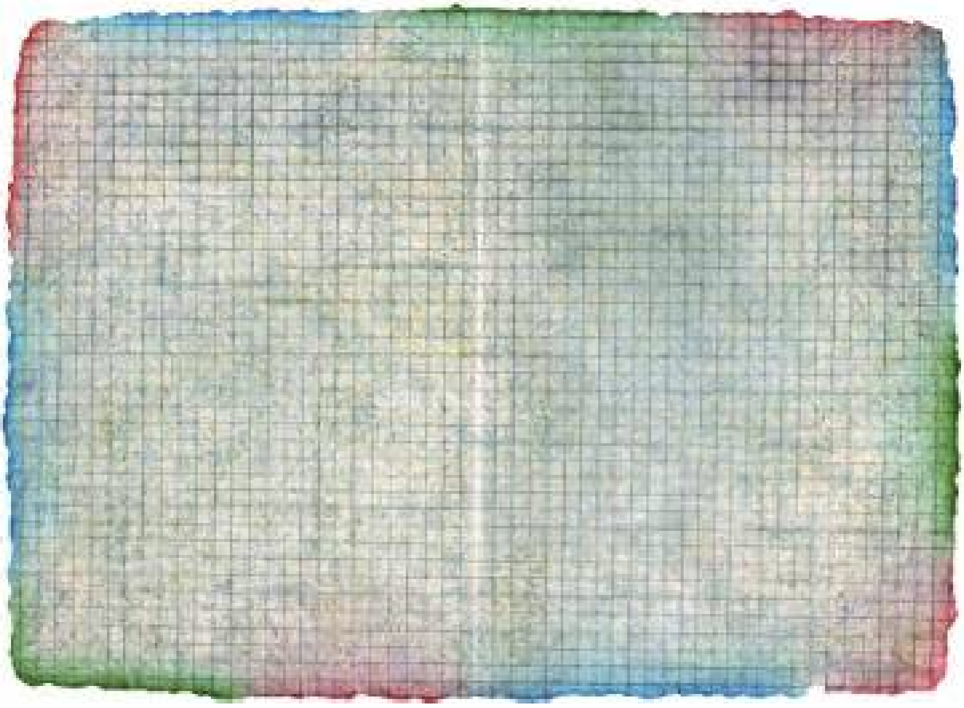

चित्र 10 अन्टाइटिल्ड

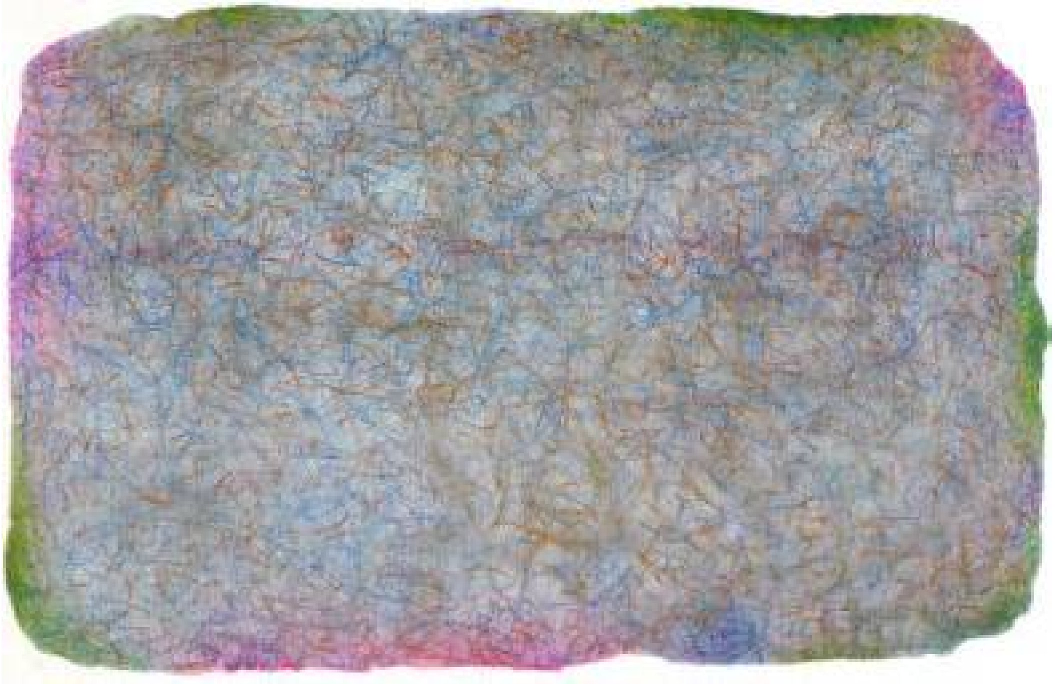

चित्र 11 अन्टाइटिल्ड

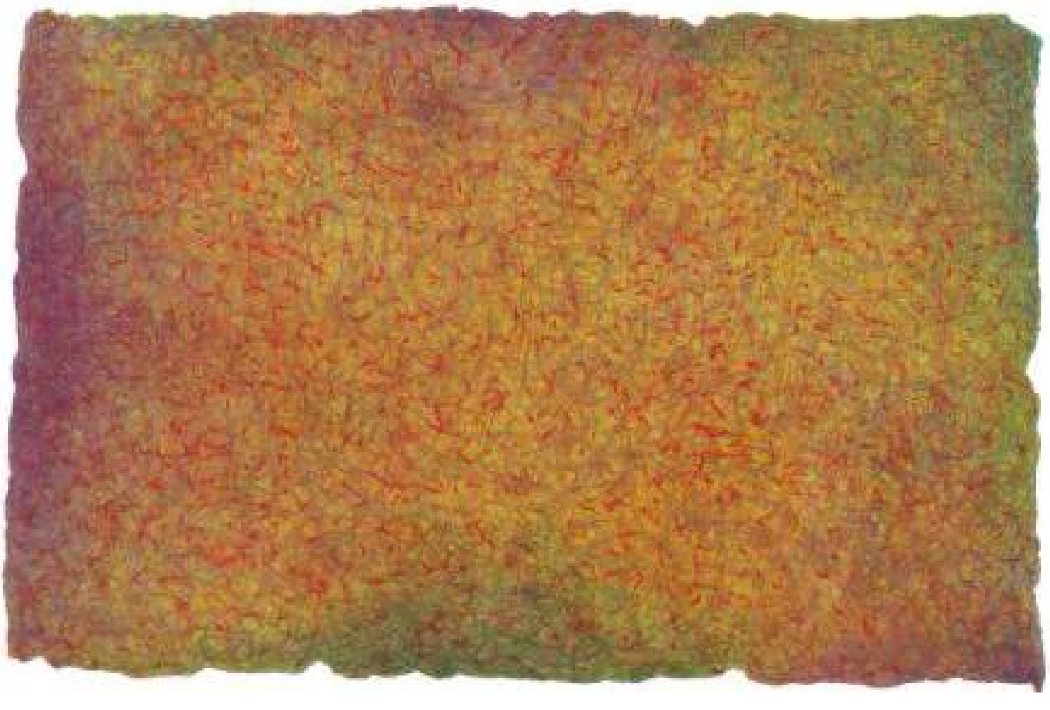

चित्र 12 अन्टाइटिल्ड

चित्र 13 अन्टाइटिल्ड

चित्र 14 अन्टाइटिल्ड

चित्र 15 अन्टाइटिल्ड

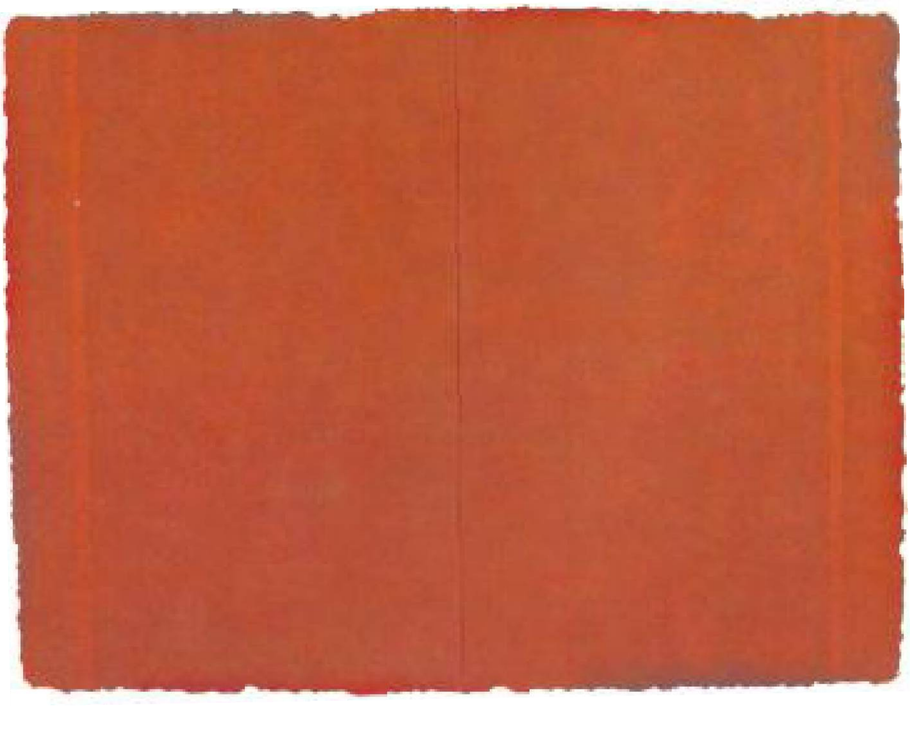

चित्र 16 अन्टाइटिल्ड

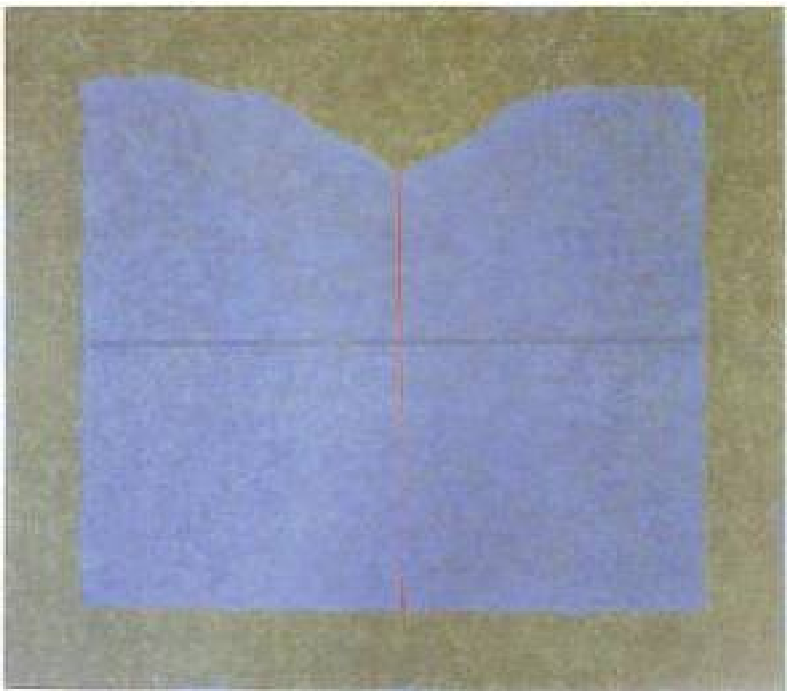

चित्र 17 अन्टाइटिल्ड

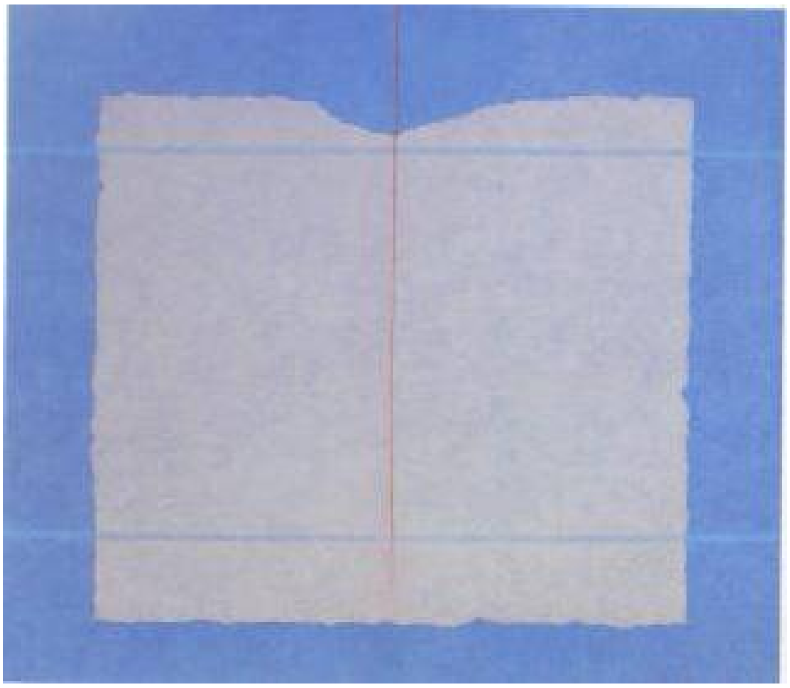

चित्र 18 अन्टाइटिल्ड

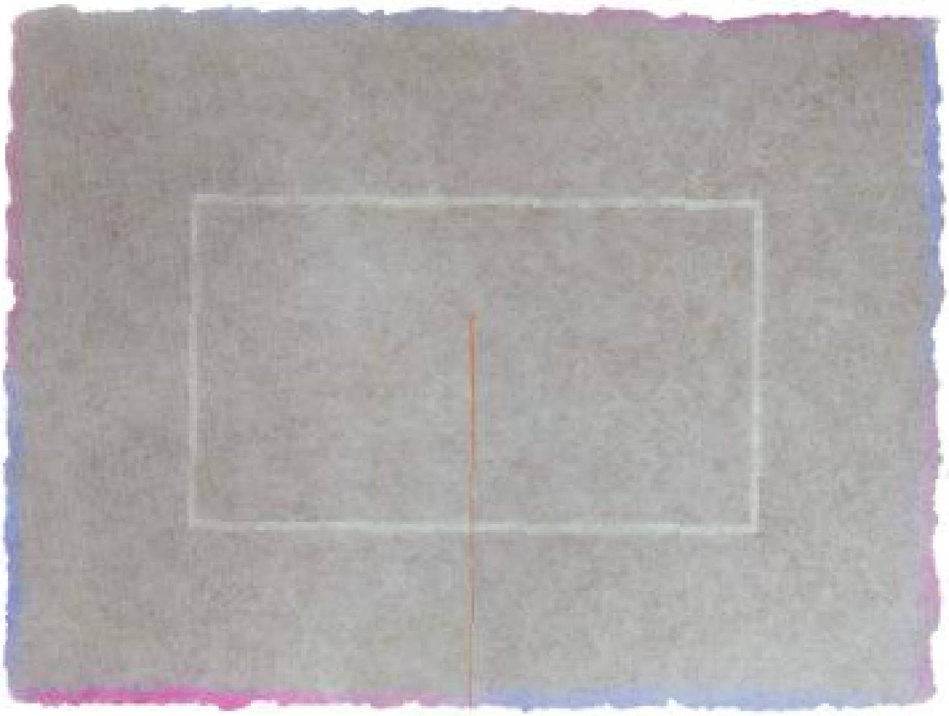

चित्र 19 अन्टाइटिल्ड

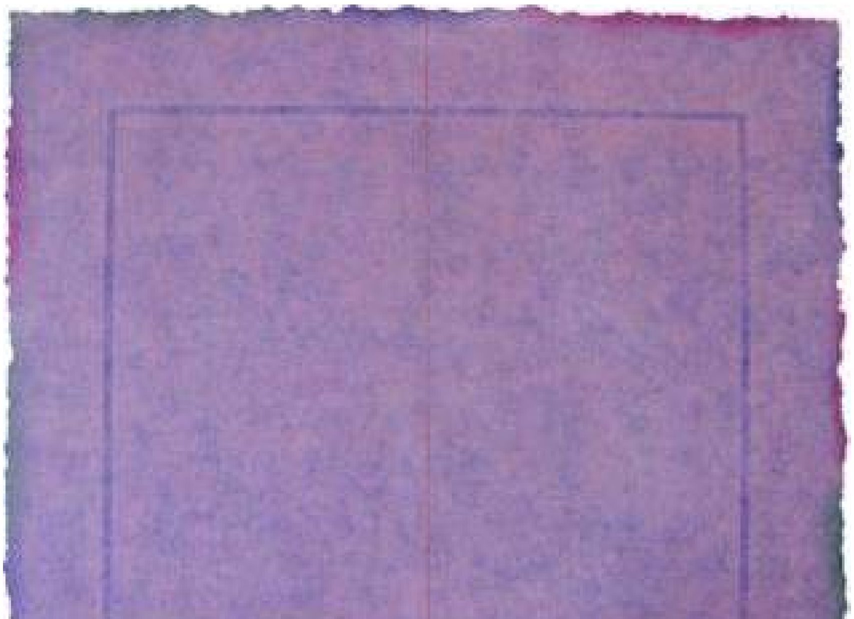

चित्र 20 अन्टाइटिल्ड

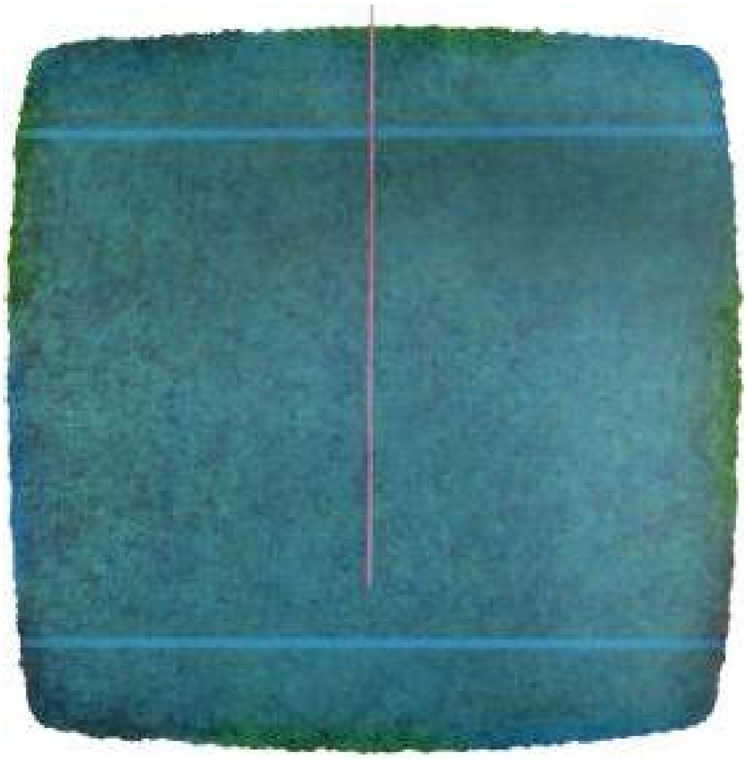

चित्र 21 अन्टाइटिल्ड

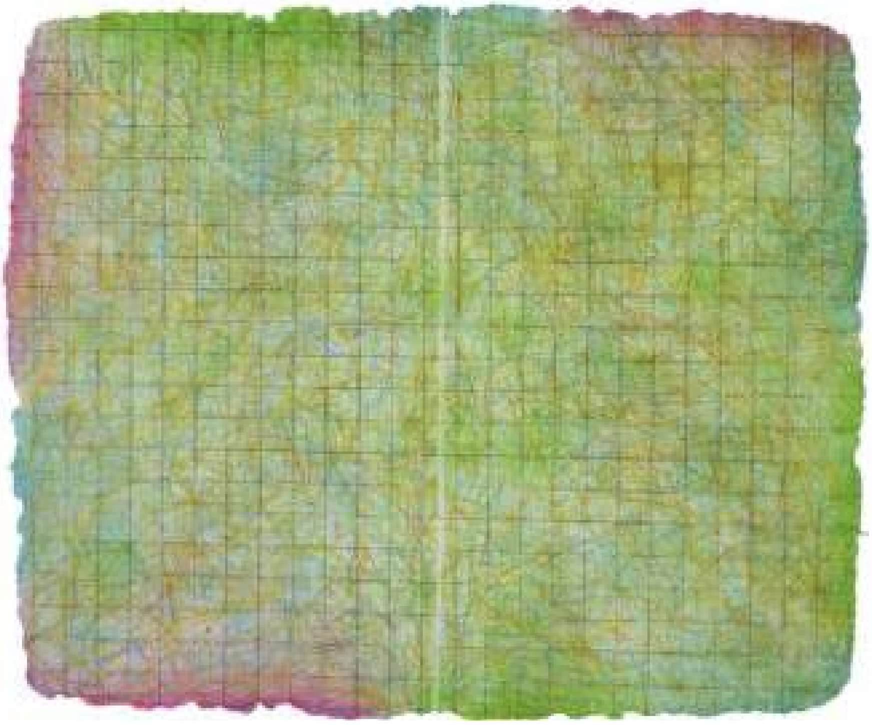

चित्र 22 अन्टाइटिल्ड

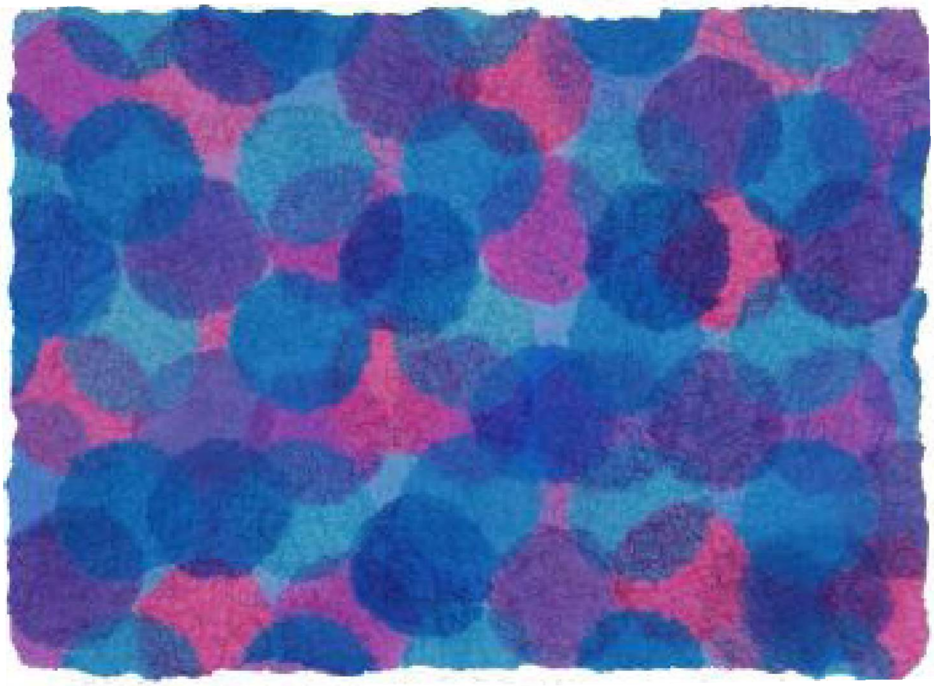

चित्र 23 अन्टाइटिल्ड

चित्र 24 अन्टाइटिल्ड

चित्र 25 अन्टाइटिल्ड

चित्र 26 अन्टाइटिल्ड

चित्र 27 अन्टाइटिल्ड

चित्र 28 अन्टाइटिल्ड

चित्र 29 अन्टाइटिल्ड

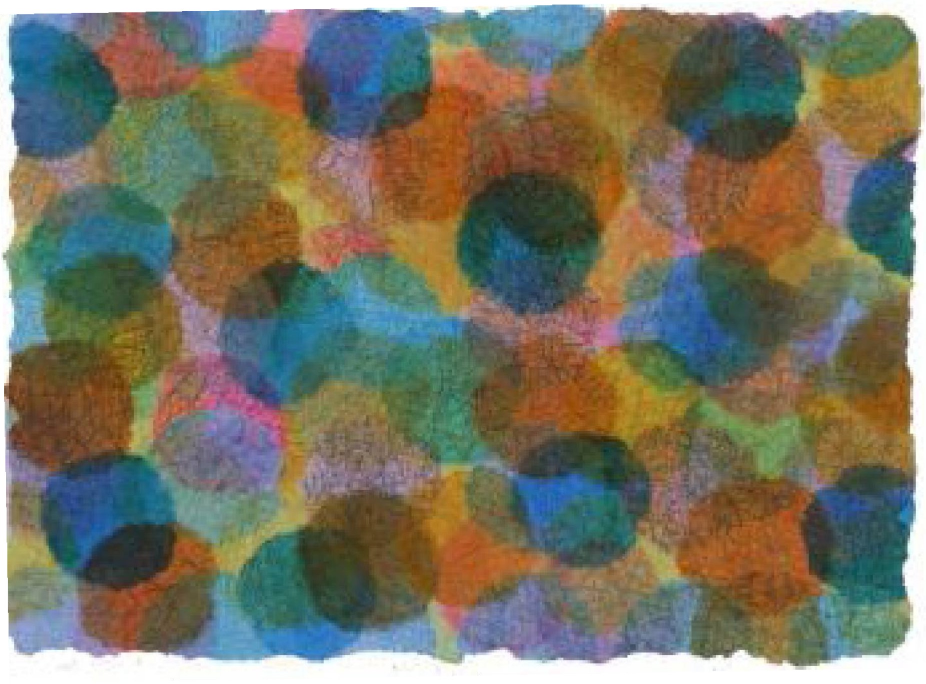

चित्र 30 अन्टाइटिल्ड

चित्र 31 अन्टाइटिल्ड

चित्र 32 अन्टाइटिल्ड

चित्र 33 अन्टाइटिल्ड

चित्र 34 अन्टाइटिल्ड

चित्र 35 अन्टाइटिल्ड

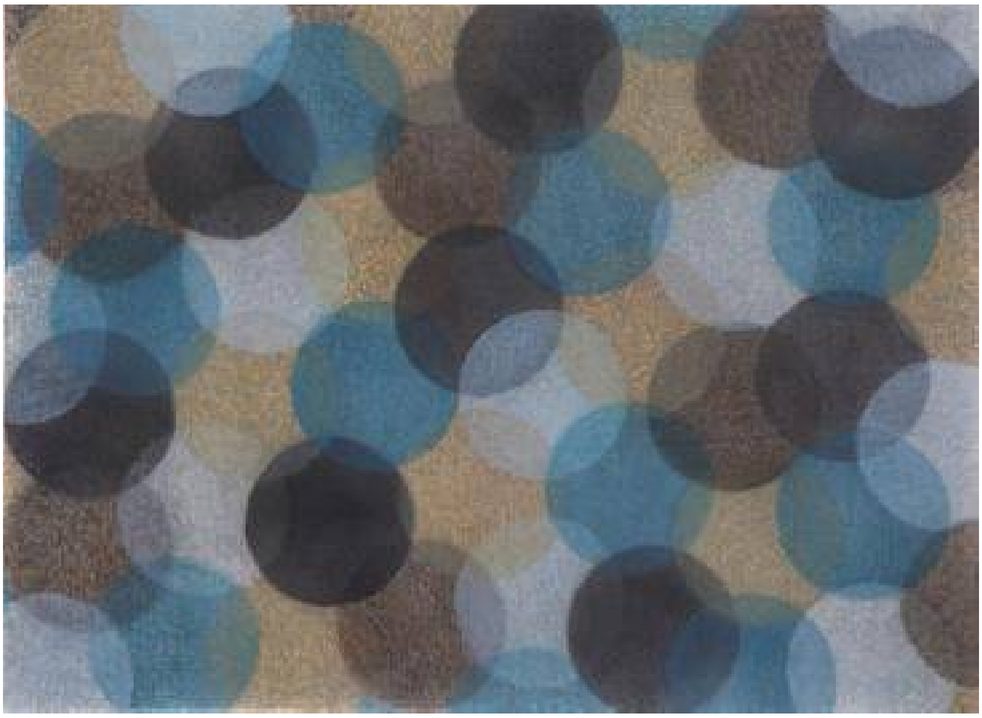

चित्र 36 अन्टाइटिल्ड

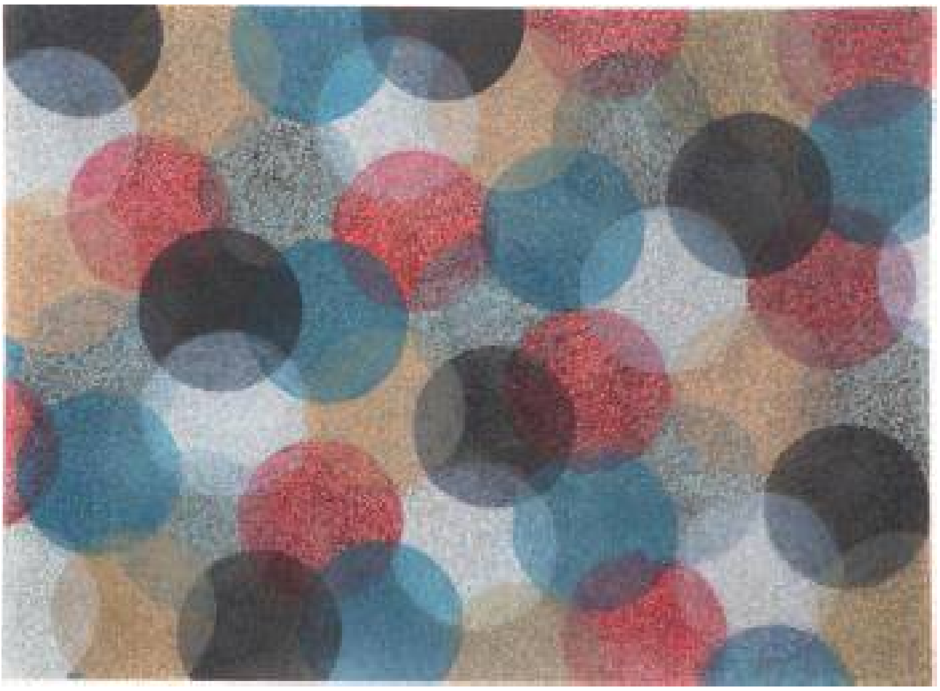

चित्र 37 अन्टाइटिल्ड

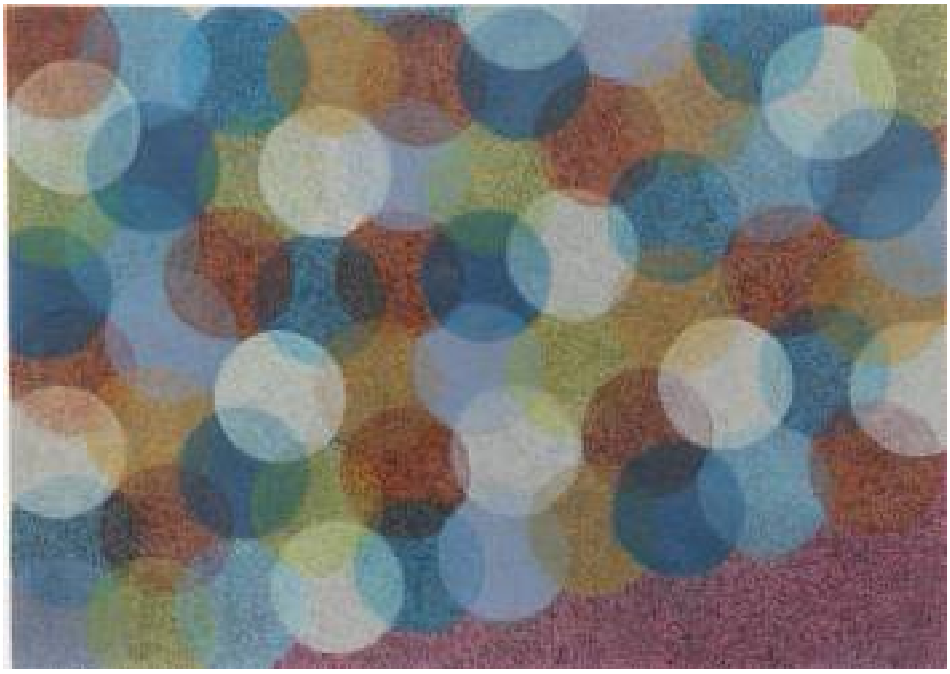

चित्र 38 अन्टाइटिल्ड

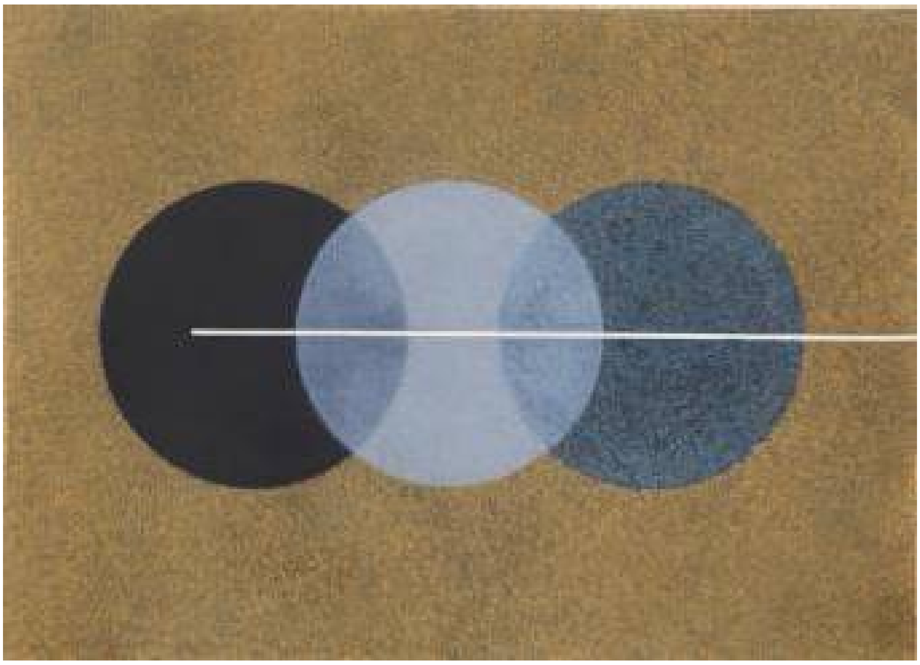

चित्र 39 अन्टाइटिल्ड

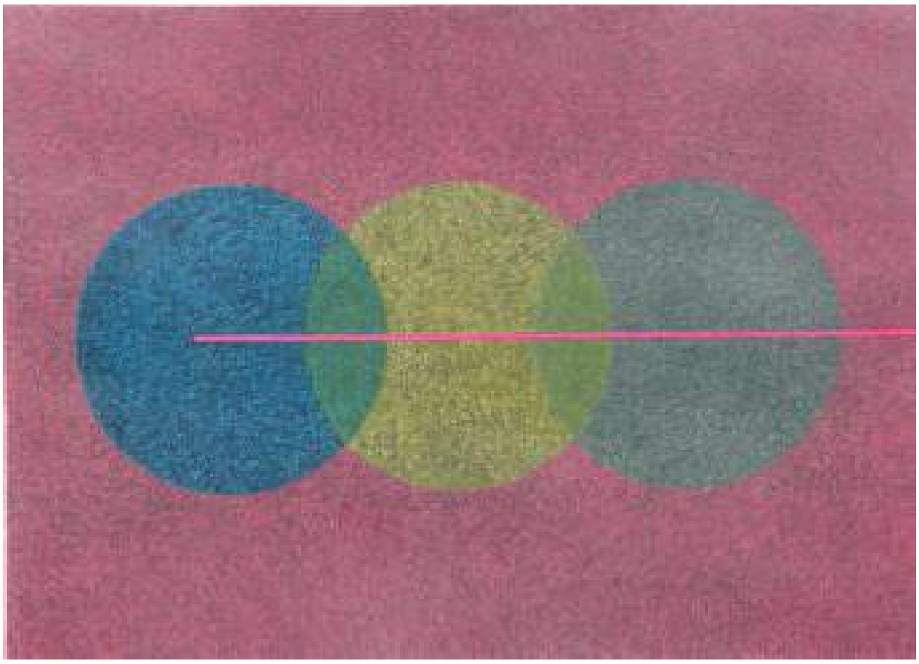

चित्र 40 अन्टाइटिल्ड

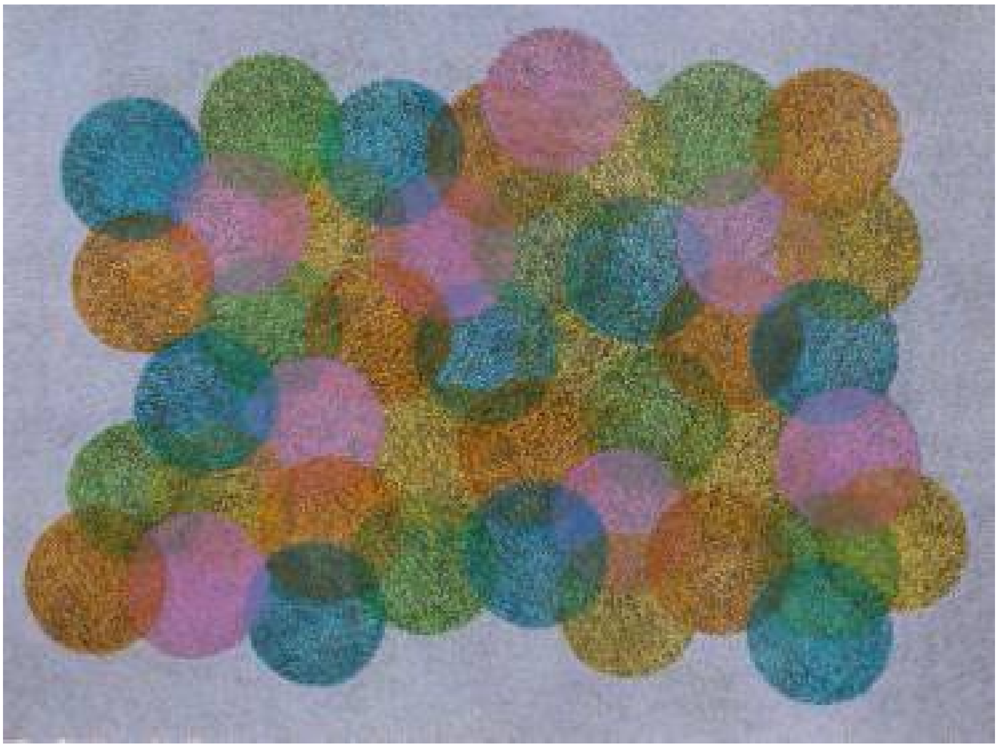

चित्र 41 अन्टाइटिल्ड

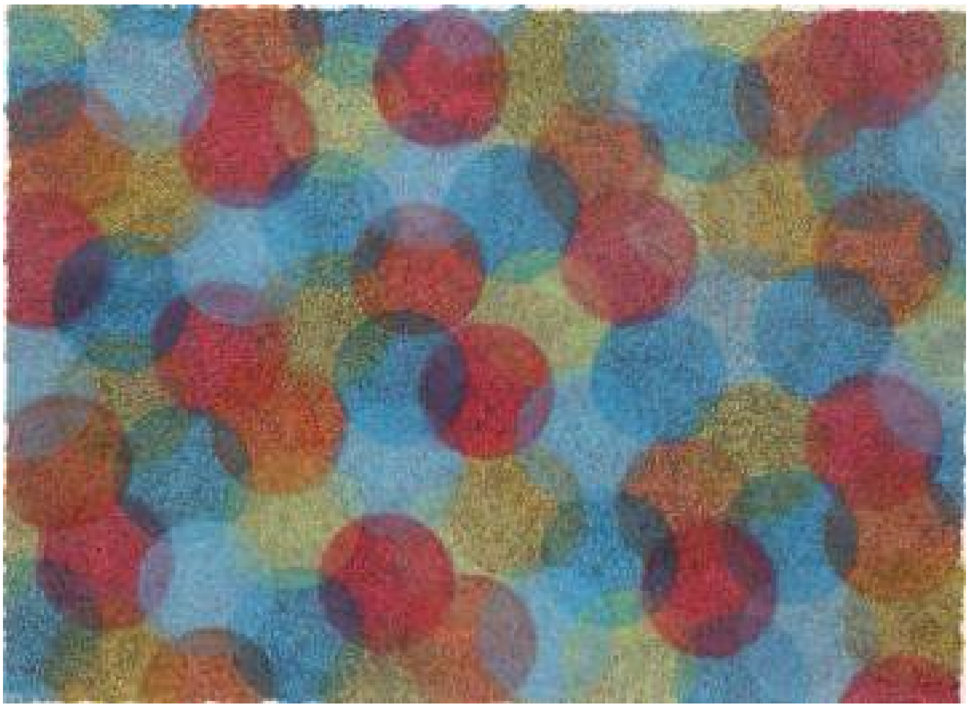

चित्र 42 अन्टाइटिल्ड

चित्र 43 अन्टाइटिल्ड

चित्र 44 अन्टाइटिल्ड

चित्र 45 अन्टाइटिल्ड

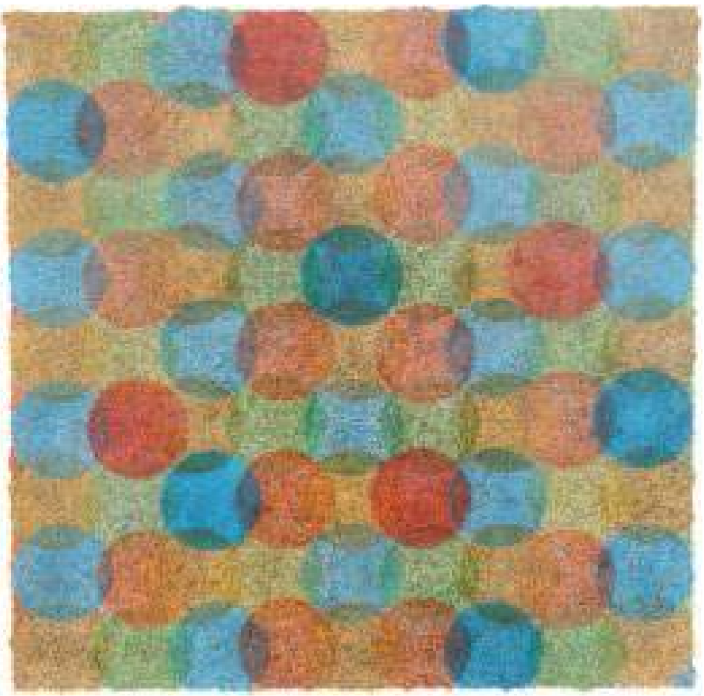

चित्र 46 अन्टाइटिल्ड

चित्र 47 अन्टाइटिल्ड

चित्र 48 अन्टाइटिल्ड

चित्र 49 अन्टाइटिल्ड

चित्र 50 अन्टाइटिल्ड

चित्र 51 अन्टाइटिल्ड

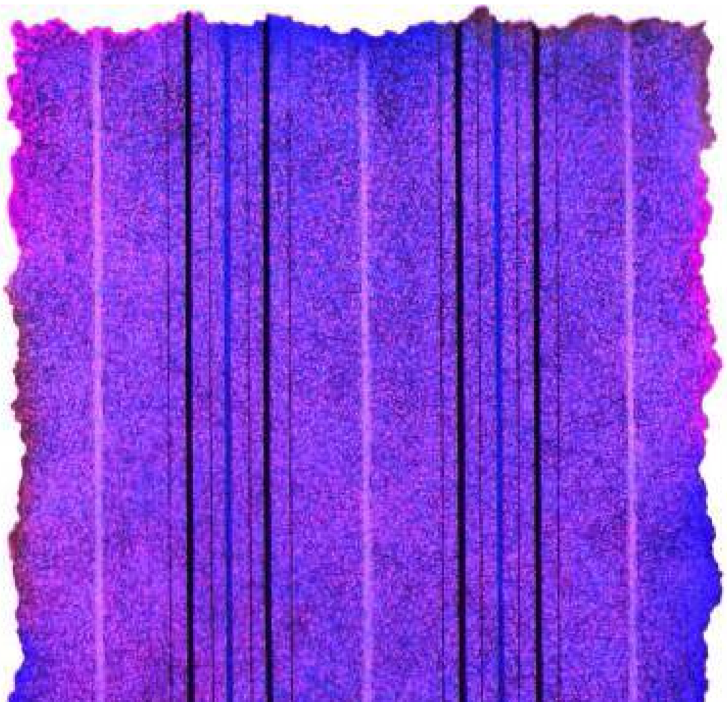

चित्र 52 अन्टाइटिल्ड

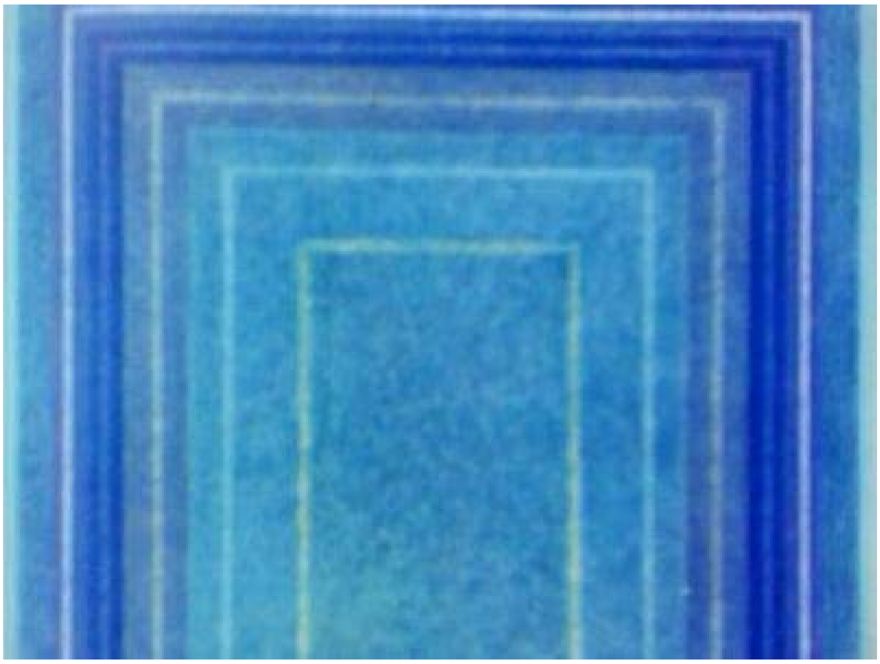

चित्र 53 अन्टाइटिल्ड

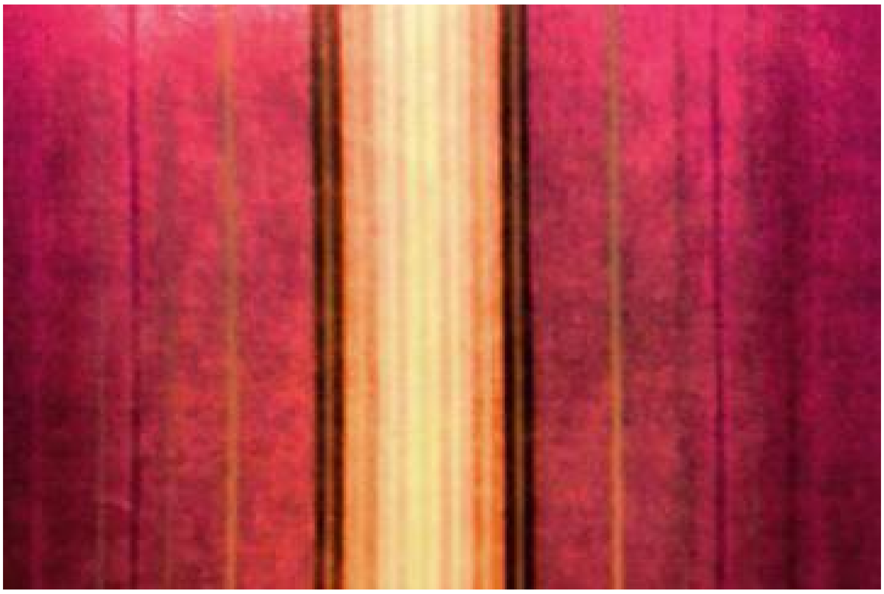

चित्र 54 अन्टाइटिल्ड

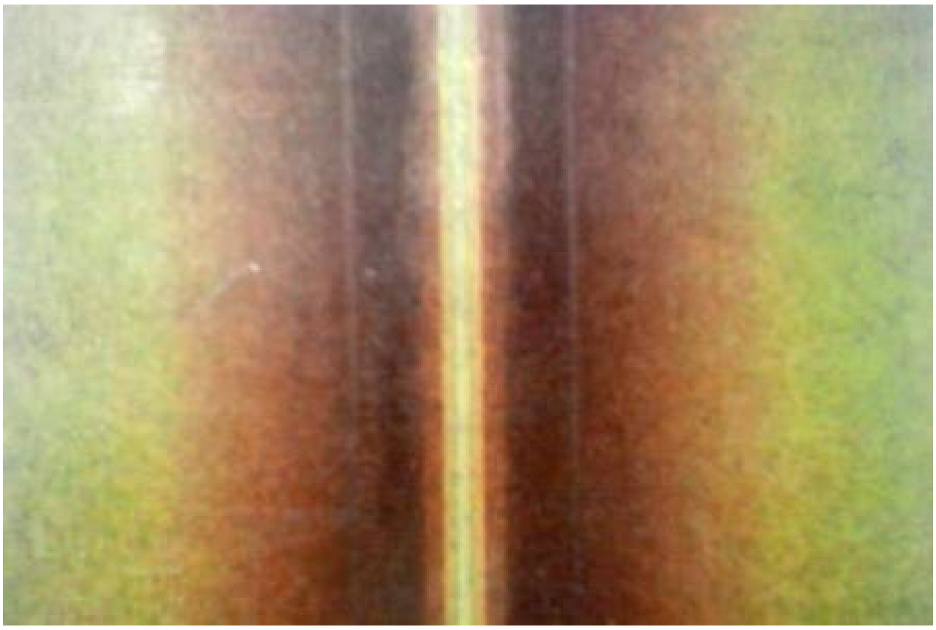

चित्र 55 अन्टाइटिल्ड

चित्र 56 अन्टाइटिल्ड

चित्र 57 प्रकृति चित्रण

चित्र 58 प्रकृति चित्रण

चित्र 59 प्रकृति चित्रण

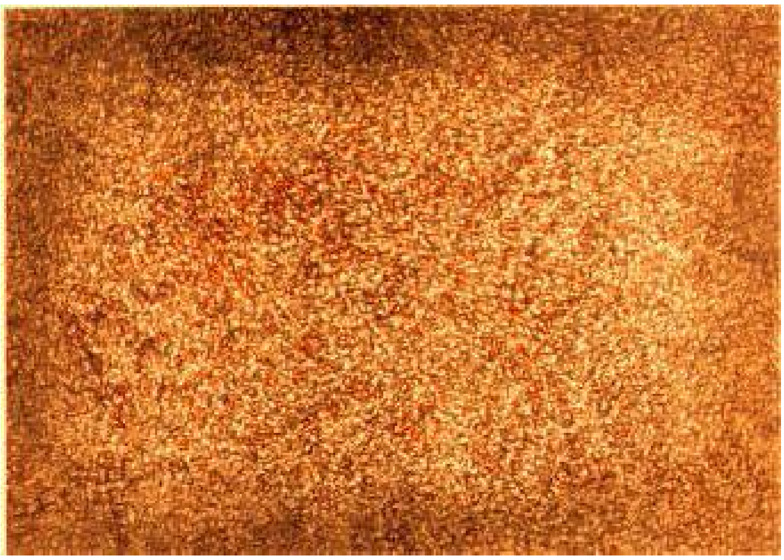

चित्र 60 अन्टाइटिल्ड

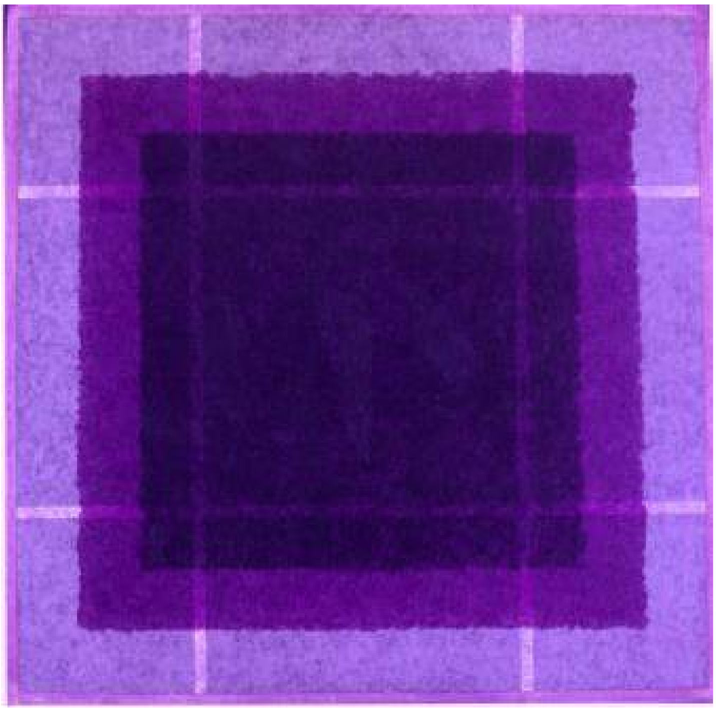

चित्र 61 अन्टाइटिल्ड

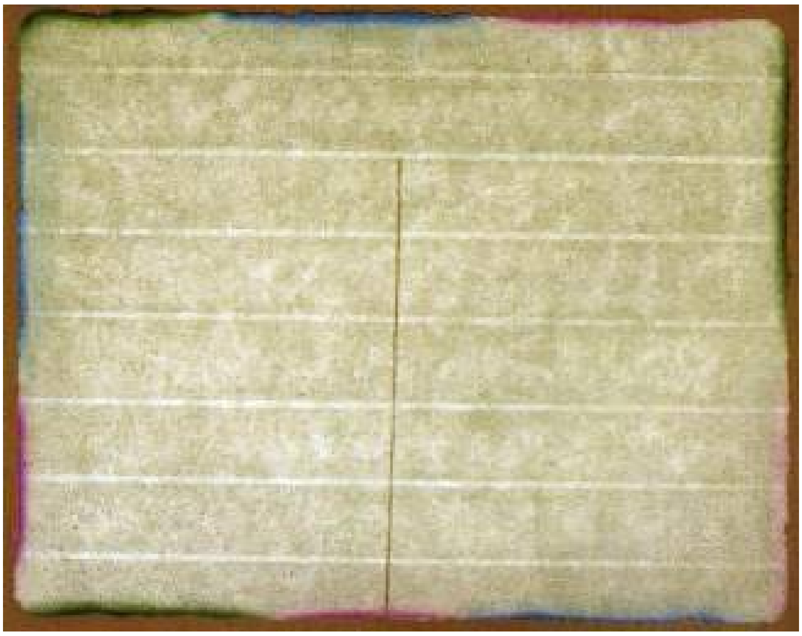

चित्र 62 अन्टाइटिल्ड

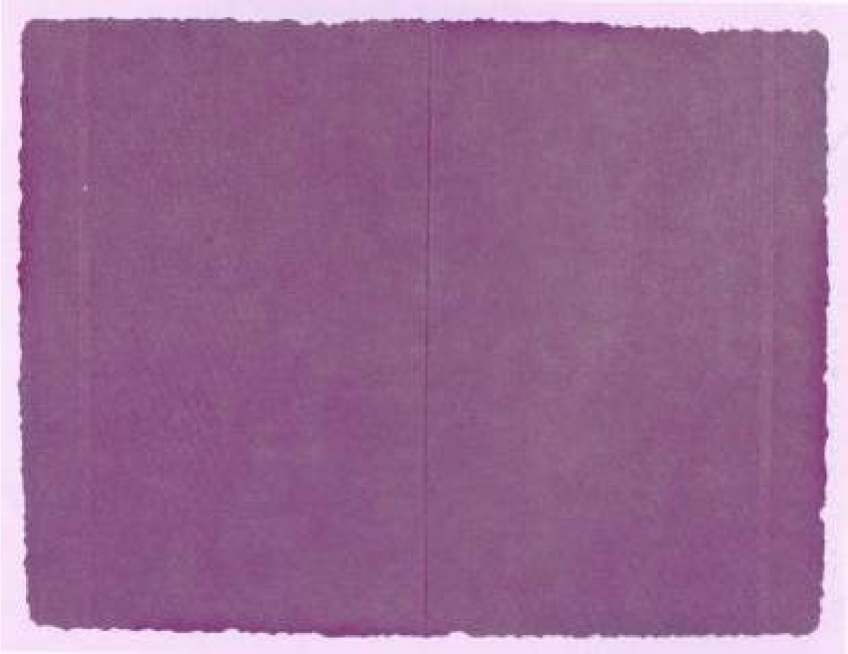

चित्र 63 अन्टाइटिल्ड

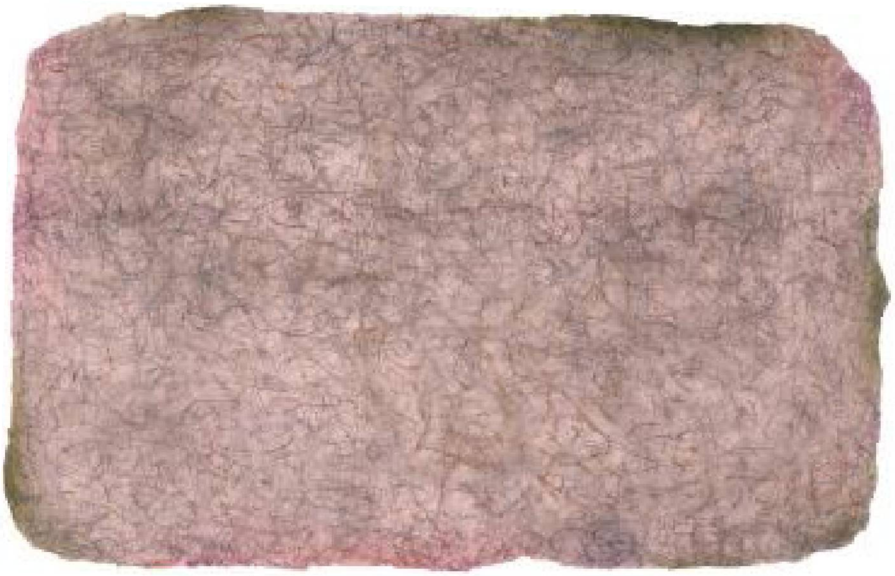

चित्र 64 अन्टाइटिल्ड

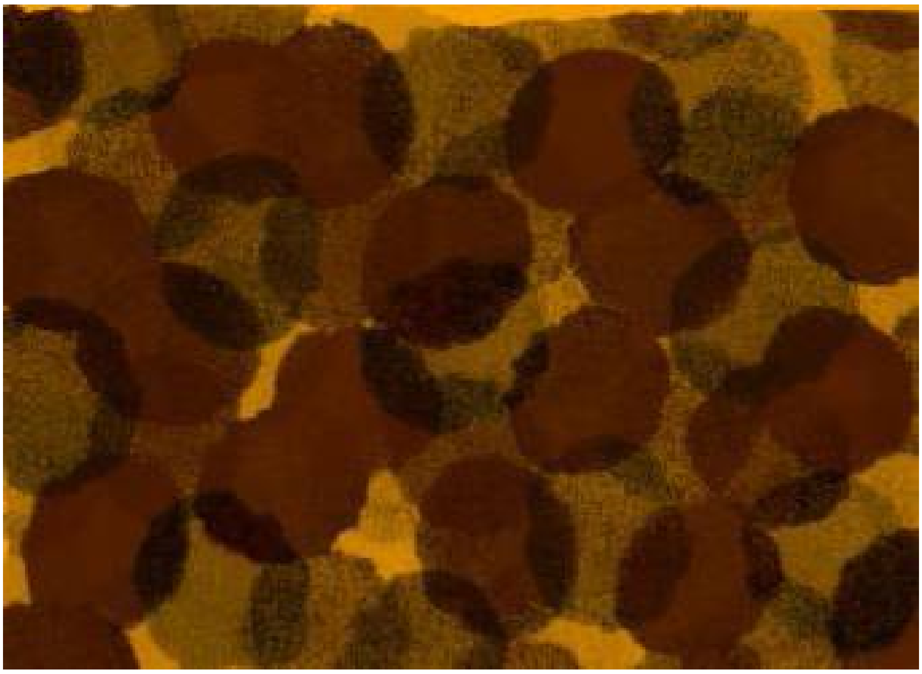

चित्र 65 अन्टाइटिल्ड

चित्र 66 प्रकृति चित्रण

चित्र 67 प्रकृति चित्रण

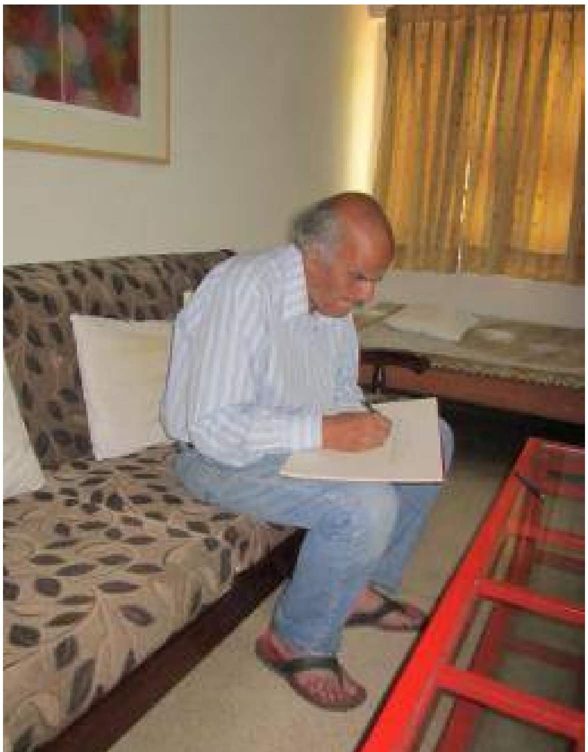

चित्र 68 चित्रकार सुरेश शर्मा स्केच बनाते हुए।

चित्र 69 अन्टाइटिल्ड

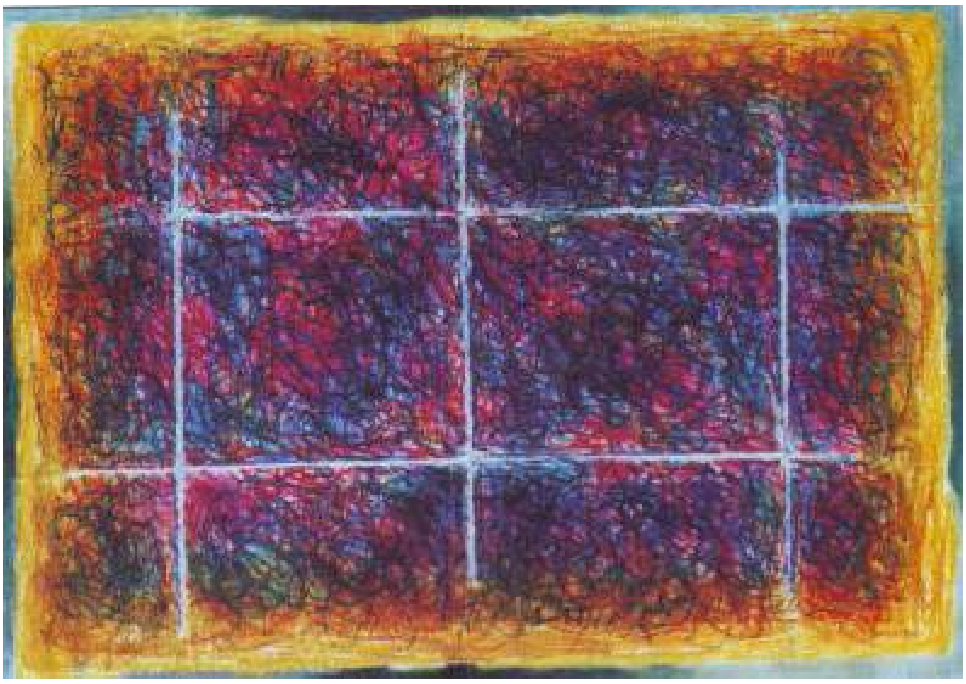

चित्र 70 अन्टाइटिल्ड